2003

शक्तिपीठ-दर्शन

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

निवेदन

पिछले वर्षोंमें शक्ति-अंक, शक्ति-उपासना-अंक तथा महाभागवत-शक्तिपीठाङ्क गीताप्रेसद्वारा कल्याणके विशेषाङ्कके रूपमें प्रकाशित हुए थे, जिनमें शक्तिपीठोंके सम्बन्धमें विस्तृत वर्णन दिया गया है। पाठकोंकी ये भावना थी कि शक्तिपीठोंके सम्बन्धमें एक विशेष पुस्तक प्रकाशित की जाय। इसी दृष्टिसे 'शक्तिपीठ-दर्शन' पुस्तक प्रस्तुत है।

वास्तवमें महाशक्ति ही परब्रह्म परमात्मा हैं, जो विभिन्न रूपोंमें लीलाएँ करती हैं, इन्हींकी शक्तिसे ब्रह्मा विश्वकी उत्पत्ति करते हैं, इन्हींकी शक्तिसे विष्णु सृष्टिका पालन करते हैं और शिव जगत्का संहार करते हैं। अर्थात् सृजन, पालन और संहार करनेवाली ये आद्या पराशक्ति ही हैं, ये ही पराशक्ति नवदुर्गा, दशमहाविद्या हैं। ये ही अन्नपूर्णा, जगद्धात्री, कात्यायनी एवं ललिताम्बा हैं। गायत्री, भुवनेश्वरी, काली, तारा, बगला, षोडशी, त्रिपुरा, धूमावती, मातंगी, कमला, पद्मावती, दुर्गा आदि इन्हींके रूप हैं। ये ही शक्तिमान् एवं ये ही शक्ति हैं, ये ही नर और नारी एवं माता, धाता तथा पितामह भी ये ही हैं।

'शक्तिपीठ-दर्शन' पुस्तकमें ५१ शक्तिपीठोंका वर्णन, उनकी वर्तमान स्थिति और उनसे सम्बन्धित कुछ विशेष लेखोंको प्रस्तुत किया गया है, जिनमें उनकी रोचक कथाएँ भी हैं। वैसे तो यह सम्पूर्ण संसार ही देवीमय है, सृष्टिके कण-कणमें उन्हीं आद्याशक्ति जगज्जननी, जगन्माताका निवास है, परंतु कुछ विशिष्ट स्थान, दिव्य क्षेत्र ऐसे भी हैं, जहाँ देवी चिन्मयरूपसे विराजती हैं और उनकी इसी सन्निधिके कारण वे स्थान भी चिन्मय हो गये हैं। शक्तिके इन्हीं स्थानोंको देवी-उपासनामें शक्तिपीठकी संज्ञा दी गयी है। इन स्थलोंपर पूजा, उपासना तथा साधनाका विशेष महत्त्व है।

आशा है पाठक इस पुस्तकसे लाभान्वित होंगे।

—राधेश्याम खेमका

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

शक्तिपीठोंके प्रादुर्भावकी कथा तथा उनका परिचय

भूतभावन भवानीपति भगवान् शंकर जिस प्रकार प्राणियोंके कल्याणार्थ विभिन्न तीर्थोंमें पाषाणलिङ्गरूपमें आविर्भूत हुए हैं, उसी प्रकार अनन्तकोटि ब्रह्माण्डात्मक प्रपञ्चकी अधिष्ठानभूता, सच्चिदानन्दरूपा, करुणामयी भगवती भी लीलापूर्वक विभिन्न तीर्थोंमें भक्तोंपर कृपा करने-हेतु पाषाणरूपसे शक्तिपीठोंके रूपमें विराजमान हैं। ये शक्तिपीठ साधकोंको सिद्धि और कल्याण प्रदान करनेवाले हैं। इनके प्रादुर्भावकी कथा पुण्यप्रद तथा अत्यन्त रोचक है—

पितामह ब्रह्माजीने मानवीय सृष्टिका विस्तार करनेके लिये अपने दक्षिणभागसे स्वायम्भुव मनु तथा वामभागसे शतरूपाको उत्पन्न किया। मनु-शतरूपासे दो पुत्रों और तीन कन्याओंकी उत्पत्ति हुई, जिनमें सबसे छोटी प्रसूतिका विवाह मनुने प्रजापति दक्षसे किया, जो लोकपितामह ब्रह्माजीके मानसपुत्र थे।

ब्रह्माजीकी प्रेरणासे प्रजापति दक्षने दिव्य सहस्त्र वर्षोंतक तपस्या करके आद्या शक्ति जगज्जननी जगदम्बिका भगवती शिवाको प्रसन्न किया और उनसे अपने यहाँ पुत्रीरूपमें जन्म लेनेका वरदान माँगा। भगवती शिवाने कहा—'प्रजापति दक्ष! पूर्वकालमें भगवान् सदाशिवने मुझसे पत्नीके रूपमें प्राप्त होनेकी प्रार्थना की थी; अतः मैं तुम्हारी पुत्रीके रूपमें अवतीर्ण होकर भगवान् शिवकी भार्या बनूँगी, परंतु इस महान् तपस्याका पुण्य क्षीण होनेपर जब आपके द्वारा मेरा और भगवान् सदाशिवका निरादर होगा तो मैं आपसहित सम्पूर्ण जगत्को विमोहित कर अपने धाम चली जाऊँगी।'

कुछ समय पश्चात् प्रकृतिस्वरूपिणी भगवती पूर्णाने दक्षपत्नी प्रसूतिके गर्भसे जन्म लिया। वे करोड़ों चन्द्रमाके समान प्रकाशमान आभावाली और अष्टभुजासे सुशोभित थीं। वे कन्यारूपसे बाललीला कर माता प्रसूति

और पिता दक्षके मनको आनन्दित करने तथा उनकी तपस्याके पुण्यका फल उन्हें प्रदान करने लगीं। दक्षने कन्याका नाम 'सती' रखा।

सती वर्षा-ऋतुकी मन्दाकिनीकी भाँति बढ़ने लगीं। शरत्कालीन चन्द्रज्योत्स्नाके समान उनका रूप देखकर दक्षके मनमें उनका विवाह करनेका विचार आया। शुभ समय देखकर उन्होंने स्वयंवरका आयोजन किया, जिसमें भगवान् सदाशिवके अतिरिक्त सभी देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व, ऋषि तथा मुनि उपस्थित थे। दक्ष मोहवश शिवके परमतत्त्वको न जानकर उन्हें श्मशानवासी भिक्षुक मानते हुए उनके प्रति निरादरका भाव रखते थे। इसके अतिरिक्त जब ब्रह्माजीने रुद्रगणोंकी सृष्टि की थी तो वे अत्यन्त उग्र रुद्रगण सृष्टिका ही विनाश करनेपर तुल गये थे। यह देखकर ब्रह्माजीकी आज्ञासे दक्षने उन सबको अपने अधीन किया था। अत: अज्ञानवश वे भगवान् सदाशिवको भी अपने अधीन ही समझते थे। इस कारण वे भगवान् सदाशिवको जामाता नहीं बनाना चाहते थे।

सतीने शिवविहीन स्वयंवर-सभा देखकर '**शिवाय नमः**' कहकर वरमाला भूमिको समर्पित कर दिया। उनके ऐसा करते ही दिव्य रूपधारी त्रिनेत्र वृषभध्वज भगवान् सदाशिव अन्तरिक्षमें प्रकट हो गये और वरमाला उनके गलेमें सुशोभित होने लगी। समस्त देवताओं, ऋषियों और मुनियोंके देखते-देखते वे अन्तर्धान हो गये। यह देखकर वहाँ विराजमान ब्रह्माजीने प्रजापति दक्षसे कहा कि आपकी पुत्रीने देवाधिदेव भगवान् शंकरका वरण किया है। अत: उन महेश्वरको बुलाकर वैवाहिक विधि-विधानसे उन्हें अपनी पुत्री दे दीजिये। ब्रह्माजीका यह वचन सुनकर दक्षने भगवान् शंकरको बुलाकर उन्हें सतीको सौंप दिया। भगवान् शिव भी सतीका पाणिग्रहण कर उन्हें लेकर कैलास चले गये।

इधर सतीके चले जानेके बाद दक्षका दिव्य ज्ञान लुप्त हो गया। वे शिव और सतीसे द्वेषवश विषाद करने लगे। यद्यपि आद्या शक्ति भगवतीने वरदान देते समय ही उनसे यह कहा था कि वे शम्भुपत्नी बनेंगी, पर भावीवश दक्षको यह ज्ञान ही न रहा कि भगवान् शिव पूर्णब्रह्म परमात्मा

और सती आद्या शक्ति जगज्जननी हैं। वे सदाशिवकी अर्द्धाङ्गिनी हैं और भगवान् सदाशिव भी उनके अर्द्धाङ्ग हैं। इसीलिये महर्षि दधीचि और देवर्षि नारदके समझानेपर भी उन्हें ज्ञान नहीं हुआ और वे शिवनिन्दामें रत रहे। इतना ही नहीं, उन्होंने शिवसे द्वेषवश एक महान् यज्ञका आयोजन भी किया, जिसमें सभी देवताओंको तो आमन्त्रित किया; परंतु न तो सतीको बुलाया और न ही शिवको।

देवर्षि नारद शिवविहीन यज्ञका आयोजन देखकर दक्षके भवनसे उठकर भगवान् शंकर एवं माता सतीके पास कैलास चले आये और उनसे दक्षयज्ञकी बात बतायी। भगवान् शंकरने निर्विकार भावसे कहा कि जब दक्षने हमलोगोंको बुलाया नहीं तो हमारे वहाँ जानेका क्या उद्देश्य! उस प्रजापति दक्षकी जैसी इच्छा हो, वैसा वह करे। इसपर नारदजीने सतीसे कहा—'सुरेश्वरी! भगवान् शंकर तो परम योगी हैं, उनके लिये मान क्या, अपमान क्या? परंतु उस अहंकारी दक्षप्रजापतिको यदि आपने दण्ड नहीं दिया तो लोगोंमें भगवान् शिवके प्रति अनास्थाका भाव उत्पन्न हो जायगा। अतः आपका वहाँ जाना आवश्यक है'—ऐसा कहकर नारदजी पुनः दक्षभवनके लिये चल दिये।

नारदजीके चले जानेके बाद सतीने शिवसे पिताके यज्ञमें जानेकी अनुमति माँगी, इसपर शिवने कहा कि दक्षके यहाँ मेरी निन्दा ही होगी; अतः तुम्हारा मेरे निन्दकके यहाँ जाना उचित नहीं। शिवद्वारा अनुमति न देते देखकर सतीने अपना विराट्‌रूप प्रकट किया, वे भगवती जगदम्बा दस महाविद्याओंसे परिवृत थीं। उन्होंने सदाशिवसे कहा कि मैं या तो आपको यज्ञमें भाग दिलाऊँगी; नहीं तो यज्ञका नाश कर दूँगी। यह देख भगवान् शिवने उन्हें जानेकी अनुमति दे दी। सतीने दस हजार सिंहोंसे युक्त स्वर्णमण्डित विशाल रथपर आरूढ़ हो नन्दीको सारथि बना दक्षभवनके लिये प्रस्थान किया।

दक्षभवनमें पहुँचनेपर माता प्रसूतिने तो सतीका आदर-सत्कार किया, परंतु अन्य बन्धु-बान्धवों और बहनोंके भाव व्यंग्यात्मक ही रहे।

इसके बाद वे देवी सती यज्ञमण्डपमें पहुँचीं, जहाँ दक्ष देवताओंके साथ यज्ञ कर रहे थे। वहाँ शिवका भाग न देखकर सतीने क्रुद्ध हो भयंकर महाकालीका रूप धारण कर लिया। वे श्यामवर्णा, मुक्तकेशी, दिगम्बरी और आग्नेय नेत्रोंवाली हो गयीं। उन्हें इस प्रकार देखकर क्रुद्ध दक्षने कहा—'सती! तुम मेरे यहाँ सुवर्णके समान गौरवर्णवाली और दिव्य वस्त्राभूषणोंसे अलङ्कृत रहती थी; परंतु तुमने अपनी इच्छासे अयोग्य पतिका वरण किया है। अतः काली और दिगम्बरी हो गयी हो।'

दक्षद्वारा शिवके प्रति ऐसे निन्दा, द्वेष और व्यंग्यपूर्ण वचनोंको सुनकर क्रुद्ध हो सतीने अपने ही समान रूपवाली छायासतीको प्रादुर्भूत किया और उसे यज्ञकुण्डमें प्रवेश कर यज्ञका नाश कर देनेका आदेश दे स्वयं अन्तर्धान हो गयीं। वे देवी सती जो स्वयं आद्या शक्ति पूर्णा प्रकृति थीं, पलभरमें करोड़ों दक्षोंका संहार करनेमें सक्षम थीं, परंतु पिताके गौरवकी रक्षाके लिये उन्होंने ऐसा किया।

शिवनिन्दासे क्रुद्ध छायासतीने दक्षसे कहा—'महामूर्ख! तू शिवकी निन्दा क्यों कर रहा है? शिवनिन्दक इस जिह्वाको काट डालो। दुर्बुद्धे! ऐसा प्रतीत होता है कि आज ही तुझे शिवनिन्दाका फल प्राप्त हो जायगा और तेरा सिर धड़से अलग हो जायगा।'

छायासतीकी इन बातोंको सुनकर क्रोधसे आँखें लाल कर दक्ष बोले—'कुपुत्री! तू मेरी आँखोंसे ओझल हो जा, प्रेतभूमिनिवासी शिवकी पत्नी होकर तुम मेरे लिये मर गयी हो। तुझे देखनेसे क्रोधाग्निमें मेरा शरीर जल रहा है। अतः तू शीघ्र यहाँसे चली जा।'

दक्षके ऐसे वचनोंको सुनकर छायासतीने भयंकर स्वरूप धारण कर लिया, उनके तीनों नेत्र जाज्वल्यमान थे, नक्षत्रमण्डलतक ऊँचा मस्तक था और मुख अत्यन्त विशाल था। सिरसे पैरतक विशाल केशराशि खुली थी। वे मध्याह्नकालीन हजारों सूर्योंकी भाँति प्रकाशमान और प्रलयकारी मेघके समान श्यामवर्ण थीं। क्रोधपूर्वक बार-बार अट्टहास करते हुए उन्होंने दक्षसे गम्भीर वाणीमें कहा—'मैं तुम्हारी आँखोंसे ही दूर नहीं

जाऊँगी, बल्कि तुम्हारे द्वारा उत्पन्न इस शरीरसे भी शीघ्र ही अवश्य बाहर चली जाऊँगी।'

ऐसा कहकर वे देवी छायासती सभी देवताओंके देखते-देखते यज्ञाग्निमें प्रवेश कर गयीं। उनके ऐसा करते ही पृथ्वी काँपने लगी, भयंकर गर्जनाके साथ वेगपूर्वक वायु बहने लगी, उल्कापात होने लगे और रक्तकी भयंकर वर्षा होने लगी, यज्ञकुण्डकी अग्नि बुझ गयी और सभी देवता भयसे पीले हो गये। सियार और कुत्ते हव्यका भक्षण करने लगे तथा यज्ञमण्डप श्मशानकी भाँति हो गया, परंतु दीर्घश्वास लेते हुए दक्षने पुनः यज्ञ आरम्भ करा दिया। यह देखकर नारदजीने शीघ्रतापूर्वक कैलासकी ओर प्रस्थान किया।

नारदजीसे यज्ञाग्निमें सतीके भस्मीभूत हो जानेका समाचार पाकर भगवान् सदाशिव क्रोध और शोकसे विह्वल हो गये। उनके तीसरे नेत्रसे करोड़ों मध्याह्नकालीन सूर्योंके समान प्रकाशमान वीरभद्र प्रकट हुए, जो कालान्तक यमके समान भयानक स्वरूपवाले थे। उन्हें भगवान् रुद्रने दक्षयज्ञका नाश करने और दक्षका सिर काट लेनेका आदेश दिया। उन भगवान् रुद्रके श्वाससे हजारों रुद्रगणोंकी उत्पत्ति हो गयी। वीरभद्रने दक्षके यज्ञमें जाकर यज्ञ नष्ट कर दिया तथा दक्षका सिर काट डाला। अन्य देवगण जो भगवान् शम्भुकी निन्दा सुन रहे थे, उन्हें भी दण्ड दिया।

दक्षयज्ञके रक्षक भगवान् विष्णुको भी वीरभद्रसे पराजित होना पड़ा, उनकी कौमोदकी गदा वीरभद्रसे टकराकर चूर-चूर हो गयी और सुदर्शन चक्र वीरभद्रके गलेमें मालाकी भाँति सुशोभित हो गया। खड्ग हाथमें लिये स्वयं भगवान् विष्णु भी स्तम्भित हो गये।

अन्तमें ब्रह्माजी तथा अन्य देवताओंकी प्रार्थनापर भगवान् शिवने बकरेका सिर लगाकर दक्षको जीवित किया तथा समस्त देवताओंको स्वस्थ कर यज्ञ पूर्ण कराया।

इतना सब होनेपर भी भगवान् शम्भु सतीके शोकमें प्राकृत पुरुषकी

भाँति विह्वल हो रहे थे। उनकी ऐसी दशा देखकर ब्रह्मा और विष्णुने जगज्जननी जगदम्बाकी स्तुति की। प्रसन्न हो भगवतीने अन्तरिक्षमें दर्शन देते हुए कहा—'शम्भो! मैंने आपका परित्याग नहीं किया है, आप ही मुझ महाकालीके हृदयस्थान हैं। आपने पतिभावसे मेरा अनादर किया था, इसीलिये मैं कुछ समयतक पत्नीरूपमें आपके साथ नहीं रह सकूँगी। महेश्वर! मेरा छायाशरीर दक्षके यज्ञभवनमें पड़ा है, उसे आप सिरपर धारण करके सम्पूर्ण भूतलपर भ्रमण करें। मेरा वह शरीर अनेक खण्डोंमें विभक्त होकर पृथ्वीपर गिरेगा और उन स्थानोंपर पापोंका नाश करनेवाले महान् शक्तिपीठ उदित होंगे'—

स देहो बहुधा भूत्वा पतिष्यति धरातले।
तत्र तद्धि महापीठं भविष्यत्यघनाशनम्॥

(देवीपुराण [महाभागवत] ११।४१)

पूर्णा प्रकृतिके इन वचनोंको सुन भगवान् सदाशिव उन्मत्त हो नाच उठे। उन्होंने यज्ञमण्डपमें जाकर सतीके छायाशरीरको देखा, जो देदीप्यमान था। उन्होंने उसे अपने सिरपर धारण कर लिया और उन्मत्तकी भाँति धरणीतलपर विचरण करने लगे। वे सतीके छायाशरीरको कभी सिरपर, कभी दायें हाथमें, कभी बायें हाथमें और कभी कन्धेपर रखते तथा कभी प्रेमपूर्वक वक्षःस्थलपर धारण कर लेते। वे उन्मत्त हो नृत्य करने लगे। उनके उस ताण्डवनृत्यसे अकाल प्रलयकी स्थिति उत्पन्न हो गयी। पृथ्वीको धारण करनेवाले शेषनाग और कच्छप उनके चरणप्रहारसे व्याकुल हो गये। ऐसा देखकर भगवान् विष्णुने सुदर्शन चक्रसे सतीके छायाशरीरके टुकड़े करने शुरू कर दिये। नृत्य करते हुए शिव जब पैर पटकते तो विष्णु चक्र चलाकर छायाशरीरके टुकड़े काट गिराते।

इस प्रकार छायासतीके शरीरके अङ्ग-प्रत्यङ्ग धरातलपर गिरनेसे ५१ शक्तिपीठ बन गये—

पीठानि चैकपञ्चाशदभवन्मुनिपुङ्गव॥

अङ्गप्रत्यङ्गपातेन छायासत्या महीतले।

(देवीपुराण [महाभागवत] १२।२९-३०)

शक्तिपीठोंकी इस उद्भव-कथाका वर्णन कहीं संक्षेपमें और कहीं विस्तारसे विभिन्न पुराणों एवं शाक्त-शैव ग्रन्थोंमें पाया जाता है। इनकी संख्या भी भिन्न-भिन्न बतायी गयी है। जैसे तन्त्रचूडामणिमें शक्तिपीठोंकी संख्या ५२ बतायी गयी है। देवीभागवतमें १०८ और देवीगीतामें ७२। कुछ अन्य ग्रन्थोंमें भी पीठोंकी संख्या भिन्न-भिन्न पायी जाती है। यूँ तो जगदम्बाकी उपासनाके जाग्रत् धाम अनेक स्थानोंपर विख्यात हैं और जनसामान्यमें उनके प्रति अगाध श्रद्धा भी है। किंतु देवीपुराण (महाभागवत)-में शक्तिपीठोंकी संख्या ५१ बतायी गयी है तथा परम्परागतरूपसे भी देवीभक्तों और सुधीजनोंमें ५१ शक्तिपीठोंकी विशेष मान्यता है।

आगे इन शक्तिपीठोंकी तालिका दी जा रही है—

शक्तिपीठोंकी तालिका

शक्तिपीठ	अङ्ग या आभूषण	शक्ति	भैरव
१. किरीट	किरीट	विमला, भुवनेशी	संवर्त
२. वृन्दावन	केशपाश	उमा	भूतेश
३. करवीर	त्रिनेत्र	महिषमर्दिनी	क्रोधीश
४. श्रीपर्वत	दक्षिण तल्प	श्रीसुन्दरी	सुन्दरानन्द
५. वाराणसी	कर्ण-मणि	विशालाक्षी	कालभैरव
६. गोदावरीतट	वाम गण्ड (बायाँ कपोल)	विश्वेशी, रुक्मिणी विश्वमातृका	दण्डपाणि (वत्सनाभ)
७. शुचि (कन्याकुमारी)	ऊर्ध्व दन्त (मतान्तरसे पृष्ठभाग)	नारायणी	संहार (संकूर)
८. पञ्चसागर	अधोदन्त	वाराही	महारुद्र
९. ज्वालामुखी	जिह्वा	सिद्धिदा	उन्मत्त
१०. भैरवपर्वत	ऊर्ध्व ओष्ठ	अवन्ती	लम्बकर्ण
११. अट्टहास	अधरोष्ठ	फुल्लरा	विश्वेश
१२. जनस्थान	ठुड्डी	भ्रामरी	विकृताक्ष

शक्तिपीठ	अङ्ग या आभूषण	शक्ति	भैरव
१३. कश्मीर	कण्ठ	महामाया	त्रिसन्ध्येश्वर
१४. नन्दीपुर	कण्ठहार	नन्दिनी	नन्दिकेश्वर
१५. श्रीशैल	ग्रीवा	महालक्ष्मी	संवरानन्द (ईश्वरानन्द)
१६. नलहटी	उदरनली	कालिका	योगीश
१७. मिथिला	वाम स्कन्ध	उमा, महादेवी	महोदर
१८. रत्नावली	दक्षिण स्कन्ध	कुमारी	शिव
१९. प्रभास	उदर	चन्द्रभागा	वक्रतुण्ड
२०. जालन्धर	वाम स्तन	त्रिपुरमालिनी	भीषण
२१. रामगिरि	दक्षिण स्तन	शिवानी	चण्ड
२२. वैद्यनाथ	हृदय	जयदुर्गा	वैद्यनाथ
२३. वक्त्रेश्वर	मन	महिषमर्दिनी	वक्त्रनाथ
२४. कन्यकाश्रम	पीठ	शर्वाणी	निमिष
२५. बहुला	वाम बाहु	बहुला	भीरुक
२६. उज्जयिनी	कुहनी	मङ्गलचण्डिका	माङ्गल्यकपिलाम्बर
२७. मणिवेदिक	कलाइयाँ	गायत्री	शर्वानन्द
२८. प्रयाग	हाथकी अँगुली	ललिता	भव
२९. उत्कलमें विरजाक्षेत्र	नाभि	विमला	जगन्नाथ
३०. काञ्ची	कंकाल	देवगर्भा	रुरु
३१. कालमाधव	वाम नितम्ब	काली	असिताङ्ग
३२. शोण	दक्षिण नितम्ब	नर्मदा, शोणाक्षी	भद्रसेन
३३. कामगिरि	योनि	कामाख्या	उमानन्द (उमानाथ)
३४. जयन्ती	वाम जङ्घा	जयन्ती	क्रमदीश्वर
३५. मगध	दक्षिण जङ्घा	सर्वानन्दकरी	व्योमकेश
३६. त्रिस्रोता	वाम पाद	भ्रामरी	ईश्वर
३७. त्रिपुरा	दक्षिण पाद	त्रिपुरसुन्दरी	त्रिपुरेश
३८. विभाष	बायाँ टखना	कपालिनी, भीमरूपा	सर्वानन्द

शक्तिपीठ	अङ्ग या आभूषण	शक्ति	भैरव
३९. कुरुक्षेत्र	दक्षिण गुल्फ	सावित्री	स्थाणु
४०. युगाद्या	दक्षिण पादाङ्गुष्ठ	भूतधात्री	क्षीरकण्टक (युगाद्या)
४१. विराट	दक्षिण पादाङ्गुलियाँ	अम्बिका	अमृत
४२. कालीपीठ	अन्य पादाङ्गुलियाँ	कालिका	नकुलीश
४३. मानस	दक्षिण हथेली	दाक्षायणी	अमर
४४. लंका	नूपुर	इन्द्राक्षी	राक्षसेश्वर
४५. गण्डकी	दक्षिण गण्ड (दायाँ कपोल)	गण्डकी	चक्रपाणि
४६. नेपाल	दोनों जानु	महामाया	कपाल
४७. हिंगुला	ब्रह्मरन्ध्र	कोट्टरी	भीमलोचन
४८. सुगन्धा	नासिका	सुनन्दा	त्र्यम्बक
४९. करतोयातट	वाम तल्प	अपर्णा	वामन
५०. चट्टल	दक्षिण बाहु	भवानी	चन्द्रशेखर
५१. यशोर	बायीं हथेली	यशोरेश्वरी	चन्द्र

इन सभी स्थानोंपर जगदम्बा भवानीके विभिन्न रूपोंकी उपासना की जाती है। जनमानसमें परम्परागतरूपसे इन सभी शक्तिपीठोंका बड़ा महत्त्व है।

इन शक्तिपीठोंका स्थान, वहाँकी अधिष्ठात्री शक्ति एवं भैरवका नाम तथा भगवतीके किस अङ्ग अथवा आभूषणादिका कहाँ पतन हुआ था—इसका विवरण विभिन्न ग्रन्थोंमें तथा जनश्रुतिके आधारपर प्राप्त होता है। स्वभावतः इसमें सर्वमान्य एकरूपताका अभाव है। कुछ भूभाग जो पहले बृहत्तर भारतके अङ्ग थे, कालक्रमसे स्वतन्त्र देशके रूपमें अब विद्यमान हैं, वहाँ स्थित शक्तिपीठोंका विस्तृत विवरण अप्राप्य-सा है। प्राप्त विवरणोंके आधारपर इन ५१ शक्तिपीठोंका

संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रदेशक्रमसे देनेका प्रयास किया गया है—

बंगालके शक्तिपीठ

प्राचीन बंगभूमि, जिसमें वर्तमान बँगलादेश भी सम्मिलित था, परम्परागतरूपसे शक्ति-उपासनाका विशिष्ट केन्द्र रही है। दुर्गापूजा यहाँका सबसे बड़ा उत्सव माना जाता है। इस भूभागमें १४ शक्तिपीठ स्थित हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—

१. कालिका

कोलकाता पूर्वी भारतका एक महानगर और पश्चिम बंगाल-प्रान्तकी राजधानी है। गङ्गा जिसे यहाँ हुगली कहा जाता है, इसके तटपर बसे इस नगरमें भगवतीके कई प्रसिद्ध स्थान हैं। परम्परागतरूपसे कालीघाटस्थित कालीमन्दिरकी प्रसिद्धि शक्तिपीठके रूपमें सर्वमान्य है। यहाँ सतीदेहके दाहिने पैरकी चार अँगुलियाँ (अँगूठा छोड़कर) गिरी थीं। यहाँकी शक्ति 'कालिका' और भैरव 'नकुलीश' हैं। इस पीठमें महाकालीकी भव्य मूर्ति विराजमान है, जिसकी लम्बी लाल जिह्वा मुखके बाहर निकली हुई है। देवीमन्दिरके समीप ही नकुलेश शिवका मन्दिर स्थित है। कुछ लोग कलकत्तेमें टालीगंज बस-अड्डेसे २ कि०मी०पर स्थित आदिकालीके प्राचीन मन्दिरको भी शक्तिपीठके रूपमें मान्यता देते हैं। प्राचीन मन्दिर भग्नप्राय होनेसे उसका आंशिक जीर्णोद्धार हुआ है। यहाँ एकादश रुद्रके ग्यारह शिवलिङ्ग भी स्थापित हैं। गङ्गातटपर ही दक्षिणेश्वर कालीका एक प्रसिद्ध भव्य मन्दिर है। यहाँ परम हंस श्रीरामकृष्णदेवने जगदम्बाकी आराधना की थी।

२. युगाद्या

पूर्वी रेलवेके वर्धमान (बर्दवान) जंकशनसे लगभग ३२ कि०मी० उत्तरकी ओर क्षीरग्राममें यह शक्तिपीठ स्थित है। यहाँ देवीदेहके दाहिने पैरका अँगूठा गिरा था। यहाँकी शक्ति 'भूतधात्री' और भैरव 'क्षीरकण्टक' हैं।

३. त्रिस्रोता

पूर्वोत्तर रेलवेमें सिलीगुड़ी–हल्दीवाड़ी रेलवे–लाइनपर जलपाइगुड़ी स्टेशन है। यह जिला मुख्यालय भी है। इस जिलेके बोदा इलाकेमें शालवाड़ी ग्राम है। यहाँ तीस्ता नदीके तटपर देवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ देवीदेहका वाम चरण गिरा था। यहाँकी शक्ति 'भ्रामरी' और भैरव 'ईश्वर' हैं।

४. बहुला

यह शक्तिपीठ हावड़ासे १४४ कि०मी० तथा नवद्वीपधामसे ३९ कि०मी० दूर कटवा जंकशनसे पश्चिम केतुब्रह्म ग्राम या केतु ग्राममें है। यहाँ देवीदेहकी वाम बाहु गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'बहुला' और भैरव 'भीरुक' हैं।

५. वक्त्रेश्वर

पूर्वी रेलवेकी मुख्य लाइनमें ओंडाल जंकशन है, वहाँसे एक लाइन सैन्थिया जाती है। इस लाइनपर ओंडालसे ३५ कि०मी० की दूरीपर दुब्राजपुर स्टेशन है। इस स्टेशनसे ११ कि०मी० उत्तर तप्त जलके कई झरने हैं। तप्त जलके इन झरनोंके समीप कई शिवमन्दिर भी हैं। बाकेश्वर नालेके तटपर होनेसे यह स्थान बाकेश्वर या वक्त्रेश्वर कहलाता है। यह शक्तिपीठ सैन्थिया जंकशनसे १२ कि०मी०की दूरीपर श्मशानभूमिमें स्थित है। यहाँका मुख्य मन्दिर बाकेश्वर या वक्त्रेश्वर शिवमन्दिर है। यहाँ पापहरणकुण्ड है। जनश्रुतिके अनुसार यहाँ अष्टावक्र ऋषिका आश्रम था। देवीदेहका मन यहाँ गिरा था। यहाँकी शक्ति 'महिषमर्दिनी' और भैरव 'वक्त्रनाथ' हैं।

६. नलहटी

यह शक्तिपीठ बोलपुर शान्तिनिकेतनसे ७५ कि०मी० तथा सैन्थिया जंकशनसे मात्र ४२ कि०मी० दूर नलहटी रेलवे–स्टेशनसे ३ कि०मी० की दूरीपर नैर्ऋत्यकोणमें स्थित एक ऊँचे टीलेपर है। यहाँ

देवीदेहकी उदरनलीका पतन हुआ था। कुछ लोगोंकी मान्यता है कि यहाँ शिरोनलीका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति 'कालिका' और भैरव 'योगीश' हैं।

७. नन्दीपुर

पूर्वी रेलवेकी हावड़ा-क्यूल लाइनमें सैन्थिया स्टेशनसे अग्निकोणमें थोड़ी दूरपर नन्दीपुर नामक स्थानमें एक बड़े वटवृक्षके नीचे देवीमन्दिर है, यह ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक है। यहाँ देवीदेहसे कण्ठहार गिरा था। यहाँकी शक्ति 'नन्दिनी' और भैरव 'नन्दिकेश्वर' हैं।

८. अट्टहास

यह शक्तिपीठ वर्धमान (बर्दवान)-से ९३ कि०मी० दूर कटवा-अहमदपुर लाइनपर लाबपुर स्टेशनके निकट है। यहाँ देवीदेहका अधरोष्ठ (नीचेका होठ) गिरा था। यहाँकी शक्ति 'फुल्लरा' और भैरव 'विश्वेश' हैं।

९. किरीट

यह शक्तिपीठ हावड़ा-बरहरवा रेलवे-लाइनपर हावड़ासे २$\frac{1}{2}$ कि०मी० दूर लालबाग कोट स्टेशनसे लगभग ५ कि०मी०पर बड़नगरके पास गङ्गातटपर स्थित है। यहाँ देवीदेहसे किरीट नामक शिरोभूषण गिरा था। यहाँकी शक्ति 'विमला,' 'भुवनेशी' और भैरव 'संवर्त' हैं।

१०. यशोर

यह शक्तिपीठ बृहत्तर भारतके बंगप्रदेशमें और वर्तमानमें बँगलादेशमें स्थित है। यह खुलना जिलेके जैशोर शहरमें है। यहाँ देवीदेहकी वाम हथेली गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'यशोरेश्वरी' और भैरव 'चन्द्र' हैं।

११. चट्टल

यह शक्तिपीठ भी बाँगलादेशमें है। यह चटगाँवसे ३८ कि०मी० दूर सीताकुण्ड स्टेशनके पास चन्द्रशेखरपर्वतपर भवानीमन्दिरके रूपमें स्थित है। चन्द्रशेखर शिवका भी यहाँ मन्दिर है। जो समुद्रकी सतहसे

लगभग ३५० मी० की ऊँचाईपर स्थित है। यहाँ निकट सीताकुण्ड, व्यासकुण्ड, सूर्यकुण्ड, ब्रह्मकुण्ड, जनकोटिशिव, सहस्त्रधारा, बाडवकुण्ड तथा लवणाक्षतीर्थ हैं। बाडवकुण्डमेंसे निरन्तर आग निकला करती है। शिवरात्रिको यहाँ मेला लगता है। यहाँ देवीदेहकी दक्षिण बाहु गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'भवानी' और भैरव 'चन्द्रशेखर' हैं।

१२. करतोयातट

वर्तमानमें यह शक्तिपीठ भी बँगलादेशमें ही है। यह लालमनीरहाट–संतहाट रेलवे–लाइनपर बोंगड़ा स्टेशनसे दक्षिण–पश्चिममें ३२ कि०मी० दूर भवानीपुर ग्राममें स्थित है। यहाँ देवीदेहका बायाँ तल्प गिरा था। यहाँकी शक्ति 'अपर्णा' और भैरव 'वामन' हैं।

१३. विभाष

यह शक्तिपीठ पश्चिम बंगालमें मिदनापुर जिलेमें ताम्रलुकमें है, वहाँ रूपनारायण नदीके तटपर वर्गभीमाका विशाल मन्दिर ही यह शक्तिपीठ है। मन्दिर अत्यन्त प्राचीन है। दक्षिण–पूर्व रेलवेके पास कुड़ा स्टेशनसे २४ कि०मी० की दूरीपर यह स्थान है। यहाँ सतीका बायाँ टखना (एड़ीके ऊपरकी हड्डी) गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'कपालिनी' 'भीमरूपा' तथा भैरव 'सर्वानन्द' हैं।

१४. सुगन्धा

यह शक्तिपीठ भी वर्तमानमें बँगलादेशमें है। यहाँ पहुँचनेके लिये खुलनासे बारीसालतक स्टीमरसे जाया जाता है। बारीसालसे २१ कि०मी० उत्तरमें शिकारपुर ग्राममें सुगन्धा (सुनन्दा) नदीके तटपर उग्रतारा देवीका मन्दिर है, यह ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक है। यहाँ देवीदेहकी नासिका गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'सुनन्दा' और भैरव 'त्र्यम्बक' हैं।

मध्यप्रदेशके शक्तिपीठ

देशके अन्य प्रान्तोंकी भाँति मध्यप्रदेशमें भी देवी–उपासनाकी अत्यन्त प्राचीन परम्परा है। यहाँके बुन्देलखण्ड, बघेलखण्ड, नेमाड़

तथा मालवा अञ्चलोंमें लोकदेवीके रूपमें देवीपूजनकी प्रथा है। यहाँ स्थान-स्थानपर लोकदेवियोंके मन्दिर तथा थान हैं। इस प्रदेशमें ४ शक्तिपीठ हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१५. भैरवपर्वत

इस शक्तिपीठके संदर्भमें विद्वानोंके दो मत हैं। कुछ विद्वान् गुजरातमें गिरनारके निकट स्थित भैरवपर्वतको शक्तिपीठ मानते हैं तो कुछ विद्वान् मध्यप्रदेशमें उज्जैनके निकट शिप्रानदीके तटपर स्थित भैरवपर्वतको शक्तिपीठ मानते हैं। दोनों ही स्थलोंको देवीके पूजा-स्थल मानकर श्रद्धापूर्वक दर्शन करना चाहिये। यहाँ देवीदेहका ऊर्ध्व ओष्ठ गिरा था। यहाँकी शक्ति 'अवन्ती' और भैरव 'लम्बकर्ण' हैं।

१६. रामगिरि

इस शक्तिपीठके सम्बन्धमें दो मान्यताएँ हैं—कुछ विद्वान् चित्रकूटके शारदामन्दिरको और कुछ विद्वान् मैहरके शारदामन्दिरको यह शक्तिपीठ बताते हैं। दोनों ही स्थान प्रसिद्ध तीर्थ हैं और मध्यप्रदेशमें स्थित हैं। यहाँ देवीदेहका दाहिना स्तन गिरा था। यहाँकी शक्ति 'शिवानी' और भैरव 'चण्ड' हैं।

१७. उज्जयिनी

उज्जैनमें रुद्रसागर या रुद्रसरोवरके निकट हरसिद्धिदेवीका मन्दिर है, इसे ही शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ देवीदेहकी कुहनी गिरी थी। अतः उसीकी पूजा होती है। यहाँकी शक्ति 'मङ्गलचण्डिका' और भैरव 'माङ्गल्यकपिलाम्बर' हैं। यह मन्दिर चहारदीवारीसे घिरा हुआ है। मन्दिरमें मुख्य पीठपर प्रतिमाके स्थानपर श्रीयन्त्र विराजमान है और उसके पीछे भगवती अन्नपूर्णाकी प्रतिमा है। वर्तमानमें मन्दिरके गर्भगृहमें स्थित हरसिद्धिदेवीकी प्रतिमाकी भी पूजा होती है। मन्दिरमें महाकालिका, महालक्ष्मी, महासरस्वती तथा महामायाकी भी प्रतिमाएँ हैं। मन्दिरके पूर्वद्वारपर बावड़ी है जिसके बीचमें एक स्तम्भ है तथा

निकट ही सप्तसागर सरोवर है। मन्दिरके जगमोहनके सामने दो बड़े-बड़े दीपस्तम्भ बने हुए हैं। प्रतिवर्ष आश्विनमासके नवरात्रमें पाँच दिनतक इनपर दीपमालाएँ लगायी जाती हैं। उस समय यहाँकी शोभा अपूर्व दिखायी पड़ती है। इन दिनों यहाँ हजारों दर्शनार्थी आते हैं।

स्कन्दपुराणके अवन्तिकाखण्डमें उज्जयिनीमाहात्म्य विस्तारसे प्राप्त होता है। उज्जयिनीमाहात्म्यमें श्रीहरसिद्धिदेवीका वर्णन इस प्रकार आया है—

प्राचीन कालमें चण्ड-प्रचण्ड नामक दो राक्षस थे, जिनके अत्याचारोंसे संसार त्राहि-त्राहि कर उठा था। एक बार ये दोनों कैलासपर गये और वहाँ नन्दीके रोकनेपर उन्हें घायल कर दिया। भगवान् शंकरने इनकी उग्रता और दुराचरणको देखकर भगवती चण्डीका स्मरण किया और उनसे चण्ड-प्रचण्डका वध कर जगत्‌को त्राण देनेका अनुरोध किया। भगवती देवी चण्डीने 'अभी मारती हूँ'—मात्र इस सङ्कल्पसे ही उनका वध कर दिया। तब भगवान् हरने कहा—'चण्डि! तुमने दोनों दुष्ट दानवोंका तत्काल संहार किया है,इसलिये लोकमें तुम 'हरसिद्धि' के नामसे विख्यात होओगी।' जो मनुष्य परम भक्तिपूर्वक देवी हरसिद्धिका दर्शन करता है, वह अक्षय भोग प्राप्त कर मृत्युके पश्चात् शिवधामको जाता है।

हरसिद्धिदेवीका एक मन्दिर द्वारका (सौराष्ट्र)-में भी है। दोनों स्थानोंपर देवीकी मूर्तियाँ एक-जैसी ही हैं। एक किंवदन्तीके अनुसार महाराजा विक्रमादित्य वहींसे देवीको अपनी आराधनासे संतुष्ट कर लाये थे। मुसलिम-आक्रमणकारियोंने इस मन्दिरको नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। राणोजी शिंदेके मन्त्री रामचन्द्रबाबा शेणवीने इसका पुनर्निर्माण कराया। ये देवी वैष्णवी हैं।

१८. शोण

अमरकण्टकके नर्मदामन्दिरमें यह शक्तिपीठ माना जाता है। एक

अन्य मान्यताके अनुसार बिहार प्रदेशके सासारामस्थित ताराचण्डी मन्दिरको शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ देवीदेहका दक्षिण नितम्ब गिरा था। यहाँकी शक्ति 'नर्मदा' या 'शोणाक्षी' और भैरव 'भद्रसेन' हैं। कुछ विद्वान् डेहरी आन सोन स्टेशनसे कुछ दूर स्थित देवीस्थानको यह शक्तिपीठ मानते हैं।

तमिलनाडुके शक्तिपीठ

भारतका दक्षिणस्थ तमिलनाडुप्रदेश प्राचीनतम द्रविड़-सभ्यताका केन्द्र है। देवीपूजाकी यहाँ अति प्राचीन परम्परा रही है। यहाँके वरलक्ष्मी वरदम और नवरात्र उत्सव देवीके महालक्ष्मी, महासरस्वती और दुर्गा—तीनों रूपोंकी प्रसन्नताके लिये मनाये जाते हैं। साक्षात् जगज्जननी भगवती पार्वतीने अपने अंशसे मीनाक्षीरूपमें अवतार लेकर इस भूभागको पावन किया है। इस प्रदेशमें भगवती जगदम्बाके ४ शक्तिपीठ हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

१९. शुचि

तमिलनाडुमें तीन महासागरोंके संगमस्थल कन्याकुमारीसे १३ कि०मी० दूर शुचीन्द्रम्में स्थाणु शिवका मन्दिर है। उसी मन्दिरमें यह शक्तिपीठ स्थित है। कन्याकुमारी एक अन्तरीप है, यह भारतकी अन्तिम दक्षिण सीमा है। यहाँ देवीदेहके ऊर्ध्व दन्त (मतान्तरसे पृष्ठभाग) गिरे थे। यहाँकी शक्ति 'नारायणी' और भैरव 'संहार' या 'संकूर' हैं।

२०. रत्नावली

यह शक्तिपीठ मद्रासके पास है, परंतु स्थान अज्ञात है। यहाँ देवीदेहका दक्षिण स्कन्ध गिरा था। यहाँकी शक्ति 'कुमारी' और भैरव 'शिव' हैं।

२१. कन्यकाश्रम या कण्यकाचक्र

तमिलनाडुमें तीन सागरोंके संगमस्थलपर कन्याकुमारीका मन्दिर है। उस मन्दिरमें ही भद्रकालीका भी मन्दिर है। ये कुमारी देवीकी

सखी हैं, उनका मन्दिर ही शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहका पृष्ठभाग गिरा था। यहाँकी शक्ति 'शर्वाणी' और भैरव 'निमिष' हैं।

२२. काञ्ची

तमिलनाडुमें कांजीवरम् स्टेशनके पास ही शिवकाञ्ची नामक एक बड़ा नगरभाग है, वहाँ भगवान् एकाम्रेश्वर शिवका मन्दिर है। यहाँसे स्टेशनकी ओर लगभग दो फर्लांगकी दूरीपर कामाक्षीदेवीका विशाल मन्दिर है। मुख्य मन्दिरमें भगवती त्रिपुरसुन्दरीकी प्रतिमूर्ति कामाक्षीदेवीकी प्रतिमा है। अन्नपूर्णा, शारदामाता तथा आद्यशंकराचार्यकी भी मूर्तियाँ हैं। इस मन्दिरको दक्षिण भारतका सर्वप्रधान शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ देवीदेहका कंकाल [अस्थिपञ्जर] गिरा था। यहाँकी शक्ति 'देवगर्भा' और भैरव 'रुरु' हैं।

बिहारके शक्तिपीठ

बिहारमें देवीपूजनकी परम्परा लोकजीवनमें समाहित है। भगवती षष्ठी, चण्डी, बूढ़ी माई आदि विभिन्न रूपोंमें यहाँ देवी-उपासना प्रचलित है। यहाँका मिथिला अञ्चल तो साक्षात् जगज्जननी जनकनन्दिनी देवी सीताजीका आविर्भाव-स्थल ही रहा है। यह शक्ति-उपासनाके वैष्णव और तान्त्रिक—दोनों रूपोंका केन्द्रस्थल है। इस प्रदेशमें देवीदेहके अङ्गोंसे निर्मित ३ शक्तिपीठ हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

२३. मिथिला

इस शक्तिपीठका निश्चित स्थान अज्ञात है। मिथिलामें कई ऐसे देवीमन्दिर हैं, जिन्हें लोग शक्तिपीठ बताते हैं। इनमेंसे एक जनकपुर नेपालसे ५१ कि०मी० दूर पूर्वदिशामें उच्चैठ नामक स्थानपर वनदुर्गाका मन्दिर है। दूसरा सहरसा स्टेशनके पास उग्रताराका मन्दिर है। तीसरा समस्तीपुरसे पूर्व ६१ कि०मी० दूर सलौना रेलवे स्टेशनसे ९ कि०मी० दूर जयमङ्गलादेवीका मन्दिर है। उक्त तीनों मन्दिर विद्वज्जनोंद्वारा शक्तिपीठ माने जाते हैं। यहाँ देवीदेहका वाम स्कन्ध

गिरा था। यहाँकी शक्ति 'उमा' या 'महादेवी' और भैरव 'महोदर' हैं। परंतु उग्रतारा मन्दिरके विषयमें मान्यता है कि वहाँ देवी भगवतीका नेत्र-पतन हुआ था। यहाँ एक यन्त्रपर तारा, जटा तथा नीलसरस्वतीकी मूर्तियाँ स्थित हैं।

२४. वैद्यनाथ

वैद्यनाथधाम शिव और शक्तिके ऐक्यका प्रतीक है। यह बिहार राज्यमें गिरिडीह* जनपदमें स्थित है। यहाँ भगवान् शिवके द्वादशज्योतिर्लिङ्गोंमेंसे एक ज्योतिर्लिङ्ग तथा ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक शक्तिपीठ भी स्थित है। यह स्थान चिताभूमिमें है। एक मान्यताके अनुसार शिवने देवीदेहका यहीं दाह-संस्कार किया था। यहाँ देवीदेहका हृदय गिरा था। यहाँकी शक्ति 'जयदुर्गा' और भैरव 'वैद्यनाथ' हैं।

२५. मगध

बिहारकी राजधानी पटनामें स्थित बड़ी पटनेश्वरी देवीके मन्दिरकी शक्तिपीठके रूपमें मान्यता है। यह स्थान पटना सिटी चौकसे लगभग ५ कि०मी० पश्चिम महराजगंजमें है। यहाँ देवीदेहकी दक्षिण जङ्घाका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति 'सर्वानन्दकरी' और भैरव 'व्योमकेश' हैं।

एक मान्यताके अनुसार मुंगेरमें देवीदेहके नेत्रका पतन हुआ था।

उत्तरप्रदेशके शक्तिपीठ

पूर्णा प्रकृतिकी अंशस्वरूपा देवी गङ्गा और यमुनाकी पावन-स्थली, शक्तिस्वरूपा माँ विन्ध्यवासिनीकी निवासस्थली, प्रेममयी वृन्दावनाधीश्वरी श्रीराधारानीकी लीलास्थली और अनन्त ब्रह्माण्डोंका भरण-पोषण करनेवाली माँ अन्नपूर्णाकी कृपास्थली उत्तरप्रदेशकी धरती देवीमय है। यहाँ देवीके अनेक मन्दिर, विग्रह, थान तथा यन्त्रादि प्रतीक हैं। इस भूभागमें देवीके ३ दिव्य शक्तिपीठ हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—

---

* वर्तमानमें यह स्थान बी० देवघरके नामसे प्रसिद्ध है।

२६. वृन्दावन

मथुरा-वृन्दावनके बीच भूतेश्वर नामक रेलवे स्टेशनके समीप भूतेश्वर मन्दिरके प्राङ्गणमें यह शक्तिपीठ अवस्थित है। यह स्थान चामुण्डा कहलाता है। तन्त्रचूडामणिमें इसे मौली शक्तिपीठ माना गया है। यह स्थान महर्षि शाण्डिल्यकी साधना-स्थली भी रही है। यहाँ देवीदेहके केशपाशका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति 'उमा' और भैरव 'भूतेश' हैं।

२७. वाराणसी

मीरघाटपर धर्मेश्वरके समीप विशालाक्षी गौरीका प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ भगवान् विश्वनाथ विश्राम करते हैं और सांसारिक कष्टोंसे पीड़ित मनुष्योंको विश्रान्ति देते हैं—

विशालाक्ष्या महासौधे मम विश्रामभूमिका।
तत्र संसृतिखिन्नानां विश्रामं श्राणयाम्यहम्॥

(काशीखण्ड ७९।७७)

यहाँ देवीदेहकी दाहिनी कर्ण-मणि गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'विशालाक्षी' और भैरव 'कालभैरव' हैं।

२८. प्रयाग

अक्षयवटके निकट ललितादेवीका मन्दिर है, कुछ विद्वान् इसे ही शक्तिपीठ मानते हैं। कुछ विद्वान् अलोपी माताके मन्दिरको शक्तिपीठ मानते हैं, वहाँ भी ललितादेवीका ही मन्दिर है, साथ ही अन्य मान्यताके अनुसार मीरापुरमें ललितादेवीका शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहकी हस्ताङ्गुलि गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'ललिता' और भैरव 'भव' हैं।

राजस्थानके शक्तिपीठ

वीरधर्मा वसुन्धरा—राजस्थानकी आराध्या पराम्बा शक्ति ही हैं, पूरे प्रदेशमें उनके अनेक मन्दिर तथा स्थान हैं। इस भू-भागमें देवीके २ शक्तिपीठ हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—

२९. मणिवेदिक

राजस्थानमें पुष्कर सरोवरके एक ओर पर्वतकी चोटीपर सावित्रीदेवीका मन्दिर है, उसमें सावित्रीदेवीकी तेजोमयी प्रतिमा है। दूसरी ओर दूसरी पहाड़ीकी चोटीपर गायत्रीमन्दिर है, यह गायत्रीमन्दिर ही शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहके मणिबन्ध (कलाइयाँ) गिरी थीं। यहाँकी शक्ति 'गायत्री' और भैरव 'शर्वानन्द' हैं।

३०. विराट

जयपुरसे ६४ कि०मी० उत्तरमें महाभारतकालीन विराट नगरके पुराने खण्डहर हैं, इनके पासमें ही एक गुफा है, जिसे भीमका निवास-स्थान कहा जाता है। अन्य पाण्डवोंकी भी गुफाएँ हैं। पाण्डवोंने वनवासका अन्तिम वर्ष अज्ञातवासके रूपमें यहीं बिताया था। जयपुर तथा अलवर दोनों स्थानोंसे यहाँ आनेके लिये मार्ग हैं। यहींपर वैराट ग्राममें शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहके दायें पैरकी अँगुलियाँ गिरी थीं। यहाँकी शक्ति 'अम्बिका' और भैरव 'अमृत' हैं।

गुजरातके शक्तिपीठ

अन्य प्रदेशोंकी भाँति गुजरात प्रदेश भी शक्ति-साधना एवं उपासनाका केन्द्र है। यहाँ आशापुरा, अभयमाता, सुन्दरी, बुटामाता, अनसूया तथा खोडियार माता आदि अनेक रूपोंमें देवीकी पूजा होती है। यहाँ अनेक प्राचीन देवीमन्दिर हैं। इस प्रदेशमें देवीदेहके अङ्गोंसे निर्मित २ शक्तिपीठ हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—

३१. प्रभास

गुजरातमें गिरनारपर्वतके प्रथम शिखरपर देवी अम्बिकाका विशाल मन्दिर है। एक मान्यताके अनुसार स्वयं जगज्जननी देवी पार्वती हिमालयसे आकर यहाँ निवास करती हैं। इस प्रदेशके ब्राह्मण विवाहके बाद वर-वधूको यहाँ देवीका चरणस्पर्श कराने लाते हैं। अम्बिका (अम्बाजी)-के इस मन्दिरको ही शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ

देवीदेहका उदरभाग गिरा था। यहाँकी शक्ति 'चन्द्रभागा' और भैरव 'वक्रतुण्ड' हैं।

एक अन्य मान्यताके अनुसार गुजरातके अर्बुदारण्यक्षेत्रमें पर्वतशिखरपर सतीके हृदयका एक भाग गिरा था, उसी अङ्गकी पूजा यहाँ आरासुरी अम्बिकाजीके नामसे होती है। यहाँ माताजीका शृङ्गार प्रातः बालारूपमें, मध्याह्न युवतीरूपमें तथा सायं वृद्धारूपमें होता है। माताके विग्रह-स्थानपर बीसायन्त्र मात्र है। यह भी प्रसिद्धि है कि गिरनारके निकट भैरवपर्वतपर सतीका ऊर्ध्व ओष्ठ गिरा था जो भैरव शक्तिपीठके नामसे विख्यात है।

आन्ध्रप्रदेशके शक्तिपीठ

आन्ध्रप्रदेश देवस्थानोंके लिये पूरे भारतमें प्रसिद्ध है। यहाँ शिव, विष्णु, गणेश, कार्तिकेय (सुब्रह्मण्यम्) आदि देवताओंकी उपासना होती है। देवीके भी मन्दिरों और पीठोंकी यहाँ कमी नहीं है। ५१ शक्तिपीठोंमेंसे २ इसी प्रदेशमें अवस्थित हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

३२. गोदावरीतट

आन्ध्रप्रदेशमें गोदावरी स्टेशनके पास गोदावरीके पार कुब्बूरमें कोटितीर्थ है, यह शक्तिपीठ वहीं स्थित है। यहाँ देवीदेहका वाम गण्ड (बायाँ कपोल) गिरा था। यहाँकी शक्ति 'विश्वेशी' या 'रुक्मिणी' और भैरव 'दण्डपाणि' हैं।

३३. श्रीशैल

श्रीशैलमें भगवान् शंकरका मल्लिकार्जुन नामक ज्योतिर्लिङ्ग है। वहाँसे लगभग ४ कि०मी० पश्चिममें भगवती भ्रमराम्बादेवीका मन्दिर है। यह मन्दिर ही शक्तिपीठ है, यहाँ देवीदेहकी ग्रीवाका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति 'महालक्ष्मी' और भैरव 'संवरानन्द' या 'ईश्वरानन्द' हैं।

महाराष्ट्रके शक्तिपीठ

महाराष्ट्रमें भगवत्पूजाका स्वरूप मुख्यतः देवीपरक ही है। तुलजाभवानी इस प्रदेशकी कुलदेवी हैं। मुम्बादेवीके नामपर इस प्रदेशकी राजधानीका नाम मुम्बई है। भगवती जगज्जननी जगदम्बा देवी महालक्ष्मीका नित्य निवास-स्थल कोल्हापुर भी इसी राज्यमें है। कालबादेवी, अम्बाजोगाई, रखुमाई, रेणुकादेवी, शान्तादुर्गा, लपराईदेवी आदि अनेक रूपोंमें यहाँ देवीकी पूजा होती है। इस प्रदेशमें २ शक्तिपीठ हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

३४. करवीर

वर्तमान कोल्हापुर ही पुराणप्रसिद्ध करवीरक्षेत्र है। यहाँ पुराने राजमहलके पास खजानाघर है। उसके पीछे महालक्ष्मीका विशाल मन्दिर है। इसे लोग अम्बाजीका मन्दिर भी कहते हैं। इस मन्दिरके घेरेमें महालक्ष्मीका निज-मन्दिर है। मन्दिरका प्रधान भाग नीले पत्थरोंसे बना है। इसके पासमें ही पद्मसरोवर, काशीतीर्थ और मणिकर्णिकातीर्थ हैं। यहाँ काशीविश्वनाथ, जगन्नाथजी आदि देवमन्दिर हैं। यहाँका महालक्ष्मीमन्दिर ही शक्तिपीठ माना जाता है। देवीदेहके तीनों नेत्र यहाँ गिरे थे। यहाँकी शक्ति 'महिषमर्दिनी' और भैरव 'क्रोधीश' हैं। यहाँ भगवती महालक्ष्मीका नित्य निवास माना गया है। स्कन्दपुराणमें इसकी महिमाका इस प्रकार वर्णन है—

योजनं दश हे पुत्र काराष्ट्रो देशदुर्धरः॥
तन्मध्ये पञ्चक्रोशञ्च काश्याद्यादधिकं भुवि।
क्षेत्रं वै करवीराख्यं क्षेत्रं लक्ष्मीविनिर्मितम्॥
तत्क्षेत्रं हि महत्पुण्यं दर्शनात् पापनाशनम्।
तत्क्षेत्रे ऋषयः सर्वे ब्राह्मणा वेदपारगाः॥
तेषां दर्शनमात्रेण सर्वपापक्षयो भवेत्।

(सह्याद्रिखण्ड उत्तरार्ध २।२४—२७)

अर्थात् पुत्र! काराष्ट्रदेशका विस्तार दस योजन है। यह देश दुर्गम है। उसीके बीच काशी आदिसे भी अधिक पवित्र श्रीलक्ष्मीनिर्मित पाँच कोसका करवीरक्षेत्र है। यह क्षेत्र बड़ा ही पुण्यमय तथा दर्शनमात्रसे पापोंका नाश करनेवाला है। इस क्षेत्रमें वेदपारगामी ब्राह्मण तथा ऋषिगण निवास करते हैं। उनके दर्शनमात्रसे सारे पापोंका क्षय हो जाता है।

३५. जनस्थान

नासिकके पास पञ्चवटीमें स्थित भद्रकालीके मन्दिरकी शक्तिपीठके रूपमें मान्यता है। इस मन्दिरमें शिखर नहीं है। सिंहासनपर नवदुर्गाओंकी मूर्तियाँ हैं, उनके मध्यमें भद्रकालीकी ऊँची मूर्ति है। यहाँ देवीदेहकी ठुड्डी गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'भ्रामरी' और भैरव 'विकृताक्ष' हैं।

मध्य रेलवेकी मुम्बईसे दिल्ली जानेवाली मुख्य लाइनपर नासिक-रोड प्रसिद्ध स्टेशन है, वहाँसे पञ्चवटी ८ कि०मी० दूर है।

कश्मीरके शक्तिपीठ

हिमालयका पवित्र प्रान्त, प्रकृतिका मनोरम लीला-स्थल—कश्मीर, माँ वैष्णवदेवीका निवास-स्थल है। रुद्रयामलतन्त्रमें इसे '**शैवीमुखमिहोच्यते**' शक्ति और शिवके साक्षात्कारका प्रवेशद्वार कहा गया है। इसी हिमालयकी गोदमें जगज्जननी भगवती जगदम्बा देवी पार्वतीके रूपमें अवतीर्ण हुईं, अतः इसकी महिमाका वर्णन भला कौन कर सकता है! यहाँ देवीके २ शक्तिपीठ हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

३६. श्रीपर्वत

इस शक्तिपीठके संदर्भमें दो मान्यताएँ हैं। कुछ विद्वान् इसे लद्दाख कश्मीरमें मानते हैं तो कुछ असमप्रान्तमें सिलहटसे ४ कि०मी० दूर नैर्ऋत्यकोणमें जैनपुर नामक स्थानको शक्तिपीठ मानते हैं। यहाँ देवीदेहका दक्षिण तल्प गिरा था। यहाँकी शक्ति 'श्रीसुन्दरी' और भैरव 'सुन्दरानन्द' हैं।

३७. कश्मीर

कश्मीरमें अमरनाथकी गुफामें भगवान् शिवके हिमज्योतिर्लिङ्गके दर्शन होते हैं, वहीं हिमशक्तिपीठ भी बनता है। एक गणेशपीठ तथा एक पार्वतीपीठ भी हिमसे बनता है। यह पार्वतीपीठ ही शक्तिपीठ है। श्रावण-पूर्णिमाको अमरनाथके दर्शनके साथ-साथ यह शक्तिपीठ भी दिखायी देता है। यहाँ देवीदेहके कण्ठका पतन हुआ था। यहाँ देवी सतीके अङ्ग तथा अङ्गभूषण—कण्ठप्रदेशकी पूजा होती है। यहाँकी शक्ति 'महामाया' और भैरव 'त्रिसन्ध्येश्वर' हैं।

३८. पंजाबका जालन्धर शक्तिपीठ

उत्तर रेलवेकी मुगलसराय-अमृतसर मुख्य लाइनपर पंजाबमें जालन्धर रेलवे-स्टेशन है, यह पंजाबके मुख्य नगरोंमेंसे एक है। एक किंवदन्तीके अनुसार इसे जलन्धर नामक दैत्यकी राजधानी माना जाता है, जिसका भगवान् शंकरने वध किया था।

यहाँ विश्वमुखी देवीका मन्दिर है। इस मन्दिरमें पीठस्थानपर स्तनमूर्ति कपड़ेसे ढकी रहती है और धातुनिर्मित मुखमण्डल बाहर रहता है। इसे प्राचीन त्रिगर्ततीर्थ कहते हैं। यह मन्दिर ही शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहका वाम स्तन गिरा था। यहाँकी शक्ति 'त्रिपुरमालिनी' और भैरव 'भीषण' हैं।

लोगोंका विश्वास है कि इस पीठमें सम्पूर्ण देवी, देवता और तीर्थ अंशरूपमें निवास करते हैं। यहाँ पशुके भी मरनेसे उसे सद्गतिकी प्राप्ति होती है और इसी कारण यहाँ व्यास, वसिष्ठ, मनु, जमदग्नि, परशुराम आदि ऋषि-महर्षियोंने देवीकी उपासना की थी।

३९. उड़ीसाका उत्कल शक्तिपीठ

इस शक्तिपीठके स्थानके विषयमें दो मान्यताएँ हैं। प्रथम मान्यताके अनुसार पुरीमें जगन्नाथजीके मन्दिरके प्राङ्गणमें स्थित विमलादेवीका मन्दिर ही शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहकी नाभि गिरी थी।

यहाँकी शक्ति 'विमला' और भैरव 'जगन्नाथ' हैं।

दूसरी मान्यताके अनुसार याजपुरमें ब्रह्मकुण्डके समीप स्थित विरजादेवीका मन्दिर शक्तिपीठ है, कुछ विद्वान् इसीको नाभिपीठ मानते हैं। मन्दिरमें विरजादेवी तथा उनके वाहन सिंहकी मूर्ति है। देवी द्विभुजा हैं। देवीके प्राकट्यके विषयमें यहाँ एक किंवदन्ती है कि ब्रह्माजीने पहले यहाँ यज्ञ किया था, उसी यज्ञकुण्डसे विरजादेवीका प्राकट्य हुआ। याजपुर हावड़ा–वाल्टेयर लाइनपर वैतरणी–रोड स्टेशनसे लगभग १८ कि०मी० दूर है, स्टेशनसे याजपुरतकके लिये बसकी सुविधा है। याजपुर नाभिगयाक्षेत्र माना जाता है, यहाँ श्राद्ध, तर्पण आदिका विशेष महत्त्व है। उड़ीसाके चार मुख्य स्थानों—पुरी, भुवनेश्वर, कोणार्क और याजपुरमेंसे यह एक मुख्य स्थान है। इसे चक्रक्षेत्र माना जाता है। यहाँ वैतरणी नदी है।

वैतरणी नदीके घाटपर अनेक मन्दिर हैं, जिनमें गणेशमन्दिर और विष्णुमन्दिर प्रसिद्ध हैं। वाराहभगवान्का मन्दिर यहाँका सबसे प्रसिद्ध मन्दिर है, इसमें भगवान् यज्ञवाराहकी मूर्ति है। घाटसे लगभग २ कि०मी०की दूरीपर प्राचीन गरुडस्तम्भ है, इसीके पास विरजादेवीका मन्दिर स्थित है।

४०. हिमाचल प्रदेशका ज्वालामुखी शक्तिपीठ

पठानकोट–योगीन्द्रनगर रेलमार्गपर स्थित ज्वालामुखी–रोड स्टेशनसे लगभग २१ कि०मी० दूर काँगड़ा जिलेमें कालीधर पर्वतकी सुरम्य तलहटीमें ज्वालामुखी शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहकी जिह्वाका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति 'सिद्धिदा' और भैरव 'उन्मत्त' हैं। मन्दिरके अहातेमें छोटी नदीके पुलपरसे जाना होता है। मन्दिरके भीतर पृथ्वीमेंसे मशाल–जैसी ज्योति निकलती है, शिवपुराण तथा देवीभागवतके अनुसार इसीको देवीका ज्वालारूप माना गया है। यहाँ मन्दिरके पीछेकी दीवारके गोखलेसे ४, कोनेमेंसे १, दाहिनी ओरकी दीवारसे १

और मध्यके कुण्डकी भित्तियोंसे ४—इस प्रकार दस प्रकाश निकलते हैं। इनके अतिरिक्त और भी कई प्रकाश मन्दिरकी भित्तिके पिछले भागसे निकलते हैं। इनमेंसे कई स्वतः बुझते और प्रकाशित होते रहते हैं। ये ज्योतियाँ अनादिकालसे जल रही हैं। ज्योतियोंको दूध पिलाया जाता है तो उसमें बत्ती तैरने लगती है और कुछ देरतक नाचती है। यह दृश्य हृदयको बरबस आकृष्ट कर लेता है। ज्योतियोंकी संख्या अधिक-से-अधिक तेरह और कम-से-कम तीन होती है।

देवीमन्दिरके पीछे एक छोटे मन्दिरमें कुआँ है, उसकी दीवारसे दो प्रकाशपुञ्ज निकलते हैं। पासमें दूसरे कुएँमें जल है। उसे लोग गोरखनाथकी डिभी कहते हैं। आस-पास काली देवीके तथा अन्य कई मन्दिर हैं। मन्दिरके सामने जलका कुण्ड है, उससे जल बाहर निकालकर स्नान किया जाता है। नवरात्रमें यहाँ बड़ा मेला लगता है।

४१. असमका कामरूप (कामाख्या) शक्तिपीठ

कालिकापुराण तथा देवीपुराण (महाभागवत)-में ५१ सिद्धपीठोंमें कामरूपको सर्वोत्तम कहा गया है—

'तेषु श्रेष्ठतमः पीठः कामरूपो महामते॥'

(देवीपुराण १२।३०)

ब्रह्मपुत्र नदीके तटपर गुवाहाटीके कामगिरि पर्वतपर भगवती आद्याशक्ति कामाख्यादेवीका पावन पीठ विराजमान है। ये असम प्रान्तमें हैं। यहाँ आनेके लिये छोटी लाइनकी पूर्वोत्तर रेलवेसे अमीनगाँव आना होता है। आगे ब्रह्मपुत्र नदीको स्टीमरसे पार करके मोटरद्वारा लगभग ५ कि०मी० चलकर कामाक्षीदेवी आना होता है। चाहे पाण्डुसे रेलद्वारा गुवाहाटी आकर पुनः कामाक्षीदेवी आ जायँ। कामाक्षीदेवीका मन्दिर पहाड़ीपर है, जो अनुमानसे लगभग २ कि०मी० ऊँची होगी। इस पहाड़ीको नीलपर्वत भी कहते हैं। चिन्मयी आद्याशक्तिका यह पीठ प्राकृतिक सुषमासे सुसज्जित हो कामगिरिको युगोंसे सुशोभित करता

आ रहा है। पौराणिक मान्यताके अनुसार देवीदेहके योनिभागके गिरनेसे इसे 'योनिपीठ' कहा गया है। यहाँकी शक्ति 'कामाख्या' तथा भैरव 'उमानन्द' (उमानाथ) हैं—

'योनिपीठं कामगिरौ कामाख्या यत्र देवता'

यहाँ भगवती कामाख्याकी पूजा-उपासना तन्त्रोक्त आगम-पद्धतिसे की जाती है। दूर-दूरसे आनेवाले यात्री आद्याशक्तिकी पूजा-अर्चा कर मनोवाञ्छित फल प्राप्त करते हैं।

आजकल कामाख्या (कामगिरि) पर्वतपर नीचेसे लेकर ऊपरतक पत्थरका मार्ग बना हुआ है, जिसे 'नरकासुर-पथ' कहा जाता है। यह सीधा मार्ग है। वैसे अब जीप, मोटरद्वारा यात्रा करनेयोग्य घुमावदार सड़क भी बन गयी है।

'नरकासुर-पथ' के विषयमें पुराणोंमें एक कथा आती है—त्रेतायुगमें वराहपुत्र नरकको भगवान् नारायणद्वारा कामरूप-राज्यमें राजाका पद इस निर्देशके साथ प्रदान किया गया कि 'कामाख्या' आद्याशक्ति हैं, अतः इनके प्रति सदैव भक्तिभाव बनाये रखो।' नरक भी श्रीनारायणके निर्देशका यथावत् पालन कर सुखपूर्वक राज्य करता रहा, किंतु बादमें बाणासुरके प्रभावमें आकर वह देवद्रोही 'असुर' बन गया। अब असुर नरकने कामाख्यादेवीके रूप-लावण्यपर मुग्ध हो उनके समक्ष विवाहका अत्यन्त अनुचित आत्मघाती प्रस्ताव रखा। देवीने तत्काल उत्तर दिया—'यदि रात्रिभरमें तुम इस धामका पथ, घाट और मन्दिरका भवन तैयार कर दो तो मैं सहमत हो सकती हूँ।' नरकने देवशिल्पी विश्वकर्माको यह कार्य तत्काल पूर्ण करनेका आदेश दिया। जैसे ही निर्माण-कार्य पूरा होनेको हुआ वैसे ही देवीके चमत्कारसे रात्रि-समाप्ति होनेके पूर्व ही मुर्गेने प्रातःकाल होनेकी सूचक बाँग दे दी। अतएव विवाहकी शर्त ज्यों-की-त्यों पूरी न होनेसे वैसा न हो सका। नरकासुरद्वारा निर्मित वह नरक-पथ आज भी विद्यमान है।

मुख्य मन्दिर, जहाँ महाशक्ति महामुद्रामें शोभायमान हैं, उसे 'कामदेवमन्दिर' नामसे भी पुकारा जाता है। मन्दिरके सम्बन्धमें नरकासुरका नाम सुननेमें कहीं नहीं आता। कहा जाता है कि नरकासुरके अत्याचारोंसे माता कामाख्याके दर्शनमें बाधा पड़ने लगी तो महामुनि वसिष्ठने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया। परिणामस्वरूप यह कामाख्या पीठ लुप्त हो गया। किंतु ईसाकी १६वीं शताब्दीमें राजा विश्वसिंहने भगवतीका स्वर्णमन्दिर निर्मित कराया।

कुछ दिनों बाद कालापहाड़ने इस मन्दिरको ध्वस्त कर दिया था। फिर भी सौभाग्यकी बात है कि राजा विश्वसिंहके पुत्र नरनारायण (भल्लदेव) और उनके अनुज शुक्लध्वजने वर्तमान मन्दिरको बनवा दिया, जैसा कि इस मन्दिरमें लगे शिलालेखसे स्पष्ट होता है।

'पर्वतीया गोसाईं' आजकल इस शक्तिपीठकी पूजा-उपासना करते हैं। नीचे मन्दिरतक जानेके लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। आने-जानेका मार्ग अलग-अलग बना है। महापीठकी प्रचलित पूजा-व्यवस्था आहोम राजाओंकी देन है।

४२. मेघालयका जयन्ती शक्तिपीठ

मेघालय भारतके पूर्वी भागमें स्थित एक पर्वतीय राज्य है। गारो, खासी और जयन्तिया यहाँकी मुख्य पहाड़ियाँ हैं। यहाँकी जयन्ती पहाड़ीको ही शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ देवीदेहकी वाम जङ्घाका पतन हुआ था। यह शक्तिपीठ शिलाङ्गसे ५३ कि०मी० दूर जयन्तिया पर्वतपर वाउरभाग ग्राममें है। यहाँकी शक्ति 'जयन्ती' तथा भैरव 'क्रमदीश्वर' हैं।

४३. त्रिपुराका त्रिपुरसुन्दरी शक्तिपीठ

त्रिपुरा भी भारतके पूर्वी भागका एक राज्य है। यहाँ भगवती राजराजेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका भव्य मन्दिर है, उन्हींके नामपर इस

राज्यका नाम त्रिपुरा पड़ा। इस राज्यके राधाकिशोरपुर ग्रामसे लगभग ३ कि०मी० की दूरीपर नैर्ऋत्यकोणमें पर्वतपर यह शक्तिपीठ स्थित है। यहाँ देवीदेहका दक्षिणपाद गिरा था। यहाँकी शक्ति 'त्रिपुरसुन्दरी' तथा भैरव 'त्रिपुरेश' हैं।

४४. हरियाणाका कुरुक्षेत्र शक्तिपीठ

हरियाणा राज्यके कुरुक्षेत्र नगरमें द्वैपायन सरोवरके पास यह शक्तिपीठ है। यहाँ काली माता और स्थाणु शिवके मन्दिर बने हुए हैं। किंवदन्ती है कि महाभारत युद्धके पूर्व पाण्डवोंने विजयकी कामनासे यहाँ माँ कालीका पूजन और यज्ञ किया था। यहाँ देवीदेहका दक्षिण गुल्फ (दायाँ टखना) गिरा था। यहाँकी शक्ति 'सावित्री' और भैरव 'स्थाणु' हैं।

४५. कालमाधव शक्तिपीठ

यहाँपर देवीदेहका वाम नितम्ब गिरा था। यहाँकी शक्तिको 'काली' तथा भैरवको 'असिताङ्ग' कहा जाता है। इस शक्तिपीठके विषयमें विशेष रूपसे कुछ कहा नहीं जा सकता कि यह कहाँ है। तन्त्रचूडामणिमें इस पीठका इस प्रकार उल्लेख है—

'.... नितम्बः कालमाधवे॥
भैरवश्चासिताङ्गश्च देवी काली सुसिद्धिदा।'

विदेशोंमें शक्तिपीठ*—

नेपालके शक्तिपीठ

नेपालदेश एक स्वतन्त्र हिन्दू-राष्ट्र है। सभ्यता और संस्कृतिकी दृष्टिसे यह भारतसे अभिन्न है। हिन्दुओंके अनेक तीर्थ नेपालमें हैं, जो भारतीयों और नेपालियोंके लिये समानरूपसे श्रद्धास्पद हैं। नेपालमें देवीके दो शक्तिपीठ हैं, उनका विवरण इस प्रकार है—

* बँगलादेशके शक्तिपीठोंका वर्णन प्रारम्भमें दिया गया है।

४६. गण्डकी

यह शक्तिपीठ नेपालमें गण्डकी नदीके उद्गम-स्थलपर स्थित है। यहाँ देवीदेहका दक्षिण गण्ड (दाहिना कपोल) गिरा था। यहाँकी शक्ति 'गण्डकी' तथा भैरव 'चक्रपाणि' हैं।

४७. नेपाल

नेपालमें पशुपतिनाथ मन्दिरसे थोड़ी दूरपर बागमती नदी पड़ती है। नदीके उस पार भगवती गुह्येश्वरीका सिद्ध शक्तिपीठ है। ये नेपालकी अधिष्ठात्री देवी हैं। सारा नेपाल इन गुह्यकालिकादेवीकी अनन्य भक्तिसे वन्दना करता है। नवरात्रमें नेपालके महाराज बागमतीमें स्नानकर सपरिवार भगवतीके दर्शन करने जाते हैं। यहाँका मन्दिर विशाल एवं भव्य है। मन्दिरमें एक छिद्र है, जिसमेंसे निरन्तर जल प्रवाहित होता रहता है। यह मन्दिर ही शक्तिपीठ है। यहाँ देवीदेहके दोनों जानु (घुटने) गिरे थे। यहाँकी शक्ति 'महामाया' तथा भैरव 'कपाल' हैं।

४८. पाकिस्तानका हिंगुला शक्तिपीठ

यह शक्तिपीठ पाकिस्तानके बलूचिस्तान प्रान्तके हिंगलाज नामक स्थानमें है। हिंगलाज कराँचीसे १४४ कि०मी० दूर उत्तर-पश्चिम दिशामें हिंगोस नदीके तटपर है। कराँचीसे फारसकी खाड़ीकी ओर जाते हुए मकरानतक जलमार्ग तथा आगे पैदल जानेपर ७वें मुकामपर चन्द्रकूप है। यह आग उगलता हुआ सरोवर है। इस यात्राका अधिकांश भाग मरुस्थलसे होकर तय करना पड़ता है, जो अत्यन्त दुष्कर होता है। चन्द्रकूपपर प्रत्येक यात्रीको अपने प्रच्छन्न पापोंको जोर-जोरसे कहकर उनके लिये क्षमा माँगनी पड़ती है और आगे न करनेकी शपथ लेनी होती है। आगे १३वें मुकामपर हिंगलाज है। यहीं एक गुफाके अंदर जानेपर हिंगलाजदेवीका स्थान है, जहाँ शक्तिरूप ज्योतिके दर्शन होते हैं। गुफामें हाथ-पैरके बल जाना होता है। यहाँ देवीदेहका ब्रह्मरन्ध्र गिरा था। यहाँकी शक्ति 'कोट्टरी' तथा भैरव 'भीमलोचन' हैं।

पुराणोंमें हिंगुलापीठकी बड़ी महिमा बतायी गयी है। श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणमें वर्णन आया है कि हिमालयके पूछनेपर देवीने अपने प्रिय स्थानोंको बताया, उसमें हिंगुलाको महास्थान कहा गया है— **'हिंगुलाया महास्थानम्।'** इसी प्रकार ब्रह्मवैवर्तपुराणमें कहा गया है कि आश्विनमासमें शुक्लपक्षकी अष्टमीको हिंगुलामें श्रीदुर्गाजीकी प्रतिमाका दर्शन, पूजन और उपवास करनेसे पुनर्जन्मके कष्टका निवारण हो जाता है।

४९. श्रीलंकाका लंका शक्तिपीठ

इस शक्तिपीठमें देवीदेहका नूपुर गिरा था। यहाँकी शक्ति 'इन्द्राक्षी' और भैरव 'राक्षसेश्वर' कहलाते हैं।

५०. तिब्बतका मानस शक्तिपीठ

यह शक्तिपीठ चीन-अधिकृत तिब्बतमें मानसरोवरके तटपर स्थित है। यहाँ देवीदेहकी दायीं हथेली गिरी थी। यहाँकी शक्ति 'दाक्षायणी' और भैरव 'अमर' हैं।

५१. पञ्चसागर शक्तिपीठ

इस पीठके स्थानका निश्चित पता नहीं है। यहाँ देवीदेहके अधोदन्त (नीचेके दाँत) गिरे थे। यहाँकी शक्ति 'वाराही' और भैरव 'महारुद्र' नामसे जाने जाते हैं।

शक्तिपीठ-रहस्य

(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

पौराणिक कथा है कि दक्षके यज्ञमें शिवका निमन्त्रण न होनेसे उनका अपमान जानकर सतीने उस देहको योगबलसे त्याग दिया और हिमवत्पुत्री पार्वतीके रूपमें शिवपत्नी होनेका निश्चय किया। समाचार विदित होनेपर शिवजीको बड़ा क्षोभ और मोह हुआ। वे दक्षयज्ञको नष्ट करके सतीके शवको लेकर घूमते रहे। सम्पूर्ण देवताओंने या

सर्वदेवमय विष्णुने शिवके मोहकी शान्ति एवं साधकोंकी सिद्धि आदि कल्याणके लिये शवके भिन्न-भिन्न अङ्गोंको भिन्न-भिन्न स्थलोंमें गिरा दिया, वे ही ५१ पीठ हुए। ज्ञातव्य है कि योगिनीहृदय एवं ज्ञानार्णवके अनुसार ऊर्ध्वभागके अङ्ग जहाँ गिरे वहाँ वैदिक एवं दक्षिणमार्गकी और हृदयसे निम्न भागके अङ्गोंके पतनस्थलोंमें वाममार्गकी सिद्धि होती है। सतीके विभिन्न अङ्ग कहाँ-कहाँ गिरे और वहाँ कौन-कौनसे पीठ बने, निम्नलिखित हैं—

१-सतीकी योनिका जहाँ पात हुआ, वहाँ कामरूप नामक पीठ हुआ, वह 'अ' कारका उत्पत्तिस्थान एवं श्रीविद्यासे अधिष्ठित है। यहाँ कौलशास्त्रानुसार अणिमादि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। लोमसे उत्पन्न इसके 'वंश' नामक दो उपपीठ हैं, जहाँ शाबर-मन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

२-स्तनोंके पतनस्थलमें काशिकापीठ हुआ और वहाँसे 'आ' कार उत्पन्न हुआ। वहाँ देहत्याग करनेसे मुक्ति प्राप्त होती है। सतीके स्तनोंसे दो धाराएँ निकलीं, वे ही असी और वरणा नदी हुईं। असीके तीरपर 'दक्षिण सारनाथ' एवं वरणाके उत्तरमें 'उत्तर सारनाथ' उपपीठ है। वहाँ क्रमशः दक्षिण एवं उत्तरमार्गके मन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

३-गुह्यभाग जहाँ पतित हुआ, वहाँ नेपालपीठ हुआ। वहाँसे 'इ' कारकी उत्पत्ति हुई। वह पीठ वाममार्गका मूलस्थान है। वहाँ ५६ लाख भैरव-भैरवी, २ हजार शक्तियाँ, ३ सौ पीठ एवं १४ श्मशान संनिहित हैं। वहाँ चार पीठ दक्षिणमार्गके सिद्धिदायक हैं। उनमेंसे भी चारमें वैदिक मन्त्र सिद्ध होते हैं। नेपालसे पूर्वमें मलका पतन हुआ, अतः वहाँ किरातोंका निवास है। वहाँ ३० हजार देवयोनियोंका निवास है।

४-वामनेत्रका पतनस्थान रौद्र पर्वत है, वह महत्पीठ हुआ, वहाँसे 'ई' कारकी उत्पत्ति हुई। वामाचारसे वहाँ मन्त्रसिद्धि होकर देवताका दर्शन होता है।

५-वामकर्णके पतनस्थानमें काश्मीरपीठ हुआ, वह 'उ' कारका

उत्पत्तिस्थान है। वहाँ सर्वविध मन्त्रोंकी सिद्धि होती है। वहाँ अनेक अद्भुत तीर्थ हैं, किंतु कलिमें सब म्लेच्छोंद्वारा आवृत कर दिये गये।

६–दक्षिणकर्णके पतनस्थलमें कान्यकुब्जपीठ हुआ, वहाँ 'ऊ' कारकी उत्पत्ति हुई। गङ्गा–यमुनाके मध्य 'अन्तर्वेदी' नामक पवित्र स्थलमें ब्रह्मादि देवोंने अपने–अपने तीर्थोंका निर्माण किया। वहाँ वैदिक मन्त्रोंकी सिद्धि होती है। कर्णके मलके पतनस्थानमें यमुनातटपर इन्द्रप्रस्थ नामक उपपीठ हुआ, उसके प्रभावसे विस्मृत वेद ब्रह्माको पुनः उपलब्ध हुए।

७–नासिकाके पतनस्थानमें पूर्णगिरिपीठ है, वह 'ऋ' कारका उत्पत्तिस्थल है। वहाँ योगसिद्धि होती है और मन्त्राधिष्ठातृदेव प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं।

८–वामगण्डस्थलकी पतनभूमिपर अर्बुदाचलपीठ हुआ, वहाँ 'ॠ' कारका प्रादुर्भाव हुआ। वहाँ 'अम्बिका' नामकी शक्ति है तथा वाममार्गकी सिद्धि होती है। दक्षिणमार्गमें यहाँ विघ्न होते हैं।

९–दक्षिणगण्डस्थलके पतनस्थानमें आम्रातकेश्वरपीठ हुआ तथा 'ऌ' कारकी उत्पत्ति हुई। वह धनदादि यक्षिणियोंका निवासस्थान है।

१०–नखोंके निपतनस्थलमें एकाम्रपीठ हुआ तथा 'ॡ' कारकी उत्पत्ति हुई। वह पीठ विद्याप्रदायक है।

११–त्रिवलिके पतनस्थलमें त्रिस्रोतपीठ हुआ और वहाँ 'ए' कारका जन्म हुआ। उसके पूर्व, पश्चिम तथा दक्षिणमें वस्त्रके तीन खण्ड गिरे, वे तीन उपपीठ हुए। गृहस्थ द्विजको पौष्टिक मन्त्रोंकी सिद्धि वहाँ होती है।

१२–नाभिके पतनस्थलमें कामकोटिपीठ और वहाँ 'ऐ' कारका प्रादुर्भाव हुआ। समस्त काममन्त्रोंकी सिद्धि वहाँ होती है। उसकी चारों दिशाओंमें चार उपपीठ हैं, जहाँ अप्सराएँ निवास करती हैं।

१३–अङ्गुलियोंके पतनस्थल हिमालयपर्वतपर कैलासपीठ तथा 'ओ' कारका प्राकट्य हुआ। अङ्गुलियाँ ही लिङ्गरूपमें प्रतिष्ठित हुईं।

वहाँ करमालासे मन्त्रजप करनेपर तत्क्षण सिद्धि होती है।

१४-दन्तोंके पतनस्थलमें भृगुपीठ और 'औ' कारका प्रादुर्भाव हुआ। वैदिकादि मन्त्र वहाँ सिद्ध होते हैं।

१५-दक्षिण करतलके पतनस्थानमें केदारपीठ हुआ। वहाँ 'अं' की उत्पत्ति हुई। उसके दक्षिणमें कङ्कणके पतनस्थानमें अगस्त्याश्रम नामक सिद्ध उपपीठ हुआ और उसके पश्चिममें मुद्रिकाके पतनस्थलमें इन्द्राक्षी उपपीठ हुआ। उसके पश्चिममें वलयके पतनस्थानमें रेवतीतटपर राजराजेश्वरी उपपीठ हुआ।

१६-वामगण्डकी निपातभूमिपर चन्द्रपुरपीठ हुआ तथा 'अः' की उत्पत्ति हुई। सभी मन्त्र वहाँ सिद्ध होते हैं।

१७-जहाँ मस्तकका पतन हुआ, वहाँ 'श्रीपीठ' हुआ तथा 'क' कारका प्रादुर्भाव हुआ। कलिमें पापी जीवोंका वहाँ पहुँचना दुर्लभ है। उसके पूर्वमें कर्णाभरणके पतनसे उपपीठ हुआ, जहाँ ब्रह्मविद्याप्रकाशिका ब्राह्मीशक्तिका निवास है। उससे अग्निकोणमें कर्णार्धाभरणके पतनसे दूसरा उपपीठ हुआ, जहाँ मुखशुद्धिकरी माहेश्वरीशक्ति है। दक्षिणमें पत्रवल्लीकी पातभूमिमें कौमारीशक्तियुक्त तीसरा उपपीठ हुआ। नैर्ऋत्यमें कण्ठमालके निपातस्थलमें ऐन्द्रजालविद्यासिद्धिप्रद वैष्णवीशक्तिसमन्वित चौथा उपपीठ हुआ। पश्चिममें नासामौक्तिकके पतनस्थानमें वाराहीशक्त्यधिष्ठित पाँचवाँ उपपीठ हुआ। वायुकोणमें मस्तकाभरणके पतनस्थानमें चामुण्डा-शक्तियुक्त क्षुद्रदेवतासिद्धिकर छठा उपपीठ हुआ और ईशानमें केशाभरणके पतनसे महालक्ष्मीद्वारा अधिष्ठित सातवाँ उपपीठ हुआ।

१८-उसके ऊपरमें कंचुकीकी पतनभूमिमें एक और पीठ हुआ, जो ज्योतिर्मन्त्रप्रकाशक एवं ज्योतिष्मतीद्वारा अधिष्ठित है। वहाँ 'ख' कारका प्रादुर्भाव हुआ। वह पीठ नर्मदाद्वारा अधिष्ठित है, वहाँ तप करनेवाले महर्षि जीवन्मुक्त हो गये।

१९-वक्षःस्थलके पातस्थलमें एक पीठ और 'ग' कारकी

उत्पत्ति हुई। अग्निने वहाँ तपस्या की और देवमुखत्वको प्राप्त होकर ज्वालामुखीसंज्ञक उपपीठमें स्थित हुए।

२०-वामस्कन्धके पतनस्थानमें मालवपीठ हुआ, वहाँ 'घ' कारकी उत्पत्ति हुई। गन्धर्वोंने राग-ज्ञानके लिये तपस्या कर वहाँ सिद्धि पायी।

२१-दक्षिणकक्षका जहाँ पात हुआ, वहाँ कुलान्तक पीठ हुआ एवं 'ङ' कारकी उत्पत्ति हुई। विद्वेषण, उच्चाटन, मारणके प्रयोग वहाँ सिद्ध होते हैं।

२२-जहाँ वामकक्षका पतन हुआ, वहाँ कोट्टकपीठ हुआ और 'च' कारका प्राकट्य हुआ। वहाँ राक्षसोंने सिद्धि प्राप्त की है।

२३-जठरदेशके पतनस्थलमें गोकर्णपीठ हुआ तथा 'छ' कारकी उत्पत्ति हुई।

२४-त्रिवलियोंमेंसे जहाँ प्रथम वलिका निपात हुआ, वहाँ मातुरेश्वरपीठ होकर 'ज' कारकी उत्पत्ति हुई, वहाँ शैवमन्त्र शीघ्र सिद्ध होते हैं।

२५-अपर वलिके पतनस्थानमें अट्टहासपीठ हुआ तथा 'झ' कारका प्रादुर्भाव हुआ, वहाँ गणेशमन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

२६-तीसरी वलिका जहाँ पतन हुआ, वहाँ विरजपीठ हुआ और 'ञ' कारकी उत्पत्ति हुई। यह पीठ विष्णुमन्त्रोंके लिये विशेष सिद्धिप्रदायक है।

२७-जहाँ वस्तिका पात हुआ, वहाँ राजगृहपीठ हुआ तथा 'ट' कारकी उत्पत्ति हुई। नीचे क्षुद्रघण्टिकाके पतनस्थलमें घण्टिका नामक उपपीठ हुआ, वहाँ ऐन्द्रजालिक मन्त्र सिद्ध होते हैं। राजगृहमें वेदार्थज्ञानकी प्राप्ति होती है।

२८-नितम्बके पतनस्थलमें महापथपीठ हुआ तथा 'ठ' कारकी उत्पत्ति हुई। जातिदुष्ट ब्राह्मणोंने वहाँ शरीर अर्पित किया और दूसरे जन्ममें कलियुगमें देहसौख्यदायक वेदमार्गप्रलुम्पक अघोरादि मार्गको चलाया।

२९-जहाँ जघनका पात हुआ, वहाँ कौलगिरिपीठ हुआ और 'ड' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ वन-देवताओंके मन्त्रोंकी सिद्धि शीघ्र होती है।

३०-दक्षिण ऊरुके पतनस्थलमें एलापुरपीठ हुआ तथा 'ढ' कारका प्रादुर्भाव हुआ।

३१-वाम ऊरुके पतनस्थानमें महाकालेश्वरपीठ हुआ तथा 'ण' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ आयुर्वृद्धिकारक मृत्युञ्जयादि मन्त्र सिद्ध होते हैं।

३२-दक्षिणजानुके पतनस्थानमें जयन्तीपीठ हुआ तथा 'त' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ धनुर्वेदकी सिद्धि अवश्य होती है।

३३-वामजानु जहाँ पतित हुआ, वहाँ उज्जयिनीपीठ हुआ तथा 'थ' कार प्रकट हुआ, वहाँ कवचमन्त्रोंकी सिद्धि होकर रक्षण होता है। अतः उसका नाम 'अवन्ती' है।

३४-दक्षिणजङ्घाके पतनस्थानमें योगिनीपीठ हुआ तथा 'द' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ कौलिक मन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

३५-वामजङ्घाकी पतनभूमिपर क्षीरिकापीठ हुआ तथा 'ध' कारका प्रादुर्भाव हुआ। वहाँ वैतालिक एवं शाबर-मन्त्र सिद्ध होते हैं।

३६-दक्षिणगुल्फके पतनस्थानमें हस्तिनापुरपीठ हुआ तथा 'न' कारकी उत्पत्ति हुई। वहीं नूपुरका पतन होनेसे नूपुरार्णवसंज्ञक उपपीठ हुआ, वहाँ सूर्यमन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

३७-वामगुल्फके पतनस्थलमें उड्डीशपीठ हुआ तथा 'प' कारका प्रादुर्भाव हुआ। उड्डीशाख्य महातन्त्र वहाँ सिद्ध होता है। जहाँ दूसरे नूपुरका पतन हुआ, वहाँ डामर उपपीठ हुआ।

३८-देहरसके पतनस्थानमें प्रयागपीठ हुआ तथा 'फ' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँकी मृत्तिका श्वेतवर्णकी दृष्टिगोचर होती है। वहाँ अन्यान्य अस्थियोंका पतन होनेसे अनेक उपपीठोंका प्रादुर्भाव हुआ। गङ्गाके पूर्वमें बगला उपपीठ एवं उत्तरमें चामुण्डादि उपपीठ, गङ्गा-यमुनाके मध्य राजराजेश्वरीसंज्ञक तथा यमुनाके दक्षिण तटपर भुवनेशी

नामक उपपीठ हुए। इसीलिये प्रयागको 'तीर्थराज' एवं 'पीठराज' कहा गया है।

३९-दक्षिणपृष्णिके पतनस्थानमें षष्ठीशपीठ हुआ एवं वहाँ 'ब' कारका प्रादुर्भाव हुआ। यहाँ पादुकामन्त्रकी सिद्धि होती है।

४०-वामपृष्णिका जहाँ पात हुआ, वहाँ मायापुरपीठ हुआ तथा 'भ' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ समस्त मायाओंकी सिद्धि होती है।

४१-रक्तके पतनस्थानमें मलयपीठ हुआ एवं 'म' कारकी उत्पत्ति हुई। रक्ताम्बरादिक बौद्धोंके मन्त्र यहाँ सिद्ध होते हैं।

४२-पित्तकी पतनभूमिपर श्रीशैलपीठ हुआ तथा 'य' कारका प्रादुर्भाव हुआ। विशेषतः वैष्णवमन्त्र यहाँ सिद्ध होते हैं।

४३-मेदके पतनस्थानमें हिमालयपर मेरुपीठ हुआ एवं 'र' कारकी उत्पत्ति हुई। यहाँ स्वर्णाकर्षण भैरवकी सिद्धि होती है।

४४-जहाँ जिह्वाग्रका पतन हुआ, वहाँ गिरिपीठ हुआ तथा 'ल' कारकी उत्पत्ति हुई। यहाँ जप करनेसे वाक्सिद्धि होती है।

४५-मज्जाके पतनस्थानमें माहेन्द्रपीठ हुआ, वह 'व' कारके प्रादुर्भावका स्थान है। यहाँ शाक्तमन्त्रोंके जपसे सिद्धि अवश्य होती है।

४६-दक्षिणअङ्गुष्ठके पातस्थलमें वामनपीठ हुआ एवं 'श' कारकी उत्पत्ति हुई। यहाँ समस्त मन्त्रोंकी सिद्धि होती है।

४७-वामाङ्गुष्ठके निपतनस्थानमें हिरण्यपुरपीठ हुआ तथा 'ष' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ वाममार्गसे सिद्धिलाभ होता है।

४८-रुचि (शोभा)-के पतनस्थानमें महालक्ष्मीपीठ हुआ एवं 'स' कारका प्राकट्य हुआ। यहाँ सर्वसिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

४९-धमनीके पतनस्थलमें अत्रिपीठ हुआ तथा 'ह' कारकी उत्पत्ति हुई। वहाँ यावत् सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

५०-छायाके सम्पातस्थानमें छायापीठ हुआ एवं 'ळ' कारकी उत्पत्ति हुई।

५१-केशपाशके पतनस्थलमें क्षत्रपीठका प्रादुर्भाव हुआ, यहीं

‘क्ष’ कारका उद्गम हुआ। यहाँ समस्त सिद्धियाँ शीघ्रतापूर्वक उपलब्ध होती हैं।

वर्णमालाएँ

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, ॡ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। क, ख, ग, घ, ङ। च, छ, ज, झ, ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न। प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ, क्ष—यही ५१ अक्षरकी वर्णमाला है। यहाँ अन्तिम अक्षर ‘क्ष’ अक्ष-मालाका सुमेरु है। इसी मालाके आधारपर सतीके भिन्न-भिन्न अङ्गोंका पात हुआ है। इससे निष्कर्ष यह निकला कि इतनी भूमि वर्ण-समाम्नायस्वरूप ही है। भिन्न-भिन्न वर्णोंकी शक्तियाँ और देवता भिन्न-भिन्न हैं। इसीलिये उन-उन वर्णों, पीठों, शक्तियों एवं देवताओंका परस्पर सम्बन्ध है, जिसके ज्ञान और अनुष्ठानसे साधकको शीघ्र ही सिद्धि होती है। (शारदातिलक)

मायाद्वारा ही परब्रह्मसे विश्वकी सृष्टि होती है। सृष्टि हो जानेपर भी उसके विस्तारकी आशा तबतक नहीं होती, जबतक चेतन पुरुषकी उसमें आसक्ति न हो। अतएव सृष्टिविस्तारके लिये कामकी उत्पत्ति हुई। रजः-सत्त्वके सम्बन्धसे द्वैतसृष्टिका विस्तार होता है, किंतु तमस् कारणरूप है, वहाँ द्वैतदर्शनकी कमीसे मोहकी कमी होती है। सत्त्वमय सूक्ष्मकार्यरूप विष्णु एवं रजोमय स्थूलकार्यरूप ब्रह्माके मोहित हो जानेपर भी कारणात्मा शिव मोहित नहीं होते, किंतु जबतक कारणमें मोह नहीं, तबतक सृष्टिकी पूर्ण स्थिति भी सम्भव नहीं होती। इसीलिये स्थूल-सूक्ष्म कार्यचैतन्योंकी ऐसी रुचि हुई कि कारण-चैतन्य भी मोहित हो, किंतु वह अघटित-घटना-पटीयसी महामायाके ही वशकी बात है। इसीलिये सबने उसीकी आराधना की। देवी प्रसन्न हुईं, वे अपने पतिको स्वाधीन करना चाहती थीं। स्वाधीनभर्तृका ही स्त्री परम सौभाग्यशालिनी होती है। वही हुआ। महामायाने शिवको स्वाधीन कर लिया, फिर भी पिताद्वारा पतिका

अपमान होनेपर उन्होंने उस पितासे सम्बद्ध शरीरको त्याग देना ही उचित समझा। महाशक्तिका शरीर उनका लीलाविग्रह ही है। जैसे निर्विकार चैतन्य शक्तिके योगसे साकार विग्रह धारण करता है, वैसे ही शक्ति भी अधिष्ठान-चैतन्ययुक्त साकार विग्रह धारण करती है। इसीलिये शिव-पार्वती दोनों मिलकर अर्धनारीश्वरके रूपमें व्यक्त होते हैं। अधिष्ठान-चैतन्यसहित महाशक्तिका उस लीला-विग्रह—सती-शरीरसे तिरोहित हो जाना ही सतीका मरना है।

प्राणीकी तपस्या एवं आराधनासे ही शक्तिको जन्म देनेका एवं उसे परमेश्वरसे सम्बन्धित कर अपनेको कृतकृत्य करनेका सौभाग्य प्राप्त होता है। किंतु यदि बीचमें प्रमादसे अहंकार उत्पन्न हो जाता है तो शक्ति उससे सम्बन्ध तोड़ लेती है और फिर उसकी वही स्थिति होती है, जो दक्षकी हुई। सतीका शरीर यद्यपि मृत हो गया, तथापि वह महाशक्तिका निवासस्थान था। श्रीशंकर उसीके द्वारा उस महाशक्तिमें रत थे, अतः मोहित होनेके कारण भी फिर उसको छोड़ न सके। यद्यपि परमेश्वर सदा स्वरूपमें ही प्रतिष्ठित होते हैं, फिर भी प्राणियोंके अदृष्टवश उनके कल्याणके लिये सृष्टि, पालन, संहरण आदि कार्योंमें प्रवृत्त-से प्रतीत होते हैं। उन्हींके अनुरूप महामायामें उनकी आसक्ति और मोहकी भी प्रतीति होती है। इसी मोहवश शंकर महाशक्तिके अधिष्ठानभूत उस प्रिय देहको लेकर घूमने लगे।

देवताओं और विष्णुने मोह मिटानेके लिये उस देहको शिवसे वियुक्त करना चाहा। साथ ही अनन्त शक्तियोंकी केन्द्रभूता महाशक्तिके अधिष्ठानभूत उस देहके अवयवोंसे लोकका कल्याण हो, यह भी सोचकर भिन्न-भिन्न शक्तियोंके अधिष्ठानभूत भिन्न-भिन्न अङ्ग जिन-जिन स्थानोंमें पड़े, वहाँ उन-उन शक्तियोंकी सिद्धि सरलतासे होती है। जैसे कपोत और सिंहके मांस आदिकोंमें भी उनकी भिन्न विशेषता प्रकट होती है, वैसे ही सतीके भिन्न-भिन्न अवयवोंमें भी उनकी विशेषता प्रकट होती है। इसीलिये जैसे हिङ्गुके निकल जानेपर भी

उसके अधिष्ठानमें उसकी गन्ध या वासना रहती है, वैसे ही सतीकी महाशक्तियोंके अन्तर्हित होनेपर भी उन अधिष्ठानोंमें वह प्रभाव रह गया है। जैसे सूर्यकान्तमणिपर सूर्यकी रश्मियोंका सुन्दर प्राकट्य होता है, वैसे ही उन शक्तियोंके अधिष्ठानभूत अङ्गोंमें उनका प्राकट्य बहुत सुन्दर होता है। यहाँतक कि जहाँ-जहाँ उन अङ्गोंका पात हुआ, वे स्थान भी दिव्य शक्तियोंके अधिष्ठान माने जाते हैं। वहाँ भी शक्तितत्त्वका प्राकट्य अधिक है। अतएव उन पीठोंपर शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है। अङ्गसम्बन्धी कोई अंश या भूषण-वसनादिका जहाँ पात हुआ, वही उपपीठ है। उनमें भी उन-उन विशेष शक्तितत्त्वोंका आविर्भाव होता है। अनन्त शक्तियोंकी केन्द्रभूता महाशक्तिका जो अधिष्ठान हो चुका है, उसमें एवं तत्सम्बन्धी समस्त वस्तुओंमें शक्तितत्त्वका बाहुल्य होना ही चाहिये। वैसे तो जहाँ भी, जिस-किसी भी वस्तुमें जो भी शक्ति है, उन सभीका अन्तर्भाव महामायामें ही है—

यच्च किंचित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा॥

(दुर्गासप्तशती)

अपनी-अपनी योग्यता और अधिकारके अनुसार इष्ट देवता, मन्त्र, पीठ, उपपीठके साथ सम्बन्ध जोड़नेसे सिद्धिमें शीघ्रता होती है। तथा च—

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दरूपं यदक्षरम्।
प्रवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥

(वाक्यपदीय)

—आदि वचनोंके अनुसार प्रणवात्मक ब्रह्म ही निखिल विश्वका उपादान है। वही शक्तिमय सती-शरीररूपमें और निखिल वाङ्मय-प्रपञ्चके मूलभूत एकपञ्चाशत् वर्णरूपमें व्यक्त होता है। जैसे निखिल विश्वका शक्तिरूपमें ही पर्यवसान होता है, वैसे ही वर्णोंमें ही सकल वाङ्मय-प्रपञ्चका अन्तर्भाव होता है; क्योंकि सभी शक्तियाँ वर्णोंकी

आनुपूर्वीविशेष मात्र हैं। शब्द-अर्थका, वाच्य-वाचकका असाधारण सम्बन्ध किंबहुना अभेद ही है, अतएव एकपञ्चाशत् वर्णोंके कार्यभूत सकल वाङ्मयप्रपञ्चका जैसे एकपञ्चाशत् वर्णोंमें अन्तर्भाव किया है, वैसे ही वाङ्मयप्रपञ्चके वाच्यभूत सकल अर्थमय प्रपञ्चका उसके मूलभूत एकपञ्चाशत् शक्तियोंमें अन्तर्भाव करके वाच्य-वाचकका अभेद प्रदर्शित किया गया है। यही ५१ पीठोंका रहस्य है।

शक्ति—सर्वस्वरूपिणी है

(अनन्तश्रीविभूषित दक्षिणाम्नायस्थ शृङ्गेरीशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीभारतीतीर्थजी महाराज)

वेदोपनिषत् पुराणेतिहासादि ग्रन्थोंमें सर्वत्र देवीकी अखण्ड और अपार महिमाका विवरण—वर्णन पाया जाता है, जिससे स्पष्ट होता है कि शक्ति सृष्टिकी मूल नाडी है, चेतनाका प्रवाह है और सर्वव्यापी है। शक्तिकी उपासना आजकी उपासना नहीं है; वह अत्यन्त प्राचीन है बल्कि अनादि है। भगवत्पाद श्रीशङ्कराचार्यजीने 'सौन्दर्यलहरी' में हमारा ध्यान इस ओर आकर्षित किया है और कहा है—'शिव जब शक्तिसे युक्त होता है तब वह सृष्टि-निर्माण-समर्थ होता है, अन्यथा उसमें स्पन्दनतक सम्भव नहीं है। अतएव हरि-हर-ब्रह्मादिसे आराध्या तुम्हारी नति या स्तुति पुण्यहीन व्यक्तिसे कैसे सम्भव हो सकती है?'—

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं
न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि।
अतस्त्वामाराध्यां हरिहरविरिञ्चादिभिरपि
प्रणन्तुं स्तोतुं वा कथमकृतपुण्यः प्रभवति॥

मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत श्रीदुर्गासप्तशतीमें भगवतीकी स्तुति करते हुए देवता कहते हैं—

विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।
त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्
का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः॥

'सभी विद्याएँ देवीके ही भेद हैं; संसारमें जो भी स्त्रियाँ हैं, वे सब देवीके ही रूप हैं। समस्त संसारमें व्याप्त एक ही तत्त्व है, वह है देवीतत्त्व या शक्तितत्त्व। भगवति! इससे बढ़कर स्तुति करनेके लिये और रखा भी क्या है?'

ऋग्वेदके देवीसूक्तमें देवीकी सर्वव्यापकताका वर्णन है। रुद्र, वसु, आदित्य, विश्वेदेव, मित्रावरुण, इन्द्र, अग्नि, सोम, त्वष्टा, पूषा तथा भग आदि—इन सबमें देवीकी ही शक्ति है अर्थात् देवीकी कला ही इन रूपोंमें व्यक्त जानकर जो देवीकी आराधना करते हैं या उनको हविष् प्रदान करते हैं उनको देवी धनधान्यसम्पन्न करती हैं—

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा॥
अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम्।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते॥

देव्युपनिषत्‌में भी इसी प्रकारका वर्णन है। सभी देवताओंने देवीकी सेवामें पहुँचकर पूछा—'तुम कौन हो महादेवि?' उत्तरमें महादेवीने कहा —'मैं' ब्रह्मस्वरूपिणी हूँ। मेरे ही कारण प्रकृतिपुरुषात्मक यह जगत् है, शून्य और अशून्य भी। मैं आनन्द और अनानन्द हूँ। विज्ञान और अविज्ञानमें मैं ही हूँ। मुझे ही ब्रह्म और अब्रह्म समझना चाहिये। इस प्रकार अथर्वणश्रुति कह रही है। मैं पञ्चभूत हूँ और अपञ्चभूत भी। मैं सारा संसार हूँ। मैं वेद और अवेद हूँ। मैं विद्या और अविद्या हूँ। मैं अजा हूँ, अनजा हूँ। मैं अध-ऊर्ध्व और तिर्यक् हूँ। रुद्रोंमें, आदित्योंमें, विश्वेदेवोंमें मैं ही संचरित रहती हूँ। मित्रावरुण, इन्द्र,

अग्नि, अश्विनी कुमार—इन सबको धारण करनेवाली मैं ही हूँ। मैं ही उरुविक्रम विष्णुको, ब्रह्माको और प्रजापतिको धारण करती हूँ। मैं उपासक या याजक यजमानको धन देनेवाली हूँ।'

यह महादेवी या महाशक्ति है, यही पराशक्ति है, आदिशक्ति है। यही आत्मशक्ति है और यही विश्वविमोहिनी है। उस उपनिषद्में कहा गया है—

एषात्मशक्तिः। एषा विश्वमोहिनी पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा। एषा श्रीमहाविद्या। य एवं वेद स शोकं तरति।

तापत्रय मुक्तिके लिये, भवबन्ध-विमोचनके लिये उसी शक्तिकी आराधना करनी चाहिये, उसीकी शरणमें जाना चाहिये। जो व्यक्ति इस तत्त्वको जानता है, वह अपने आत्मोद्धारका मार्ग प्रशस्त करता है तथा शोक-मोहादि उसके लिये कुछ नहीं होता।

सभी देवताओंकी कारणभूता सनातनी वही होनेके कारण वह सर्वदेवमयी है। वही सत्त्व-रज-तम-स्वरूपा है। वह पापहारिणी एवं भुक्ति-मुक्ति प्रदायिनी है। अनन्तविजया, शुद्धा और शिवा वही शरण्या है। वह सर्वत्र एक ही रहती है, अतएव एका है। वह विश्वरूपिणी है, अतएव नैका (न एका) है। इन शब्दोंमें हम उस शक्तिकी वन्दना करते हैं—

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी।
ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी।
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता॥
दुर्गात्संत्रायते यस्माद् देवी दुर्गेति कथ्यते
प्रपद्ये शरणं देवीं दुं दुर्गे दुरितं हर।
तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम्।
नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम्॥

यह तो स्पष्टोक्ति है दुःखदारिद्र्यशमन करनेवाली, भवभीतिसे

युक्त व्यक्तिका उद्धार करनेवाली, सर्व मन्त्रोंकी मातृका, सर्व शब्दोंकी ज्ञानरूपिणी, चिन्मयी, परमानन्दस्वरूपा और समस्त दुराचारोंकी विध्वंसिका उस शक्तिको पदे-पदे नमस्कार करना चाहिये। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि शिव-शक्तिकी समानता है। पुराणोंमें कथा है कि जो केवल शिव या विष्णुकी उपासना करते हैं और शक्तिकी पूजा नहीं करते, वे शापग्रस्त हो जाते हैं। त्रिपुरोपनिषद् (१४)-में कहा गया है—भगवान् शक्तियुक्त होकर जगत्के विधाता, धर्ता, हर्ता और विश्वरूपत्वको प्राप्त होते हैं—

भगः शक्तिर्भगवान् काम ईश उभा दाताराविह सौभगानाम्।
समप्रधानौ समसत्त्वौ समोजौ तयोः शक्तिरजरा विश्वयोनिः॥

इस जगत्में जो कुछ देखा जाता है, वह केवल चिन्निष्पन्दांश है। चितिके अतिरिक्त अन्य वस्तुकी सम्भावना नहीं है जो शाश्वतरूपसे रहे। अतएव समाहित चित्तसे, नित्य तृप्तभावसे तथा समाधिनिष्ठासे उस पराशक्तिके दर्शनका प्रयास करना चाहिये। अन्नपूर्णोपनिषद्में कहा गया है—

यावत्सर्वं न सन्त्यक्तं तावदात्मा न लभ्यते।
सर्ववस्तुपरित्यागे शेष आत्मेति कथ्यते॥
आत्मावलोकनार्थं तु तस्मात्सर्वं परित्यजेत्।
सर्वं सन्त्यज्य दूरेण यच्छिष्टं तन्मयो भव॥
सर्वं किञ्चिदिदं दृश्यं दृश्यते यज्जगद्गतम्।
चिन्निष्पन्दांशमात्रं तन्नान्यत्किञ्चन शाश्वतम्॥

(१।४५—४७)

विष्णु, शिव और ललिताकी सहस्रनामावलि लोकमें अधिक प्रसिद्ध है। ये नामावलियाँ मोक्षफलकारक हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। 'विष्णुसहस्रनाम' में यह बताया गया है कि जो लोग समयाभाव या किसी कारणसे शीघ्र ही सहस्रनामपाठका फल पाना चाहते हैं वे तीन बार राम-नामका जप करेंगे तो यथोक्त फलके अधिकारी होंगे।

शिवजीकी उक्ति पार्वतीके प्रति है—

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥

ललितासहस्रनामकी उत्तरपीठिका (भाग)-में ललितासहस्रनामकी दिव्य महिमाकी चर्चा करते हुए बताया गया है कि विष्णुके सहस्रनामसे शिवका एक नाम उत्तम है और शिवके सहस्रनामसे भी बढ़कर है देवी ललिताके एक नामका उच्चारण। इससे शक्तिकी सर्वश्रेष्ठता और माहात्म्यको समझा जा सकता है—

विष्णुनामसहस्राच्च नामैकं शैवमुत्तमम्।
शिवनामसहस्राच्च देव्या नामैकमुत्तमम्॥

कभी ऐसा अर्थ ग्रहण नहीं करना चाहिये कि हम विष्णु या शिवके सहस्रनामकी महिमा घटाकर बता रहे हैं। शक्तितत्त्वकी परमोच्चताके निरूपणकी दृष्टिसे अगस्त्यके प्रति भगवान् हयग्रीवके वचनकी ओर हम ध्यान आकृष्ट कर रहे हैं।

हमारे ऋषि-मुनियोंने प्राचीन कालसे मन्त्रोंके जपका जो विधान रखा है उसमें हम देवी-शक्तिको अविस्मृत करनेकी परम्परा देखते हैं। प्राय: सभी देवोंके मन्त्रोंके ध्यान श्लोकोंमें शक्तितत्त्वका भी स्मरण देखा जाता है।

उदाहरणके लिये शिवध्यानके श्लोकमें शिवके स्वरूपका निरूपण करनेके बाद पार्वतीका स्मरण किया जाता है, लेकिन कैसे? इस रूपमें—

शान्तं पद्मासनस्थं शशधरमुकुटं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं
शूलं वज्रं च खड्गं परशुमभयदं दक्षभागे वहन्तम्।
नागं पाशं च घण्टां प्रलयहुतवहं साङ्कुशं वामभागे
नानालङ्कारयुक्तं स्फटिकमणिनिभं पार्वतीशं नमामि॥

शिवसहस्रनामपारायणके पूर्व यह पढ़ा जाना चाहिये—

कोटिसूर्यप्रकाशं त्रिनेत्रं चन्द्रभूषणम्।

शूलं खड्गगदाशुभ्रकुन्तपाशधरं विभुम्॥
वरदाभयहस्तं च सर्वाभरणभूषितम्।
एवं ध्यात्वाऽर्चयेद्देवं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः॥
पार्वतीसहितं ध्यात्वा पूजयेत्परमेश्वरम्।

विष्णुसहस्रनामपारायणके अवसरपर पढ़े जानेवाले इस ध्यान श्लोकमें भी शक्तितत्त्वका स्मरण किया गया है—

शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं
विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम्।
लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं
वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम्॥

विष्णुसहस्रनाम हो या शिवसहस्रनाम—नामावलिमें हम शक्तितत्त्वका स्मरण दिलानेवाले नामोंको अवश्य देखते हैं। यथा 'विष्णुसहस्रनाम' में—

(१) '**महेष्वासो महीभर्ता श्रीनिवासः सतां गतिः।**' (३३)
(२) '**सर्वलक्षणलक्षण्यो लक्ष्मीवान् समितिञ्जयः।**' (५२)
(३) '**श्रीवत्सवक्षाः श्रीवासः श्रीपतिः श्रीमतां वरः।**' (७७)
(४) **श्रीदः श्रीशः श्रीनिवासः श्रीनिधिः श्रीविभावनः।**
श्रीधरः श्रीकरः श्रेयः श्रीमाँल्लोकत्रयाश्रयः॥ (७८)

'शिवसहस्रनाम' में शक्तिका स्मरण किया गया है—

(१) '**दशबाहुस्त्वनिमिषो नीलकण्ठ उमापतिः।**'
(महा०अनु० १७। ४१)

(२) '**उमापतिरुमाकान्तो जाह्नवीधृदुमाधवः।**'
(महा०अनु० १७। १३७)

शक्तिपारम्यके विषयमें पुराणोंमें अनेक कथाएँ हैं। देवीभागवतमें देवीकी असीम, अपरिमेय शक्तिकी कथाका वर्णन है। केनोपनिषद्के द्वितीय खण्डमें ब्रह्मकी जो कथा है, वह देवीशक्तिके माहात्म्यका उद्घाटन करती है। पराशक्तिकी ही कृपासे इन्द्रादि देवता असुरोंको हराकर जब

विजयी हुए तब अहं भावके कारण वे समझने लगे कि उनकी विजयका कारण उनकी ही वीरता है। अहं भाव प्रगतिका बाधक है। अहं भाव पतनका हेतु होता है और उससे आत्मसाक्षात्कार किंवा ब्रह्मसाक्षात्कार नहीं होता। इन्द्रादिको पतनसे बचानेके लिये दैवी शक्ति, जिसे ब्रह्म कहिये, तेजोरूपमें उनके सामने प्रकट हुई। यह तेजोरूप यक्षके रूपमें था। यह यक्ष कौन है? ब्रह्मा है, विष्णु है या शंकर है? देवता जान न सके। जिज्ञासाको शान्त करनेके लिये इन्द्रने पहले अग्निको बुलाकर कहा कि यह जानो कि यह यक्ष कौन है? अर्थात् यह तेजोरूप क्या है? अग्निदेव यक्षके पास जाकर क्या बोलना चाहिये—यह समझमें न आनेके कारण चुप रहे तो यक्षने पूछा कि तुम कौन हो? तब उन्होंने कहा कि मुझे 'अग्नि' अथवा 'जातवेद' ऐसा कहते हैं। यक्षने पुनः प्रश्न किया कि तुममें क्या बल है? उत्तरमें अग्निने कहा कि मैं पृथ्वीमें जो कुछ है सबको अर्थात् जगत्को जला सकता हूँ। यक्षने उसके सामने एक तृण रखकर कहा कि इसको जला दो। अग्निदेव अपनी सर्वशक्ति लगाकर भी उस तृणको जला न सके तो उनका गर्व भंग हो गया। लज्जित होकर उन्होंने अपना रास्ता नाप लिया।

तत्पश्चात् इन्द्रकी आज्ञासे वायुदेव यक्षके सामने पहुँचे तो यक्षने प्रश्न किया कि तुम कौन हो? और तुममें क्या शक्ति है? वायुने अपने पराक्रमका बखान करते हुए कहा कि इस जगतीतलमें जो कुछ है सबको मैं उड़ा ले जा सकता हूँ। यक्षने पूर्ववत् तृण उसके सामने रखकर उसके बलकी परीक्षा करनी चाही। वायुने सब प्रकारसे प्रयत्न किया। उनकी एक भी न चली, लज्जा ही हाथ लगी। वे इन्द्रके पास लौट आये और कहा कि मैं नहीं जान सका कि यह यक्ष कौन है?

स्वयं इन्द्रने यक्षके स्वरूपको जाननेकी इच्छासे यक्षके पास जानेका निश्चय किया। जब वे यक्षके समीप पहुँचे तो यक्ष तिरोहित हो गया। इन्द्रको चिन्ताकातरकी स्थितिमें देखकर यक्षका तेजोरूप हैमवती उमारूपमें आकाशमें, जहाँ उसका अन्तर्धान हुआ था, प्रकट

हुआ और कहा कि वही पराशक्ति है, वही परब्रह्म है।

अग्नि, वायु और इन्द्र—इन तीनोंमें इन्द्र सर्वश्रेष्ठ हैं, इस बातका द्योतन तो इस कथासे होता है और साथ ही शक्तिकी अपरिमेयताका भी ज्ञान होता है।

दक्षयज्ञविध्वंसके उपरान्त सतीकी देहके टुकड़े जहाँ-जहाँ पड़े, वहाँ-वहाँ शक्तिपीठ स्थिर हुए हैं—ऐसा बताया जाता है। कर्नाटक संगीतकी प्रसिद्ध त्रिमूर्तियोंमें एक श्रीमुत्तुस्वामी दीक्षितजीने अपने एक पद (कीर्तन)-में भगवतीका वर्णन करते हुए कहा है कि वह पञ्चाशत्पीठरूपिणी हैं। कतिपय लोग इससे भी अधिक संख्यामें शक्तिपीठोंकी गणना करते हैं। पीठोंके नामोंके विषयमें भी कोई निश्चितता नहीं है। यह बात है कि देवीकी कला सर्वत्र व्याप्त है। यदि पौराणिक सत्यको स्वीकार करें तो यह कहना पड़ेगा कि कई विशिष्ट स्थानोंमें शक्तिकी विशिष्ट महिमा प्रतिष्ठित है।

भगवत्पाद आदि शङ्कराचार्यजीने धर्मकी रक्षा और प्रबोधके लिये भारतकी चारों दिशाओंमें चार आम्नायपीठोंकी स्थापना कर शक्तितत्त्वको पुनः जागरित किया है। इतना ही नहीं, अपनी दिग्विजय यात्राके समय उन्होंने देशके कई भागोंमें श्रीचक्रराजकी स्थापना कर श्रीयन्त्रकी पूजा-पद्धतिकी परम्परा स्थिर की है। आम्नायपीठोंकी स्थापना भी उन्होंने ऐसे दिव्य क्षेत्रोंमें की है जहाँ दैवी शक्तिकी विशिष्टता विद्यमान है। शृङ्गेरीमें उन्होंने आम्नायपीठकी जो स्थापना की, उसका एक कारण वहाँके प्राणियोंमें सहज ही निर्वैरभाव और क्षेत्रकी परम शान्ति है। जनश्रुति है कि प्रसवपीड़ासे तड़पनेवाली मेंढकीको सर्प नागराज छाया दे रहा था। जिन प्राणियोंमें स्वाभाविक जन्मजात वैर होता है, उसका अभाव उस क्षेत्रमें देखकर भगवत्पादने आम्नायपीठकी स्थापना करनेका निश्चय किया। उन्होंने श्रीचक्रोपरि शारदाम्बाकी स्थापना की और कैलाससे प्राप्त श्रीचन्द्रमौलीश्वर स्फटिक लिंगकी अर्चनाके साथ-साथ

श्रीचक्रकी भी यथाविधि अर्चनाका क्रम रखा। तबसे अबतक अविच्छिन्नरूपसे यह परम्परा चली आ रही है।

शिवशक्त्यात्मक श्रीचक्रमें चार शिवके और पाँच शक्तिके त्रिकोण हैं जिनके रहस्यको जानकर पञ्चदशी और षोडशी मन्त्रोंद्वारा यथाविधि पूजा-अर्चना करनेवाला साधक श्रेयस्कर पथपर अग्रसर हो सकता है। जिसके लिये गुरुकी कृपाकी निरन्तर आवश्यकता है। ब्रह्माण्डपुराणमें स्पष्ट ही बताया गया है कि पञ्चदशी-मन्त्रमें शिव और शक्तिके बीजाक्षर हैं, जो साधक इनका रहस्य नहीं जानता, उसका प्रयास व्यर्थ ही जाता है—

कत्रयं हृद्वयं चैव शैवो भागः प्रकीर्तितः।
शक्त्यक्षराणि शेषाणि ह्रींकार उभयात्मकः॥
एवं विभागमज्ञात्वा ये विद्याजपशालिनः।
न तेषां सिद्धिदा विद्या कल्पकोटिशतैरपि॥

त्रिपुरातापिन्युपनिषद्में '**तान् होवाच भगवान् श्रीचक्रं व्याख्यास्याम इति**' इत्यादि विवरणद्वारा श्रीचक्रके सम्बन्धमें विशदरूपसे कहा गया है। लोकमें तथा आर्ष-ग्रन्थोंमें शक्तिके सर्वव्यापक स्वरूपका निरूपण विद्यमान है। शक्तिके बिना कुछ भी नहीं है, किसी भी वस्तुकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। शक्तिका नाम ही माया है, महामाया है। शिव या परमेश्वर मायापति हैं पर अमायिक हैं। समस्त संसार उस महामायाके प्रभावसे परिपूर्ण है, सबको भ्रान्तिमें डालनेवाली वही हैं। भगवत्पादने सौन्दर्यलहरी (९७)-में कहा है कि हे परब्रह्ममहिषि! अम्बा! आगमविद् तुम्हें ब्रह्माकी पत्नी सरस्वती कहते हैं, तुम्हें ही विष्णुकी पत्नी लक्ष्मी कहते हैं और तुम्हें ही हरकी सहचरी पार्वती कहते हैं। तू इन सबसे परे या तुरीया, अनिर्वाच्या, अपार महिमावाली, शुद्धविद्यान्तर्गत मायातत्त्व हो जो संसारको भ्रमित करती हो—

गिरामाहुर्देवीं द्रुहिणगृहिणीमागमविदो
हरेः पत्नीं पद्मां हरसहचरीमद्रितनयाम्।
तुरीया कापि त्वं दुरधिगमनिस्सीममहिमा
महामाया विश्वं भ्रमयसि परब्रह्ममहिषि॥

सर्वत्र व्याप्त उस चितिकी उपासना-वन्दनाद्वारा हम अपने मानव-जीवनको सार्थक बनानेका प्रयास कर सकते हैं जो प्रेय और श्रेयकी प्राप्तिका सुलभोपाय है—

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

दस महाविद्याएँ और उनकी उपासना

विद्यास्वरूपा महाशक्ति

महाशक्ति विद्या और अविद्या दोनों ही रूपोंमें विद्यमान हैं। अविद्यारूपमें वे प्राणियोंके मोहकी कारण हैं तो विद्यारूपमें मुक्तिकी। शास्त्र और पुराण उन्हें विद्याके रूपमें और परमपुरुषको विद्यापतिके रूपमें मानते हैं। वेद तथा अन्यान्य शास्त्रोंके रूपमें विद्याका प्रकटरूप और आगमादिके रूपमें विद्वानों एवं साधकोंद्वारा गुप्तरूपमें संकेतित है। वैष्णवी और शाम्भवी-भेदसे दोनोंकी ही शरणागति परम लाभमें हेतु है। आगमशास्त्रोंमें यद्यपि गुह्य गुरुमुखगम्य अनेक विद्याओंके रूप, स्तव और मन्त्रादिकोंका विधान है, तथापि उनमें दस महाविद्याओंकी प्रधानता तो स्पष्ट प्रतिपादित है, जो जगन्माता भगवतीसे अभिन्न है—

साक्षाद् विद्यैव सा न ततो भिन्ना जगन्माता।
अस्याः स्वाभिन्नत्वं श्रीविद्याया रहस्यार्थः॥

(वरिवस्यारहस्यम् २। १०७)

महाविद्याओंका प्रादुर्भाव

दस महाविद्याओंका सम्बन्ध परम्परातः सती, शिवा और पार्वतीसे है। ये ही अन्यत्र नवदुर्गा, शक्ति, चामुण्डा, विष्णुप्रिया आदि नामोंसे पूजित और अर्चित होती हैं। देवीपुराण [महाभागवत]-में कथा आती है कि दक्षप्रजापतिने अपने यज्ञमें शिवको आमन्त्रित नहीं किया। सतीने शिवसे उस यज्ञमें जानेकी अनुमति माँगी। शिवने अनुचित बताकर उन्हें जानेसे रोका, पर सती अपने निश्चयपर अटल रहीं। उन्होंने कहा—'मैं प्रजापतिके यज्ञमें अवश्य जाऊँगी और वहाँ या तो अपने प्राणेश्वर देवाधिदेवके लिये यज्ञभाग प्राप्त करूँगी या यज्ञको ही नष्ट कर दूँगी।'* यह कहते हुए सतीके नेत्र लाल हो गये। वे शिवको उग्र दृष्टिसे देखने लगीं। उनके अधर फड़कने लगे, वर्ण कृष्ण हो गया। क्रोधाग्निसे दग्धशरीर महाभयानक एवं उग्र दीखने लगा। उस समय महामायाका विग्रह प्रचण्ड तेजसे तमतमा रहा था। शरीर वृद्धावस्थाको सम्प्राप्त-सा, केशराशि बिखरी हुई, चार भुजाओंसे सुशोभित वे महादेवी पराक्रमकी वर्षा करती-सी प्रतीत हो रही थीं। कालाग्निके समान महाभयानक रूपमें देवी मुण्डमाला पहने हुई थीं और उनकी भयानक जिह्वा बाहर निकली हुई थी। शीशपर अर्धचन्द्र सुशोभित था और उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकराल लग रहा था। वे बार-बार विकट हुंकार कर रही थीं। देवीका यह स्वरूप साक्षात् महादेवके लिये भी भयप्रद और प्रचण्ड था। उस समय उनका श्रीविग्रह करोड़ों मध्याह्नके सूर्योंके समान तेजःसम्पन्न था और वे बार-बार अट्टहास कर रही थीं। देवीके इस विकराल महाभयानक रूपको देखकर शिव भाग चले। भागते हुए रुद्रको दसों दिशाओंमें रोकनेके लिये देवीने अपनी अङ्गभूता दस देवियोंको प्रकट किया। देवीकी ये स्वरूपा शक्तियाँ ही दस

* ततोऽहं तत्र यास्यामि तदाज्ञापय वा न वा।
प्राप्स्यामि यज्ञभागं वा नाशयिष्यामि वा मखम्॥ (८।४२)

महाविद्याएँ हैं, जिनके नाम हैं—काली, तारा, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगलामुखी, कमला, त्रिपुरभैरवी, भुवनेश्वरी, त्रिपुरसुन्दरी और मातङ्गी।'

शिवने सतीसे इन महाविद्याओंका जब परिचय पूछा, तब सतीने स्वयं इसकी व्याख्या करके उन्हें बताया—

येयं ते पुरतः कृष्णा सा काली भीमलोचना।
श्यामवर्णा च या देवी स्वयमूर्ध्वं व्यवस्थिता॥
सेयं तारा महाविद्या महाकालस्वरूपिणी।
सव्येतरेयं या देवी विशीर्षातिभयप्रदा॥
इयं देवी छिन्नमस्ता महाविद्या महामते।
वामे तवेयं या देवी सा शम्भो भुवनेश्वरी॥
पृष्ठतस्तव या देवी बगला शत्रुसूदिनी।
वह्निकोणे तवेयं या विधवारूपधारिणी॥
सेयं धूमावती देवी महाविद्या महेश्वरी।
नैर्ऋत्यां तव या देवी सेयं त्रिपुरसुन्दरी॥
वायौ या ते महाविद्या सेयं मतङ्गकन्यका।
ऐशान्यां षोडशी देवी महाविद्या महेश्वरी॥
अहं तु भैरवी भीमा शम्भो मा त्वं भयं कुरु।
एताः सर्वाः प्रकृष्टास्तु मूर्तयो बहुमूर्तिषु॥

(देवीपुराण [महाभागवत] ८।६५—७१)

'शम्भो! आपके सम्मुख जो यह कृष्णवर्णा एवं भयंकर नेत्रोंवाली देवी स्थित हैं वे 'काली' हैं। जो श्यामवर्णवाली देवी स्वयं ऊर्ध्वभागमें स्थित हैं, ये महाकालस्वरूपिणी महाविद्या 'तारा' हैं। महामते! बायीं ओर जो ये अत्यन्त भयदायिनी मस्तकरहित देवी हैं, ये महाविद्या 'छिन्नमस्ता' हैं। शम्भो! आपके वामभागमें जो ये देवी हैं, वे 'भुवनेश्वरी' हैं। आपके पृष्ठभागमें जो देवी हैं, वे शत्रुसंहारिणी 'बगला' हैं। आपके अग्निकोणमें जो ये विधवाका रूप धारण करनेवाली देवी हैं, वे महेश्वरी महाविद्या 'धूमावती' हैं। आपके नैर्ऋत्यकोणमें जो देवी हैं, वे

'त्रिपुरसुन्दरी' हैं। आपके वायव्यकोणमें जो देवी हैं, ये मतङ्गकन्या महाविद्या 'मातङ्गी' हैं। आपके ईशानकोणमें महेश्वरी महाविद्या 'षोडशी' देवी हैं। शम्भो! मैं भयंकर रूपवाली 'भैरवी' हूँ। आप भय मत करें। ये सभी मूर्तियाँ बहुत-सी मूर्तियोंमें प्रकृष्ट हैं।'

महाभागवतके इस आख्यानसे प्रतीत होता है कि महाकाली ही मूलरूपा मुख्य हैं और उन्हींके उग्र और सौम्य दो रूपोंमें अनेक रूप धारण करनेवाली ये दस महाविद्याएँ हैं। दूसरे शब्दोंमें महाकालीके दशधा प्रधान रूपोंको ही दस महाविद्या कहा जाता है। सर्वविद्यापति शिवकी शक्तियाँ ये दस महाविद्याएँ लोक और शास्त्रमें अनेक रूपोंमें पूजित हुईं, पर इनके दस रूप प्रमुख हो गये। ये ही महाविद्याएँ साधकोंकी परम धन हैं जो सिद्ध होकर अनन्त सिद्धियों और अनन्तका साक्षात्कार करानेमें समर्थ हैं।

महाविद्याओंके क्रम-भेद तो प्राप्त होते हैं, पर कालीकी प्राथमिकता सर्वत्र देखी जाती है। यों भी दार्शनिक दृष्टिसे कालतत्त्वकी प्रधानता सर्वोपरि है। इसलिये मूलतः महाकाली या काली अनेक रूपोंमें विद्याओंकी आदि हैं और उनकी विद्यामय विभूतियाँ महाविद्याएँ हैं। ऐसा लगता है कि महाकालकी प्रियतमा काली अपने दक्षिण और वाम रूपोंमें दस महाविद्याओंके रूपमें विख्यात हुईं और उनके विकराल तथा सौम्य रूप ही विभिन्न नामरूपोंके साथ दस महाविद्याओंके रूपमें अनादिकालसे अर्चित हो रहे हैं। ये रूप अपनी उपासना, मन्त्र और दीक्षाओंके भेदसे अनेक होते हुए भी मूलतः एक ही हैं। अधिकारिभेदसे अलग-अलग रूप और उपासनास्वरूप प्रचलित हैं।

प्रकाश और विमर्श, शिवशक्त्यात्मक तत्त्वका अखिल विस्तार और लय सब कुछ शक्तिका ही लीला-विलास है। सृष्टिमें शक्ति और संहारमें शिवकी प्रधानता दृष्ट है। जैसे अमा और पूर्णिमा दोनों दो भासती हैं, पर दोनोंकी तत्त्वतः एकात्मता और दोनों एक-दूसरेके

कारण-परिणामी हैं, वैसे ही दस महाविद्याओंके रौद्र और सौम्य रूपोंको भी समझना चाहिये। काली, तारा, छिन्नमस्ता, बगला और धूमावती विद्यास्वरूप भगवतीके प्रकट-कठोर किंतु अप्रकट करुण-रूप हैं तो भुवनेश्वरी, षोडशी (ललिता), त्रिपुरभैरवी, मातङ्गी और कमला विद्याओंके सौम्यरूप हैं। रौद्रके सम्यक् साक्षात्कारके बिना माधुर्यको नहीं जाना जा सकता और माधुर्यके अभावमें रुद्रकी सम्यक् परिकल्पना नहीं की जा सकती।

स्वरूप-कथन

यद्यपि दस महाविद्याओंका स्वरूप अचिन्त्य है, तथापि शाखाचन्द्रन्यायसे उपासक, स्मृतियाँ और पराम्बाके चरणानुगामी इस विषयमें कुछ निर्वचन अवश्य कर लेते हैं। इस दृष्टिसे काली-तत्त्व प्राथमिक शक्ति है। निर्गुण ब्रह्मकी पर्याय इस महाशक्तिको तान्त्रिक ग्रन्थोंमें विशेष प्रधानता दी गयी है। वास्तवमें इन्हींके दो रूपोंका विस्तार ही दस महाविद्याओंके स्वरूप हैं। महानिर्गुणकी अधिष्ठात्री शक्ति होनेके कारण ही इनकी उपमा अन्धकारसे दी जाती है। महासगुण होकर वे 'सुन्दरी' कहलाती हैं तो महानिर्गुण होकर 'काली'। तत्त्वतः सब एक हैं, भेद केवल प्रतीतिमात्रका है। 'कादि' और 'हादि' विद्याओंके रूपमें भी एक ही श्रीविद्या क्रमशः कालीसे प्रारम्भ होकर उपास्या होती हैं। एकको 'संहार-क्रम' तो दूसरेको 'सृष्टि-क्रम' नाम दिया जाता है। देवीभागवत आदि शक्ति-ग्रन्थोंमें महालक्ष्मी या शक्तिबीजको मुख्य प्राधानिक बतानेका रहस्य यह है कि इसमें हादि विद्याकी क्रमयोजना स्वीकार की गयी है और तन्त्रों, विशेषकर अत्यन्त गोपनीय तन्त्रोंमें कालीको प्रधान माना गया है। तात्त्विक दृष्टिसे यहाँ भी भेदबुद्धिकी सम्भावना नहीं है। ***'सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा'*** का तर्क दोनोंसे अभिन्न सिद्ध करता है।

बृहन्नीलतन्त्रमें कहा गया है कि रक्त और कृष्णभेदसे काली ही

दो रूपोंमें अधिष्ठित हैं। कृष्णाका नाम 'दक्षिणा' है तो रक्तवर्णाका नाम 'सुन्दरी'—

विद्या हि द्विविधा प्रोक्ता कृष्णा रक्ता-प्रभेदतः।
कृष्णा तु दक्षिणा प्रोक्ता रक्ता तु सुन्दरी मता॥

उपासनाके भेदसे दोनोंमें द्वैत है, पर तत्त्वदृष्टिसे अद्वैत है। वास्तवमें काली और भुवनेश्वरी दोनों मूल-प्रकृतिके अव्यक्त और व्यक्त रूप हैं। कालीसे कमलातककी यात्रा दस सोपानोंमें अथवा दस स्तरोंमें पूर्ण होती है। दस महाविद्याओंका स्वरूप इसी रहस्यका परिणाम है।

दस महाविद्याओंकी उपासनामें सृष्टिक्रमकी उपासना लोकग्राह्य है। इसमें भुवनेश्वरीको प्रधान माना गया है। यही समस्त विकृतियोंकी प्रधान प्रकृति है। देवीभागवतके अनुसार सदाशिव फलक है तथा ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और ईश्वर उस फलक या श्रीमंचके पाये हैं। इस श्रीमञ्चपर भुवनेश्वरी भुवनेश्वरके साथ विद्यमान हैं। सात करोड़ मन्त्र इनकी आराधनामें लगे हुए हैं। विद्वानोंका कथन है कि निर्विशेष ब्रह्म ही स्वशक्ति-विलासके द्वारा ब्रह्मा, विष्णु आदि पञ्च आख्याओंको प्राप्त होकर अपनी शक्तियोंके सान्निध्यसे सृष्टि, स्थिति, लय, संग्रह तथा अनुग्रहरूप पञ्च कृत्योंको सम्पादित करते हैं। वह निर्विशेष तत्त्व 'परमपुरुष' पद-वाच्य है और उसकी स्वरूपभूत अभिन्न शक्ति ही है भुवनेश्वरी।

महाविद्याओंके प्रादुर्भावकी अन्यान्य कथाएँ

काली—दस महाविद्याओंमें काली प्रथम हैं। कालिकापुराणमें कथा आती है कि एक बार देवताओंने हिमालयपर जाकर महामायाका स्तवन किया। इस स्थानपर मतङ्गमुनिका आश्रम था। स्तुतिसे प्रसन्न होकर भगवतीने देवताओंको दर्शन दिया और पूछा कि 'तुमलोग किसकी स्तुति कर रहे हो?' तत्काल उनके श्रीविग्रहसे काले पहाड़के समान वर्णवाली दिव्य महातेजस्विनीने प्रकट होकर स्वयं ही देवताओंकी

ओरसे उत्तर दिया कि 'ये लोग मेरा ही स्तवन कर रहे हैं।' वे गाढ़े काजलके समान कृष्णा थीं, इसलिये उनका नाम 'काली' पड़ा।

लगभग इसीसे मिलती-जुलती कथा 'श्रीदुर्गासप्तशती' में भी है। शुम्भ-निशुम्भके उपद्रवसे व्यथित देवताओंने हिमालयपर देवीसूक्तसे देवीको बार-बार जब प्रणाम निवेदित किया, तब गौरी-देहसे कौशिकीका प्राकट्य हुआ और उनके अलग होते ही अम्बा पार्वतीका स्वरूप कृष्ण हो गया। वे ही 'काली' नामसे विख्यात हुईं—

तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत् सापि पार्वती।
कालिकेति समाख्याता हिमाचलकृताश्रया॥

वास्तवमें कालीको ही नीलरूपा होनेसे 'तारा' भी कहा गया है। वचनान्तरसे तारा नामका रहस्य यह भी है कि वे सर्वदा मोक्ष देनेवाली—तारनेवाली हैं, इसलिये तारा हैं। अनायास ही वे वाक् प्रदान करनेमें समर्थ हैं, इसलिये 'नीलसरस्वती' भी हैं। भयंकर विपत्तियोंसे रक्षणकी कृपा प्रदान करती हैं, इसलिये वे उग्रतारिणी या 'उग्रतारा' हैं।

नारद-पाञ्चरात्रके अनुसार—एक बार कालीके मनमें आया कि वे पुनः गौरी हो जायँ। यह सोचकर वे अन्तर्धान हो गयीं। उसी समय नारदजी प्रकट हो गये। शिवजीने नारदजीसे उनका पता पूछा। नारदजीने उनसे सुमेरुके उत्तरमें देवीके प्रत्यक्ष उपस्थित होनेकी बात कही। शिवकी प्रेरणापर नारदजी वहाँ गये और उन्होंने उनसे शिवजीसे विवाहका प्रस्ताव रखा। देवी क्रुद्ध हो गयीं और उनकी देहसे एक अन्य विग्रह षोडशी सुन्दरीका प्रकट्य हुआ और उससे छाया-विग्रह त्रिपुरभैरवीका प्राकट्य हो गया।

मार्कण्डेयपुराणमें देवीके लिये 'विद्या' और 'महाविद्या' दोनों शब्दोंका प्रयोग हुआ है। ब्रह्माकी स्तुति में 'महाविद्या' तथा देवताओंकी स्तुतिमें '**लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये**' सम्बोधन आये हैं। '**अ**'

से लेकर '**क्ष**' तक पचास मातृकाएँ आधारपीठ हैं, इनके भीतर स्थित शक्तियोंका साक्षात्कार शक्ति-उपासना है। शक्तिसे शक्तिमान्‌का अभेद-दर्शन, जीवभावका लोप और शिवभावका उदय किंवा पूर्ण शिवत्व-बोध शक्ति-उपासनाकी चरम उपलब्धि है।

तारा—तारा और काली यद्यपि एक ही हैं, बृहन्नीलतन्त्रादि ग्रन्थोंमें उनके विशेष रूपकी चर्चा है। हयग्रीवका वध करनेके लिये देवीको नील-विग्रह प्राप्त हुआ। शव-रूप शिवपर प्रत्यालीढ मुद्रामें भगवती आरूढ हैं और उनकी नीले रंगकी आकृति नीलकमलोंकी भाँति तीन नेत्र तथा हाथोंमें कैंची, कपाल, कमल और खड्‌ग हैं। व्याघ्रचर्मसे विभूषिता उन देवीके कण्ठमें मुण्डमाला है। वे उग्रतारा हैं, पर भक्तोंपर कृपा करनेके लिये उनकी तत्परता अमोघ है। इस कारण वे महाकरुणामयी हैं।

छिन्नमस्ता—'छिन्नमस्ता' के प्रादुर्भावकी कथा इस प्रकार है—एक बार भगवती भवानी अपनी सहचरियों—जया और विजयाके साथ मन्दाकिनीमें स्नान करनेके लिये गयीं। वहाँ स्नान करनेपर क्षुधाग्निसे पीड़ित होकर वे कृष्णवर्णकी हो गयीं। उस समय उनकी सहचरियोंने उनसे कुछ भोजन करनेके लिये माँगा। देवीने उनसे कुछ प्रतीक्षा करनेके लिये कहा। कुछ समय प्रतीक्षा करनेके बाद पुनः याचना करनेपर देवीने पुनः प्रतीक्षा करनेके लिये कहा। बादमें उन देवियोंने विनम्र स्वरमें कहा कि 'माँ तो शिशुओंको भूख लगनेपर तुरंत भोजन प्रदान करती है।' इस प्रकार उनके मधुर वचन सुनकर कृपामयीने अपने कराग्रसे अपना सिर काट दिया। कटा हुआ सिर देवीके बायें हाथमें आ गिरा और कबन्धसे तीन धाराएँ निकलीं। वे दो धाराओंको अपनी दोनों सहेलियोंकी ओर प्रवाहित करने लगीं, जिसे पीती हुई वे दोनों प्रसन्न होने लगीं और तीसरी धारा जो ऊपरकी ओर प्रवाहित थी, उसे वे स्वयं पान करने लगीं। तभीसे ये 'छिन्नमस्ता' कही जाने लगीं।

बगला—बगलाकी उत्पत्तिके विषयमें कथा आती है कि सत्ययुगमें सम्पूर्ण जगत्‌को नष्ट करनेवाला तूफान आया। प्राणियोंके जीवनपर संकट आया देखकर महाविष्णु चिन्तित हो गये और वे सौराष्ट्र देशमें हरिद्रा सरोवरके समीप जाकर भगवतीको प्रसन्न करनेके लिये तप करने लगे। श्रीविद्याने उस सरोवरसे निकलकर पीताम्बराके रूपमें उन्हें दर्शन दिया और बढ़ते हुए जल-वेग तथा विध्वंसकारी उत्पातका स्तम्भन किया। वास्तवमें दुष्ट वही है, जो जगत्‌के या धर्मके छन्दका अतिक्रमण करता है। बगला उसका किंवा नियन्त्रण करनेवाली महाशक्ति हैं। वे परमेश्वरकी सहायिका हैं और वाणी, विद्या तथा गतिको अनुशासित करती हैं। ब्रह्मास्त्र होनेका यही रहस्य है। '**ब्रह्मद्विषे शरवे हन्त वा उ**' आदि वाक्योंमें बगलाशक्ति ही पर्यायरूपमें संकेतित हैं। वे सर्वसिद्धि देनेमें समर्थ और उपासकोंकी वाञ्छाकल्पतरु हैं।

धूमावती—धूमावतीदेवीके विषयमें कथा आती है कि एक बार पार्वतीने महादेवजीसे अपनी क्षुधाका निवारण करनेका निवेदन किया। महादेवजी चुप रह गये। कई बार निवेदन करनेपर भी जब देवाधिदेवने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया, तब उन्होंने महादेवजीको ही निगल लिया। उनके शरीरसे धूमराशि निकली। तब शिवजीने शिवासे कहा कि 'आपकी मनोहर मूर्ति बगला अब 'धूमावती' या 'धूम्रा' कही जायगी।' यह धूमावती वृद्धास्वरूपा, डरावनी और भूख-प्याससे व्याकुल स्त्री-विग्रहवत् अत्यन्त शक्तिमयी हैं। अभिचार कर्मोंमें इनकी उपासनाका विधान है।

त्रिपुरसुन्दरी—महाशक्ति 'त्रिपुरा' त्रिपुर महादेवकी स्वरूपा-शक्ति हैं। कालिकापुराणके अनुसार शिवजीकी भार्या त्रिपुरा श्रीचक्रकी परम नायिका हैं। परम शिव इन्हींके सहयोगसे सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और स्थूल-से-स्थूल रूपोंमें भासते हैं। त्रिपुरभैरवी महात्रिपुरसुन्दरीकी

रथवाहिनी हैं, ऐसा उल्लेख मिलता है। इसी प्रकार अन्य देवियोंके विषयमें पुराणोंमें यथास्थान कथा मिलती है।

वास्तवमें काली, तारा, छिन्नमस्ता, बगलामुखी, मातङ्गी, धूमावती—ये रूप और विग्रहमें कठोर तथा भुवनेश्वरी, षोडशी, कमला और भैरवी अपेक्षाकृत माधुर्यमयी रूपोंकी अधिष्ठात्री विधाएँ हैं। करुणा और भक्तानुग्रहाकांक्षा तो सबमें समान हैं। दुष्टोंके दलन-हेतु एक ही महाशक्ति कभी रौद्र तो कभी सौम्य रूपोंमें विराजित होकर नाना प्रकारकी सिद्धियाँ प्रदान करती हैं। इच्छासे अधिक वितरण करनेमें समर्थ इन महाविद्याओंका स्वरूप अचिन्त्य और शब्दातीत है, पर भक्तों और साधकोंके लिये इनकी कृपाका कोष नित्य-निरन्तर खुला रहता है। महाविद्याओंकी उपासनाका पृथक्-पृथक् वर्णन इस प्रकार है—

महाविद्याओंकी उपासना

१-कालीकी उपासना—तान्त्रिक विद्या-साधनामें कालीको विशेष प्रधानता प्राप्त है। भव-बन्धन-मोचनमें कालीकी उपासना सर्वोत्कृष्ट कही जा सकती है। शक्ति-साधनाके दो पीठोंमें कालीकी उपासना श्यामापीठपर करने योग्य है। भक्तिमार्गमें तो सर्वथा किसी भी रूपमें, किसी भी तरह उन महामायाकी उपासना फलप्रदा है, पर साधना या सिद्धिके लिये इनकी उपासना वीरभावसे की जाती है। वीर साधक दुर्लभ होता है। जिनके मनसे अहंता, माया, ममता और भेद-बुद्धिका नाश नहीं हुआ है, वे इनकी उपासनाको करनेमें पूर्ण सफल नहीं हो सकते। साधनाके द्वारा जब पूर्ण शिशुत्वका उदय हो जाता है, तब भगवतीका श्रीविग्रह साधकके सामने प्रकट हो जाता है, उस समय उनकी छवि अवर्णनीय होती है। कज्जलके पहाड़के समान, दिग्वसना, मुक्तकुन्तला, शवपर आरूढ़, मुण्डमालाधारिणी भगवतीका

प्रत्यक्ष दर्शन साधकको कृतार्थ कर देता है। साधकके लिये कुछ भी शेष नहीं रह जाता। महाकालीकी उपासनाकी पद्धतियाँ, तत्सम्बन्धी मन्त्र और यन्त्र, साधना, विधान, अधिकारीभेद और अन्य उपचारसम्बन्धी सामग्री महाकालसंहिता, कालीकुलक्रमार्चन, व्योमकेशसंहिता, कालीतन्त्र, कालिकार्णव, विश्वसारतन्त्र, कालीयामल, कामेश्वरीतन्त्र, शक्तिसंगम, शाक्तप्रमोद, दक्षिणकालीकल्प, श्यामारहस्य-जैसे ग्रन्थोंमें प्राप्त है। गुरुकृपा और जगदम्बाकी कृपा अथवा पूर्वजन्मकृत साधनाओंके फलस्वरूप कालीकी उपासनामें सफलता प्राप्त होती है।

कालीकी साधना यद्यपि दीक्षागम्य है, तथापि अनन्यशरणागतिके द्वारा उनकी कृपा किसीको भी प्राप्त हो सकती है। मूर्ति, यन्त्र अथवा गुरुद्वारा उपदिष्ट किसी आधारपर भक्तिभावसे मन्त्र-जप, पूजा, होम और पुरश्चरण करनेसे काली प्रसन्न हो जाती हैं। कालीकी प्रसन्नता सम्पूर्ण अभीष्टोंकी प्राप्ति है।

ध्यान

शवारूढां महाभीमां घोरदंष्ट्रां हसन्मुखीम्।
चतुर्भुजां खड्गमुण्डवराभयकरां शिवाम्॥
मुण्डमालाधरां देवीं ललज्जिह्वां दिगम्बराम्।
एवं संचिन्तयेत् कालीं श्मशानालयवासिनीम्॥

(शाक्त-प्रमोद कालीतन्त्र)

कालीकी उपासनामें भी सम्प्रदायगत भेद हैं। प्रायः दो रूपोंमें इनकी उपासनाका प्रचलन है। श्मशानकालीकी उपासना दीक्षागम्य है और इनकी साधना प्रायः किसी अनुभवीसे पूछकर ही करनी चाहिये। कालीके अनेक नाम—दक्षिणकाली, भद्रकाली, कामकलाकाली, श्मशानकाली, गुह्यकाली आदि तन्त्रोंमें वर्णित हैं, पर इनमें सम्प्रदायगत भेदके रहते हुए भी तत्त्वतः एकता है। कालीकी उपासनाका रहस्य भी विरल है और यह साधना भी प्रायः दुर्लभ साधना है।

२-ताराकी उपासना—शत्रुनाश, वाक्-शक्तिकी प्राप्ति तथा भोग-मोक्षकी प्राप्तिके लिये तारा अथवा उग्रताराकी साधना की जाती है। कुछ विद्वानोंने तारा और कालीमें एकता भी प्रमाणित की है। रात्रिदेवीस्वरूपा शक्ति तारा महाविद्याओंमें अद्भुत प्रभाव और सिद्धिकी अधिष्ठात्री देवी कही गयी हैं।

ध्यान

प्रत्यालीढपदर्पिताङ्घ्रिशवहृद्घोराट्टहासापरा
खड्गेन्दीवरकर्त्रिखर्परभुजाहुंकारबीजोद्भवा ।
खर्वानीलविशालपिङ्गलजटाजूटैकनागैर्युता
जाड्यं न्यस्य कपालकर्तृजगतां हन्त्युग्रतारा स्वयम्॥

३-छिन्नमस्ताकी उपासना—भगवती छिन्नमस्ताका स्वरूप अत्यन्त गोपनीय और साधकोंका प्रिय है। इसे अधिकारी ही प्राप्त कर सकता है। ऐसा विधान है कि आधी रात अर्थात् चतुर्थ संध्याकालमें छिन्नमस्ताके मन्त्रकी साधनासे साधकको सरस्वती सिद्ध हो जाती हैं। शत्रुविजय, समूह-स्तम्भन, राज्य-प्राप्ति और दुर्लभ मोक्ष-प्राप्तिके निमित्त छिन्नमस्ताकी उपासना अमोघ है। छिन्नमस्ताका आध्यात्मिक स्वरूप अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यों तो सभी शक्तियाँ विशिष्ट आध्यात्मिक तत्त्व-चिन्तनोंकी संकेत हैं, पर छिन्नमस्ता नितान्त गुह्य तत्त्वबोधकी प्रतीक हैं। छिन्न यज्ञशीर्षकी प्रतीक ये देवी श्वेतकमलपीठपर खड़ी हैं। इनकी नाभिमें योनिचक्र है। दिशाएँ ही इनके वस्त्र हैं। कृष्ण (तम) और रक्त (रज) गुणोंकी देवियाँ इनकी सहचरियाँ हैं। ये अपना शीश स्वयं काटकर भी जीवित हैं। जिससे इनमें अपनेमें पूर्ण अन्तर्मुखी साधनाका संकेत मिलता है।

ध्यान

प्रत्यालीढपदां सदैव दधतीं छिन्नं शिरः कर्त्रिकां
दिग्वस्त्रां स्वकबन्धशोणितसुधाधारां पिबन्तीं मुदा।

नागाबद्धशिरोमणिं त्रिनयनां हृद्युत्पलालंकृतां
रत्यासक्तमनोभवोपरिदृढां ध्यायेज्जवासंनिभाम्॥

(४) षोडशीदेवीकी उपासना—षोडशी माहेश्वरी शक्तिकी सबसे मनोहर श्रीविग्रहवाली सिद्ध विद्यादेवी हैं। १६ अक्षरोंके मन्त्रवाली उन देवीकी अङ्गकान्ति उदीयमान सूर्यमण्डलकी आभाकी भाँति है। उनके चार भुजाएँ एवं तीन नेत्र हैं। शान्त मुद्रामें लेटे हुए सदाशिवपर स्थित कमलके आसनपर विराजिता षोडशीदेवीके चारों हाथोंमें पाश, अङ्कुश, धनुष और बाण सुशोभित हैं। वर देनेके लिये सदा-सर्वदा उद्यत उन भगवतीका श्रीविग्रह सौम्य और हृदय दयासे आपूरित है। जो उनका आश्रय ग्रहण कर लेते हैं, उनमें और ईश्वरमें कोई भेद नहीं रह जाता। वस्तुतः उनकी महिमा अवर्णनीय है। संसारके समस्त मन्त्र-तन्त्र उनकी आराधना करते हैं। वेद भी उनका वर्णन नहीं कर पाते। भक्तोंको वे प्रसन्न होकर क्या नहीं दे देतीं। 'अभीष्ट' तो सीमित अर्थवाच्य शब्द है, वस्तुतः उनकी कृपाका एक कण भी अभीष्टसे अधिक प्रदान करनेमें समर्थ है।

ध्यान

बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम्।
पाशाङ्कुशशरांश्चापं धारयन्तीं शिवां भजे॥

५-भुवनेश्वरीदेवीकी उपासना—देवीभागवतमें वर्णित मणिद्वीपकी अधिष्ठात्री देवी हृल्लेखा (ह्रीं) मन्त्रकी स्वरूपा शक्ति और सृष्टिक्रममें महालक्ष्मीस्वरूपा—आदिशक्ति भगवती भुवनेश्वरी शिवके समस्त लीला-विलासकी सहचरी और निखिल प्रपञ्चोंकी आदि-कारण, सबकी शक्ति और सबको नाना प्रकारसे पोषण प्रदान करनेवाली हैं। जगदम्बा भुवनेश्वरीका स्वरूप सौम्य और अङ्गकान्ति अरुण है। भक्तोंको अभय एवं समस्त सिद्धियाँ प्रदान करना उनका स्वाभाविक गुण है। शास्त्रोंमें इनकी अपार महिमा बतायी गयी है।

देवीका स्वरूप '**ह्रीं**' इस बीजमन्त्रमें सर्वदा विद्यमान है, जिसे देवीभागवतमें देवीका 'प्रणव' कहा गया है। शास्त्रोंमें कहा गया कि इस बीजमन्त्रके जपका पुरश्चरण करानेवाला और यथाविधि होम, ब्राह्मण-भोजन करानेवाला भक्तिमान् साधक साक्षात् प्रभुके समान हो जाता है।

ध्यान

उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम्।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम्॥

६-त्रिपुरभैरवीकी उपासना—इन्द्रियोंपर विजय और सर्वतः उत्कर्षकी प्राप्ति-हेतु त्रिपुरभैरवीकी उपासनाका विधान शास्त्रोंमें कहा गया है। त्रिपुरभैरवीकी महिमाका वर्णन करते हुए शास्त्र कहते हैं—

वारमेकं पठन्मर्त्यो मुच्यते सर्वसङ्कटात्।
किमन्यद् बहुना देवि सर्वाभीष्टफलं लभेत्॥

ध्यान

उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरोमालिकां
रक्तालिप्तपयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वरम्।
हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं
देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

७-धूमावतीकी उपासना—पुत्र-लाभ, धन-रक्षा और शत्रु-विजयके लिये धूमावतीकी साधना-उपासनाका विधान है। विरूपा और भयानक आकृतिवाली होती हुई भी धूमावती शक्ति अपने भक्तोंके कल्याण-हेतु सदा तत्पर रहती हैं।

ध्यान

विवर्णा चञ्चला दुष्टा दीर्घा च मलिनाम्बरा।
विमुक्तकुन्तला रुद्रा विधवा विरलद्विजा॥
काकध्वजरथारूढा विलम्बितपयोधरा।
शूर्पहस्तातिरुक्षा च धूतहस्ता वरानना॥

प्रवृद्धघोषणा सा तु भृकुटिकुटिलेक्षणा।
क्षुत्पिपासार्दिता नित्यं भयदा कलहास्पदा॥

८-बगलामुखीकी उपासना—पीताम्बरा विद्याके नामसे विख्यात बगलामुखीकी साधना प्रायः शत्रुभयसे मुक्त होने और वाक्सिद्धिके लिये की जाती है। बगलाका प्रयोग सावधानीकी अपेक्षा रखता है। स्तम्भन-शक्तिके रूपमें इनका विनियोग शास्त्रोंमें वर्णित है। बगला-स्तोत्र, बगलाहृदय, मन्त्र, यन्त्र आदि अनेक रूपोंमें इन महादेवीकी साधना लोकविश्रुत है। बगलाकी उपासनामें पीत वस्त्र, हरिद्रा-माला, पीत आसन और पीत पुष्पोंका विधान है।

ध्यान

जिह्वाग्रमादाय करेण देवीं
वामेन शत्रून् परिपीडयन्तीम्।
गदाभिघातेन च दक्षिणेन
पीताम्बराढ्यां द्विभुजां नमामि॥

९-मातङ्गी—मातङ्गी मतङ्ग मुनिकी कन्या कही गयी हैं। वस्तुतः वाणी-विलासकी सिद्धि प्रदान करनेमें इनका कोई विकल्प नहीं। चाण्डालरूपको प्राप्त शिवकी प्रिया होनेके कारण इन्हें 'चाण्डाली' या 'उच्छिष्ट चाण्डाली' भी कहा गया है। गृहस्थ-जीवनको सुखी बनाने, पुरुषार्थ-सिद्धि और वाग्विलासमें पारङ्गत होनेके लिये मातङ्गी-साधना श्रेयस्करी है। इनका ध्यान इस प्रकार है—

ध्यान

माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं
मदालसां मञ्जुलवाग्विलासाम्।
महेन्द्रनीलद्युतिकोमलाङ्गीं
मतङ्गकन्यां मनसा स्मरामि॥

१०-कमला—कमला वैष्णवी शक्ति हैं। महाविष्णुकी लीला-

विलास-सहचरी कमलाकी उपासना वास्तवमें जगदाधार शक्तिकी उपासना है। इनकी कृपाके अभावमें जीवमें सम्पत्-शक्तिका अभाव हो जाता है। मानव, दानव और दैव—सभी इनकी कृपाके बिना पंगु हैं। विश्वम्भरकी इन आदिशक्तिकी उपासना आगम-निगम दोनोंमें समान रूपसे प्रचलित है। भगवती कमला दस महाविद्याओंमें एक हैं। जो क्रम-परम्परा मिलती है, उसमें इनका स्थान दसवाँ है। (अर्थात् इनमें—इनकी महिमामें प्रवेश कर जीव पूर्ण और कृतार्थ हो जाता है।) सभी देवता, राक्षस, मनुष्य, सिद्ध, गन्धर्व इनकी कृपाके प्रसादके लिये लालायित रहते हैं। ये परमवैष्णवी, सात्त्विक और शुद्धाचारा, विचार-धर्मचेतना और भक्त्यैकगम्या हैं। इनका आसन कमलपर है। इनका ध्यान इस प्रकार है—

ध्यान

कान्त्या काञ्चनसंनिभां हिमगिरिप्रख्यैश्चतुर्भिगजै-
र्हस्तोत्क्षिप्तहिरण्मयामृतघटैरासिच्यमानां श्रियम्।
बिभ्राणां वरमब्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां
क्षौमाबद्धनितम्बबिम्बललितां वन्देऽरविन्दस्थिताम्॥

महाविद्याओंका स्वरूप वास्तवमें एक ही आद्याशक्तिके विभिन्न स्वरूपोंका विस्तार है। भगवती अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य और माधुर्यमें विद्या और अविद्या दोनों हैं—'**विद्याहमविद्याहम्**' (देव्यथर्वशीर्ष)। पर विद्याओंके रूपमें उनकी उपासनाका तात्पर्य शुद्ध विद्याकी उपासना है। विद्या मुक्तिकी हेतु है। अतः पारमार्थिक स्तरपर विद्याओंकी उपासनाका आशय अन्ततः मोक्षकी साधना है। इससे विजय, ऐश्वर्य, धन-धान्य, पुत्र और अन्यान्य कीर्ति आदि अवाप्त होती है। सन्दर्भमें आये शत्रुनाश आदिका तात्पर्य आध्यात्मिक स्तरपर काम, क्रोधादिक शत्रुओंसे है और आत्मोत्कर्ष चाहनेवालेको यही अर्थ ग्रहण करना चाहिये।

दस महाविद्याओंका अङ्कगणित वेद-शास्त्रोंकी संख्या दसके अङ्ककी प्रधानताकी ही ओर संकेत करता है। यजुर्वेद (१६। ६४—६६)-में **'तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः।'** आदि प्रयोग मिलते हैं। यों भी अङ्क ९ हैं, दसवाँ तो पूर्णता अर्थात् सबके बाद शून्यका पर्याय है। शून्यका एक होना पुनः उसका शून्य हो जाना पूर्णसे पूर्ण और पुनः पूर्ण होनेकी आध्यात्मिक यात्रा है। इस विषयमें गुरुकी कृपा ही रहस्यको स्पष्ट कर सकती है। आदिगुरु भगवान् शंकरके चरणोंका आश्रय ग्रहण कर इन विद्याओंकी साधनामें अग्रसर होना चाहिये।

काशीका श्रीविशालाक्षी शक्तिपीठ

(आचार्य डॉ० श्रीपवनकुमारजी शास्त्री साहित्याचार्य, विद्यावारिधि, एम्०ए०,पी-एच्०डी०)

दक्षप्रजापतिकी सुपुत्री श्रीसतीजीके दिव्य अङ्गोंके गिरनेसे जिन ५१ शक्तिपीठोंके आविर्भावकी जो कथा देवीपुराण आदि ग्रन्थोंमें मिलती है, उनमेंसे वाराणसीमें प्रादुर्भूत शक्तिपीठका नाम श्रीविशालाक्षी शक्तिपीठ है। तन्त्रचूडामणिमें प्राप्त उपाख्यानमें कहा गया है कि भगवान् विष्णुके सुदर्शन चक्रसे कटकर श्रीसतीजीके विभिन्न अङ्ग जहाँ-जहाँ गिरे, वहाँ-वहाँ एक-एक शक्ति एवं एक-एक भैरव विराजमान हो गये। इसी आख्यानमें यह भी कहा गया है कि काशीमें भगवतीसतीकी कर्ण-मणि गिरी थी, जिससे यहाँ भी एक शक्तिपीठका आविर्भाव हुआ। इस शक्तिपीठपर श्रीविशालाक्षीजी विराजमान हुईं।

मत्स्यपुराणमें वर्णन आया है कि पिता दक्षप्रजापतिसे अपमानित होकर जब देवी सतीने अपने शरीरसे प्रकट हुए तेजसे स्वयंको जलाना प्रारम्भ किया तो उस समय दक्षप्रजापतिने क्षमा माँगते हुए उनकी प्रार्थना

करते हुए कहा—'देवि! आप इस जगत्की जननी तथा जगत्को सौभाग्य प्रदान करनेवाली हैं, आप मुझपर अनुग्रह करनेकी कामनासे ही मेरी पुत्री होकर अवतीर्ण हुई हैं। धर्मज्ञे! यद्यपि इस चराचर जगत्में आपकी ही सत्ता सर्वत्र व्याप्त है, फिर भी मुझे किन-किन स्थानोंमें जाकर आपका दर्शन करना चाहिये, बतानेकी कृपा करें।'

इसपर देवीने कहा—दक्ष! यद्यपि भूतलपर समस्त प्राणियोंमें सब ओर मेरा ही दर्शन करना चाहिये; क्योंकि सभी पदार्थोंमें मेरी ही सत्ता विद्यमान है। फिर भी जिन-जिन स्थानोंमें मेरी विशेष सत्ता व्याप्त है, उन-उन स्थानोंका मैं वर्णन कर रही हूँ। इतना कहनेके बाद देवीने अपने १०८ शक्तिपीठोंके नामोंका परिगणन किया, जिसमें सर्वप्रथम वाराणसीमें स्थित भगवती विशालाक्षीका ही नामोल्लेख हुआ है, यथा—

वाराणस्यां विशालाक्षी नैमिषे लिङ्गधारिणी।
प्रयागे ललिता देवी कामाक्षी गन्धमादने॥

अन्तमें देवीने यहाँके माहात्म्यको बताते हुए कहा कि जो यहाँ तीर्थमें स्नानकर मेरा दर्शन करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर कल्पपर्यन्त शिवलोकमें निवास करता है।

भगवती विशालाक्षीजीकी महिमा अपार है। देवीभागवतमें तो काशीमें एकमात्र विशालाक्षीपीठ होनेका ही उल्लेख प्राप्त होता है। देवीके सिद्ध स्थानोंमें भी काशीपुरीके अन्तर्गत मात्र विशालाक्षीका ही वर्णन मिलता है—

'**वाराणस्यां विशालाक्षी गौरीमुखनिवासिनी।**'
'**अविमुक्ते विशालाक्षी महाभागा महालये।**'

(देवीभागवत ७।३०।५५; ३८। २७)

स्कन्दपुराणान्तर्गत काशीखण्डमें श्रीविशालाक्षीजीको नौ गौरियोंमेंसे पाँचवीं गौरीके रूपमें दर्शाया गया है तथा इनका विशेष महत्त्व

बतलाया गया है। यहाँ भगवती विशालाक्षीके भवनको भगवान् विश्वनाथका विश्रामस्थल कहा गया है। काशीपति भगवान् विश्वनाथ भगवती श्रीविशालाक्षीके मन्दिरमें उनके समीप विश्राम करते हैं तथा इस असार संसारके अथाह कष्टोंको झेलनेसे खिन्न हुए मनुष्योंको सांसारिक कष्टोंसे विश्रान्ति देते हैं—

विशालाक्ष्या महासौधे मम विश्रामभूमिका।
तत्र संसृतिखिन्नानां विश्रामं श्राणयाम्यहम्॥

काशीखण्डमें श्रीविशालाक्षीजीके दर्शन-पूजन-हेतु विशेष निर्देश दिये गये हैं। भगवतीकी अभ्यर्चना-हेतु सर्वप्रथम काशीके विशाल-गङ्गा* नामक तीर्थमें स्नान करनेका आदेश दिया गया है—

'स्नात्वा विशालगङ्गायां विशालाक्षीं ततो व्रजेत्।'

भगवती श्रीविशालाक्षीकी पूजामें धूप, दीप, सुगन्धित माला, मनोहर उपहार, मणियों एवं मोतियोंके आभरण, चामर, नवीन वस्त्र इत्यादि अर्पित करनेको कहा गया है। विशालाक्षी शक्तिपीठमें अर्पित किया गया स्वल्प भी अनन्तगुना होकर प्राप्त होता है। यहाँ दिया गया दान, जपा हुआ नाम, किया गया देवी-स्तवन एवं हवन मोक्षदायी होता है। विशालाक्षीजीकी अर्चनासे रूप और सम्पत्ति दोनों प्राप्त होते हैं—

वाराणस्यां विशालाक्षी पूजनीया प्रयत्नतः।
धूपैर्दीपैः शुभैर्माल्यैरुपहारैर्मनोहरैः॥
मणिमुक्ताद्यलङ्कारैर्विचित्रोल्लोचचामरैः।
शुभैरनुपभुक्तैश्च दुकूलैर्गन्धवासितैः॥
मोक्षलक्ष्मीसमृद्ध्यर्थं यत्रकुत्रनिवासिभिः।
अत्यल्पमपि यद्दत्तं विशालाक्ष्यै नरोत्तमैः॥
तदानन्त्याय जायेत मुने लोकद्वयेऽपि हि।

* काशीमें श्रीगङ्गाजीके तटपर पङ्क्तिबद्ध घाटोंमें ललिताघाट एवं पार्श्ववर्ती मीरघाटके बीचमें श्रीगङ्गाजीमें काशीखण्डोक्त विशालगङ्गातीर्थ है। इस तीर्थमें स्नान करके श्रीविशालाक्षीजीके दर्शनकी विधि है।

विशालाक्षीमहापीठे दत्तं जप्तं हुतं स्तुतम्॥
मोक्षस्तस्य परीपाको नात्र कार्या विचारणा।
विशालाक्षीसमर्चातो रूपसम्पत्तियुक्पतिः॥

(स्क०पु०, का०ख० ७०।१०—१४)

त्रिस्थलीसेतुमें काशीपुराधीश्वरी भगवती अन्नपूर्णा, भवानी एवं विशालाक्षीकी त्रिमूर्तिका ऐक्य दर्शाया गया है—

शिवे सदानन्दमये ह्यधीश्वरि श्रीपार्वति ज्ञानघनेऽम्बिके शिवे।
मातर्विशालाक्षि भवानि सुन्दरि त्वामन्नपूर्णे शरणं प्रपद्ये॥

अन्नपूर्णोपनिषद्में विशालाक्षीको अन्नपूर्णा कहा गया है—

'अन्नपूर्णा विशालाक्षी स्मयमानमुखाम्बुजा॥'

काशीमें दक्षिण दिग्यात्रा क्रममें ११ वें क्रमपर श्रीविशालाक्षीजीके* दर्शनका निर्देश है तथा प्रतिवर्ष भाद्रपदकृष्ण तृतीयाको माता विशालाक्षीकी वार्षिक यात्राकी परम्परा रही है। यहाँ वासन्तिक नवरात्रमें नवगौरी-दर्शनक्रममें ५वें दिन पञ्चमी तिथिको विशालाक्षीजीके दर्शनका विधान

* भगवती विशालाक्षीजीका मन्दिर काशीमें मीरघाटके ऊपर इसी नामके मुहल्लेमें भवन-संख्या डी० ३-८५ में अवस्थित है। यहींपर श्रीविशालाक्षीश्वर महादेवजीका शिवलिङ्ग भी है। कलकत्तेमें व्यवसाय कर रहे नगरत्तारों (तमिलनाडुके एक समुदायविशेष)-ने सन् १८६३ ई० में यह निश्चय किया कि काशीमें अपने समुदायका एक निजी स्थान होना चाहिये। एतदर्थ उन्होंने अगस्त्यकुण्डा नामक मुहल्लेमें एक मठ खरीदकर उसमें 'श्रीकाशी नाट्टुक्कोट्टै नगरसत्रम्' नामक संस्था स्थापित की। अगले २० वर्षोंमें नगरसत्रम्को भलीभाँति सुस्थापित करनेके पश्चात् नगरत्तार समुदायने विशालाक्षीमन्दिरके जीर्णोद्धारका विचार किया। उन्होंने मन्दिरके पुजारियोंसे विशालाक्षीमन्दिरका स्वामित्व हासिल किया और तत्कालीन काशीनरेश महाराज प्रभुनारायण सिंहसे मन्दिरकी समीपवर्ती भूमिको भी प्राप्त करके उसपर एक भव्य मन्दिरका निर्माण कराया। मिति माघ शुक्ल षष्ठी शुक्रवार संवत् १९६५ (दिनाङ्क ७ फरवरी १९०८)-को मन्दिरका कुम्भाभिषेक सम्पन्न हुआ। इस क्रममें यहाँ श्रीविशालाक्षीजीका नवीन मन्दिर बनवाकर उसमें भगवतीकी काले पत्थरकी नवीन प्रतिमा स्थापित की गयी; किंतु अत्यन्त श्रद्धावश न तो प्राचीन मूर्तिका विसर्जन किया गया और न ही प्राचीन लघुमन्दिरको तोड़ा गया। वर्तमानमें नवीन प्रतिमाके पीछे प्राचीन प्रतिमा एवं प्राचीन मन्दिर भी पूर्ववत् विद्यमान है। प्राचीन मूर्ति न हटानेके सम्बन्धमें अनेक दन्तकथाएँ भी प्रचलित हैं।

है। नवरात्रमें एवं प्रत्येक मासके शुक्लपक्षकी तृतीयाको सभी नौ गौरियोंकी यात्रा करने एवं वहाँके तीर्थोंमें स्नान करनेका जो नियम काशीखण्ड (अध्याय १००)-में दिया गया है, उसके अनुसार भी प्रतिमास शुक्ल तृतीयाको श्रीविशालाक्षीजीका दर्शन किया जाता है।

तन्त्रसारमें उनके ध्यानस्वरूपको बताते हुए कहा गया है कि भगवती विशालाक्षी साधकोंके समस्त शत्रुओंका विनाश कर डालती हैं तथा उन्हें उनका अभीष्ट प्रदान करती हैं। जगज्जननी विशालाक्षीदेवी सभी प्रकारके सौभाग्योंकी जननी हैं। जो भक्त इनकी शरणमें आते हैं, उनका सच्चा भाग्योदय हो जाता है। भगवतीकी असीम कृपा एवं दयालुतासे उनके भक्तजन देवताओंमें भी ईर्ष्या जगानेवाली अतुलनीय सम्पत्तिको अत्यन्त सरलतापूर्वक प्राप्त कर लेते हैं। विशालाक्षीदेवी गौरवर्णकी हैं तथा उनके दिव्य श्रीविग्रहसे तपाये हुए सुवर्णके समान कान्ति निरन्तर निकलती रहती है। भगवती अत्यन्त सुन्दरी और रूपवती हैं तथा वे सर्वदा षोडशवर्षीया दिखलायी देती हैं। जटाओंके मुकुटसे मण्डित तथा नाना प्रकारके सौभाग्याभरणोंसे अलंकृत भगवती रक्तवस्त्र धारण करती हैं और मुण्डोंकी माला पहने रहती हैं। दो भुजाओंवाली अम्बिका अपने एक हाथमें खड्ग तथा दूसरेमें खप्पर धारण किये रहती हैं—

ध्यायेद्देवीं विशालाक्षीं तप्तजाम्बूनदप्रभाम्।
द्विभुजामम्बिकां चण्डीं खड्गखर्परधारिणीम्॥
नानालङ्कारसुभगां रक्ताम्बरधरां शुभाम्।
सदा षोडशवर्षीयां प्रसन्नास्यां त्रिलोचनाम्॥
मुण्डमालावतीं रम्यां पीनोन्नतपयोधराम्।
शिवोपरि महादेवीं जटामुकुटमण्डिताम्॥
शत्रुक्षयकरीं देवीं साधकाभीष्टदायिकाम्।
सर्वसौभाग्यजननीं महासम्पत्प्रदां स्मरेत्॥

कामरूप-नीलाचल-कामाख्या शक्तिपीठ

(श्रीधरणीकान्तजी शर्मा)

हमारी पुण्यमयी भारतभूमिमें सभी तीर्थस्थान ऐसे सुरम्य तथा पावन स्थानोंपर विराजमान हैं कि वहाँ पहुँचते ही अनायास तन-मन पवित्र हो उठता है एवं नवजीवनका संचार होने लगता है। ये तीर्थसमूह नयन तथा मनके आनन्ददायक विषय हैं। ऐसे स्थानोंमें जानेसे स्वतः ही भगवद्भक्ति जाग्रत् होती है। भारतवर्षमें असंख्य तीर्थ विद्यमान हैं। कालिकापुराण, तन्त्रचूडामणि, शिवचरित आदि ग्रन्थोंमें इक्यावन महापीठों और छब्बीस उपपीठोंके वर्णन मिलते हैं। भगवान् विष्णुके सुदर्शन चक्रसे सतीका शरीर छिन्न-विच्छिन्न होकर जिन-जिन स्थानोंपर गिरा, उन-उन स्थानोंमें शक्तिपीठोंका आविर्भाव हो गया। इन स्थानोंमें देवीकी नित्य स्थिति रहती है। इसलिये ये शक्तिपीठ या सिद्धपीठ कहलाते हैं। इक्यावन पीठोंमें श्रीकामाख्या महापीठ सर्वश्रेष्ठ शक्तिपीठ माना गया है। यहाँ सतीदेवीका योनिभाग गिरा था। इस देवीपीठकी अधिष्ठात्री देवी तथा भैरवी कामाख्यादेवी या नीलपार्वती हैं। शिव और शक्ति हमेशा एक साथ रहते हैं। कामाख्यादेवीके भैरव उमानन्द शिव हैं।

कालिकापुराण (१८। ४७)-के अनुसार जहाँ-जहाँ सतीके पादादि अङ्ग गिरे, वहाँ-वहाँ सतीके स्नेहसे आबद्ध होकर स्वयं महादेव भी लिङ्गरूपसे अवस्थित हो गये—

यत्र यत्रापतन् सत्यास्तदा पादादयो द्विजाः।
तत्र तत्र महादेवः स्वयं लिङ्गस्वरूपधृक्॥
तस्थौ मोहसमायुक्तः सतीस्नेहवशानुगः॥

जिस स्थानमें देवीका योनिमण्डल गिरा था, वह स्थान तीर्थोंका चूडामणि है। ब्रह्मपुत्रनदके तीरपर नीलाचलपर्वतपर स्थित यह स्थान

महायोगस्थलके रूपमें विख्यात है—

तीर्थचूडामणिस्तत्र यत्र योनिः पपात ह।
तीरे ब्रह्मनदाख्यस्य महायोगस्थलं हि तत्॥

(बृहद्धर्मपुराण)

कालिकापुराणके अनुसार नीलाचलपर्वतपर देवीका योनिमण्डल गिरकर नीलवर्णका प्रस्तररूप हो गया, इस हेतु यह पर्वत नीलाचलके नामसे भी विख्यात है। उसी प्रस्तरमय योनिमें कामाख्यादेवी नित्य अवस्थान करती हैं। जो मनुष्य इस शिलाका स्पर्श करते हैं, वे अमरत्वको प्राप्तकर ब्रह्मलोकमें निवास कर अन्तमें मोक्षलाभ करते हैं—

सत्यास्तु पतितं तत्र विशीर्णं योनिमण्डलम्।
शिलात्वमगमच्छैले कामाख्या तत्र संस्थिता॥
संस्पृश्य तां शिलां मर्त्यो ह्यमरत्वमवाप्नुयात्।
अमर्त्यो ब्रह्मसदनं तत्रस्थो मोक्षमाप्नुयात्॥

नीलाचलपर सभी देवता पर्वतरूपमें अवस्थित हैं और उस पर्वतका अखिल भूभाग देवीका स्वरूप है—

तत्रत्या देवता सर्वाः पर्वतात्मकतां गताः।

× × ×

तत्रत्या पृथिवी सर्वा देवीरूपा स्मृता बुधैः।

(देवीभागवत ७। ३८। १७-१८)

पहले यह पर्वत बहुत ऊँचा था। महामायाका गुप्त अङ्ग पतित होनेसे पर्वत डगमगाने लगा। इसे क्रमशः पातालमें प्रवेश होते देख ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव तीनों देवोंने पर्वतके एक-एक शृङ्गको धारण किया तथापि वह पूर्ववत् पातालगामी होता ही गया। तब महामायाने अपनी आकर्षण शक्तिद्वारा पर्वतको धारण किया। यह पर्वतशृङ्ग ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवपर्वतके नामसे तीन शृङ्गोंमें विभाजित है। पूर्वमें जहाँ

भुवनेश्वरी महापीठ है उसे ब्रह्मपर्वत, मध्यभागमें जहाँ महामायाका पीठ है, उसे शिवपर्वत एवं पश्चिमभागमें जो पर्वत है वह विष्णुपर्वत अथवा वाराहपर्वतके नामसे प्रख्यात है। वाराहपर्वतपर वाराहीकुण्ड अब भी दिखायी पड़ता है।

कामरूपका परिचय—पुराणोंकी कथाके अनुसार रतिपति कामदेव शिवकी क्रोधाग्निमें यहीं भस्मीभूत हुए और पुनः उन्हींकी कृपासे उन्होंने अपना पूर्वरूप भी यहीं प्राप्त किया, अतः इस देशका नाम कामरूप पड़ा—

शम्भुनेत्राग्निनिर्दग्धः कामः शम्भोरनुग्रहात्।
तत्र रूपं यतः प्राप कामरूपं ततोऽभवत्॥

(कालिकापु० ५१।६७)

कुब्जिकातन्त्र (पटल ७)-में कहा गया है कि यहाँ कामनाके अनुरूप फल प्राप्त होता है, इसलिये यह कामरूपके नामसे प्रख्यात हुआ है। विशेषकर कलियुगमें यह स्थान विशिष्ट रूपसे जाग्रत् है। इस कारण भी इस स्थानका नाम कामरूप पड़ा है—

कामरूपं महापीठं सर्वकामफलप्रदम्।
कलौ शीघ्रफलं देवो कामरूपे जयः स्मृतः॥

कामरूप देश देवीक्षेत्रके नामसे भी तन्त्रों और पुराणोंमें वर्णित है। इसके समान दूसरा स्थान नहीं है। देवी और जगहोंमें दुर्लभ हैं, परंतु कामरूपमें घर-घरमें उनका निवास है—

कामरूपं देविक्षेत्रं कुत्रापि तत् समं न च।
अन्यत्र विरला देवी कामरूपे गृहे गृहे॥

(योगिनीतन्त्र, उत्तरखण्ड ६।१५०)

ब्रह्मवैवर्तपुराणके श्रीकृष्णजन्मखण्डमें वर्णित है कि शुभमुहूर्तमें शिव-पार्वतीके विवाहके समय कामपत्नी देवी रति भी विवाहस्थलमें उपस्थित हो पतिलाभके लिये एकाग्रचित्तसे महादेवकी वन्दना और

आराधना करने लगीं। विष्णु आदि सभी देवताओं और देवियोंने भी कामदेवको पुनः जीवित करनेके लिये शिवसे प्रार्थना की। शूलपाणिकी सुधामय दृष्टिके प्रभावसे कामदेव उस भस्मसे आविर्भूत हुए। इस प्रकार शिवकी कृपासे अपने पति कामदेवको प्राप्तकर रतिदेवी कृतार्थ हुईं। परंतु कामदेवको पहलेका-सा रूप प्राप्त न होनेके कारण पति और पत्नी दोनों पुनः महादेवके निकट जाकर बहुविध स्तुति करने लगे। भोलेनाथने सन्तुष्ट हो कामदेवको आदेश दिया कि भारतवर्षके ईशानकोणपर नीलाचलपर्वतपर अभी भी सती देहके इक्यावन खण्डोंमेंसे एक खण्ड गुप्तरूपमें है। वहीं जाकर देवीकी महिमाकी प्रतिष्ठा तथा उनका प्रचार करनेसे तुमको पहलेकी-सी कान्ति पुनः प्राप्त हो जायगी। तब नीलाचलपर्वतपर आकर उन्होंने महामुद्रापीठमें भक्तिपूर्वक नाना प्रकारसे पूजा-अर्चादि सम्पादित की और देवीकी नानाविध स्तुति की। इससे भगवती प्रसन्न हुईं और उन करुणामयी जगदम्बाकी कृपासे कामदेवने अपना पूर्वरूप प्राप्त कर लिया।

तदनन्तर सभी देव-देवियाँ यहाँ आकर महामायाकी स्तुति, पूजा आदि करने लगे। देवीमाहात्म्यके प्रचारके उद्देश्यसे कामदेवने एक मन्दिरका निर्माण करनेके लिये विश्वकर्माका आह्वान किया। विश्वकर्मा अपने शिल्पियोंके साथ छद्मवेशमें यहाँ उपस्थित होकर इस कार्यमें जुट गये और उन्होंने एक विचित्र मन्दिरका निर्माण किया। मन्दिरकी दीवारोंपर चौंसठ योगिनियों और अष्टादश भैरवोंकी मूर्ति खुदवाकर कामदेवने इसे आनन्दाख्यमन्दिरके नामसे प्रचारित किया। आजकल इस मन्दिरके नीचेका भाग ही शेष रह गया है। सर्वप्रथम कामदेवने ही इस महामुद्रापीठका माहात्म्य जगत्‌में प्रसिद्ध किया था। इसलिये इस महामुद्राको 'मनोभवगुहा' भी कहा जाता है।

कामरूपका प्राचीन नाम धर्मराज्य था। कामरूप भी बहुत प्राचीन नाम है। यह पुण्यभूमि भारतवर्षके ईशानकोणमें अवस्थित है।

रामायण, महाभारत, कई तन्त्रों और पुराणोंमें भी इस कामरूपक्षेत्रका उल्लेख पाया जाता है। योगिनीतन्त्र और कालिकापुराणमें विशेषकर कामरूपक्षेत्रका विशद वर्णन है। योगिनीतन्त्र (पूर्वखण्ड एकादशपटल १७-१८, २१)-में यहाँकी सीमा इस प्रकार निरूपित है—पश्चिममें करतोयासे दिक्करवासिनीतक, उत्तरमें कञ्जगिरी, पूर्वमें तीर्थश्रेष्ठ दिक्षु नदी तथा दक्षिणमें ब्रह्मपुत्र और लाक्षानदीके सङ्गमस्थानतक कामरूपकी सीमा है। कामरूप त्रिकोणाकार है। इसकी लम्बाई सौ योजन और विस्तार तीस योजन है। कालिकापुराण (५१। ६५-६६)-में भी प्राय: ऐसा ही वर्णन मिलता है।

प्राचीन कालमें यह क्षेत्र योगियों एवं ऋषियोंका निवासस्थल था। महामुनि वसिष्ठ, गोकर्ण तथा कपिलमुनि आदिके आश्रम इसी कामरूपमें अवस्थित थे। वर्तमान समयमें कामरूप असमका एक जनपदमात्र रह गया है। यहाँका नैसर्गिक सौन्दर्य अति मनोहर है। तीर्थश्रेष्ठ ब्रह्मपुत्र और कपिलागङ्गाके पवित्र स्रोत अभी भी इसे पवित्र किये हुए हैं। ब्रह्मपुत्रने प्रवाहित होकर इस स्थानको दो भागोंमें विभक्त किया है।

कामाख्यादेवीके मन्दिर-निर्माणके सम्बन्धमें भिन्न-भिन्न स्थानोंपर विविध उल्लेख प्राप्त होते हैं। कामदेवने विश्वकर्मासे आनन्दाख्य-मन्दिरका निर्माण करवाया था। यह भी लोककथा है कि एक मन्दिर नरकासुरके समयमें बना तथा उसके चारों मार्गोंपर व्याघ्रद्वार, हनुमन्तद्वार, स्वर्गद्वार, सिंहद्वार तथा प्रस्तरनिर्मित चारों पथ राजा नरकासुरने ही बनवाये थे। नरकासुर वाराहभगवान् और पृथिवीका पुत्र था। असुर जातिका होनेपर भी वह आर्यभावसे सम्पन्न था। भगवान् नारायणने प्रसन्न हो नरकासुरको महाफलदायी कामरूपके अन्तर्गत प्राग्ज्योतिषपुरका राज्य प्रदान किया तथा उसका विवाह विदर्भराजकी कन्या मायादेवीसे करा दिया और बताया कि द्वापरके अन्तमें तुम्हें पुत्रकी प्राप्ति होगी।

तुम देवताओं और ब्राह्मणोंके प्रतिकूल आचरण न करना तथा अपने स्वाभाविक आसुरी-चरित्रका प्रदर्शन न करना। जगन्माता महामाया कामाख्यादेवीके अतिरिक्त अन्य किसीकी उपासना न करना, अन्यथा प्राणोंसे हाथ धो बैठोगे—

महादेवीं महामायां जगन्मातरमम्बिकाम्।
कामाख्यां त्वं विना पुत्र नान्यदेवं यजिष्यसि॥
इतोऽन्यथा त्वं विहरन् गतप्राणो भविष्यसि।
तस्मान्नरक यत्नेन समयं प्रतिपालयत्॥

(कालिकापु० २७। १४४-१४५)

नरकासुर नारायणकी आज्ञा मानता गया। फलस्वरूप राज्यलक्ष्मीकी वृद्धि होती गयी। इस तरह त्रेतासे द्वापरतक उसने राज्य किया। वीर नरकासुर कामाख्याके प्रमुख भक्तोंमेंसे एक था।

द्वापरयुगके अन्तकालमें बाणासुर शोणितपुरका राजा हुआ। बाणासुर और नरकासुर दोनोंमें अत्यन्त घनिष्ठ मित्रता हुई। कुसंग और कुप्रेरणासे नरकासुरको ब्राह्मणों तथा देवताओंसे ईर्ष्या होने लगी। फलतः असुरराज नरकासुर देवीकी पूजा-अर्चनाके प्रति विद्वेषभावापन्न हो गया। एक दिन महर्षि वसिष्ठ महामायाके दर्शनार्थ आये। असुरराज नरकने उन्हें दर्शनमें बाधा उपस्थित की। इसपर रुष्ट होकर महर्षिने शाप दिया कि जबतक तू जीवित रहेगा महामाया सपरिवार अन्तर्धान रहेंगी—

त्वं यावज्जीविता पाप कामाख्यापि जगत्प्रभुः।
सर्वैः परिकरैः सार्द्धमन्तर्द्धानाय गच्छतु॥

(कालिकापुराण ४९। १८)

एक दिन भगवतीने नरकासुरको अपनी लावण्यमयी छटा दिखायी। जिसे देखकर वह मोहित हो गया। उसने उन्हें अपनी पत्नीके रूपमें अपनानेकी इच्छा प्रकट की। भगवतीने उसका अन्तकाल उपस्थित

जान छल करके कहा—यदि एक ही रातमें तू इस पर्वतके चारों ओर चार प्रस्तर-मार्ग और एक विश्राम-गृहका निर्माण कर देगा तो मैं तेरी पत्नी हो जाऊँगी, अन्यथा तेरी मृत्यु अवश्यम्भावी है। घमण्डमें चूर नरकासुर इस प्रस्तावपर राजी हो गया। उसने प्रसन्नतापूर्वक कार्य-प्रारम्भ किया, किंतु वह प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं कर सका। अतः देवीकी मायासे भगवान् श्रीकृष्णने नरकासुरका संहार कर दिया। नीलाचलपर्वतके दक्षिणमें वर्तमान पाण्डुगोहाटी मार्गपर जो पहाड़ियाँ हैं, उन्हें नरकासुर-पर्वत कहते हैं।

कामरूपमें एकके बाद एक बहुत-से हिन्दू राजा राज्य कर चुके हैं। युगपरिवर्तन होनेसे कुछ समयतक महामुद्रापीठ अप्रकट हो गया था। कामाख्यामन्दिरका निर्माण तथा जीर्णोद्धार करनेमें कामदेव, नरकासुर, विश्वसिंह, नरनारायण, चिलाराय, अहोम राजा आदिके नाम उपलब्ध होते हैं। ये सब कामरूपके राजा थे। अतः कामरूप राज्यका 'अहम' या 'आहोम' शब्दके अपभ्रंशसे 'असम' नाम हो गया।

कामरूप तथा पर्वतके चारों ओर अनेक तीर्थस्थान हैं। कामाख्या-देवीके मन्दिरसे पाँच कोसके भीतर अवस्थित जितने भी तीर्थस्थान हैं, वे सभी कामाख्या महापीठके ही अङ्गीभूत तीर्थके नामसे पुराणोंमें वर्णित हैं।

नीलाचलपर आरोहणका विधान

नीलाचलपर्वतपर आरोहणसे पूर्व उसपर पैर रखनेकी विवशताके लिये निम्न मन्त्रसे क्षमा माँगनी चाहिये—

नीलशैले गिरिश्रेष्ठ त्रिमूर्तिरूपधारक।
तवाहं शरणं पातः पादस्पर्शं क्षमस्व मे॥

गिरिश्रेष्ठ नीलाचल! आप ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव—तीनोंके स्वरूपको धारण करनेवाले हैं। मैं आपकी शरणमें आया हूँ। मेरे द्वारा

होनेवाले पैरके स्पर्शके लिये आप मुझे क्षमा प्रदान करें।

पहले नीलाचलपर्वतपर चढ़नेके लिये नरकासुरनिर्मित चारों ओरसे चार मार्ग थे। परंतु उत्तर और पश्चिमदिशामें मार्ग संकीर्ण और दुर्गम होनेके कारण उनपर यातायात नहीं होता था। धीरे-धीरे वे मार्ग लुप्त हो गये हैं।

कामाख्यादेवीके मन्दिरके समीप उत्तरकी ओर देवीकी क्रीडापुष्करिणी है। यह तालाब सौभाग्यकुण्डके नामसे प्रचलित है और कहा जाता है कि इसे इन्द्रादि देवताओंने बनवाया है। सौभाग्यकुण्डके निकट ही पश्चिमकी ओर स्नान, तर्पण, श्राद्ध और मुण्डनकी विधि है। इस कुण्डकी प्रदक्षिणा करनेसे पृथ्वी-प्रदक्षिणाका फल प्राप्त होता है। यात्री कुण्ड-स्नानादि सम्पन्न कर कुण्डके पास ही तीरपर अवस्थित गणेशजीकी मूर्तिका दर्शन करे। तदुपरान्त महामाया कामाख्याका दर्शन करनेके लिये भक्तियुक्त चित्तसे मन्दिरमें प्रवेश करे। कामाख्यादेवीके मन्दिरमें प्रवेश करते ही सामने बारह स्तम्भोंके मध्यस्थलमें देवीकी चलन्ता मूर्ति (चलमूर्ति—उत्सवमूर्ति) परिलक्षित होती है। इसीका दूसरा नाम हरगौरीमूर्ति या भोगमूर्ति है। इस मूर्तिके उत्तरमें वृषवाहन पञ्चवक्त्र एवं दशभुजविशिष्ट कामेश्वर महादेव अवस्थित हैं। दक्षिणभागमें षडानना, द्वादशबाहुविशिष्टा, अष्टादशलोचना और सिंहवाहिनी कमलासनादेवीकी मूर्ति है। यह मूर्ति महामाया कामेश्वरी नामसे प्रख्यात है। वार्षिक उत्सवों तथा विशेष पर्वोंके दिनोंमें यह चलन्ता मूर्ति भ्रमण करायी जाती है। तीर्थयात्री पहले कामेश्वरी देवी एवं कामेश्वर शिवका दर्शन करते हैं। इसके बाद देवीकी महामुद्राका दर्शन करते हैं। देवीका योनि-मुद्रापीठ दस सोपान नीचे अन्धकारपूर्ण गुफामें अवस्थित होनेके कारण वहाँ सदा दीपकका प्रकाश रहता है।

जिस तरह प्रयागमें मुण्डन एवं काशीमें दण्डी-भोज करवानेकी विधि है, उसी तरह कामाख्यामें कुमारी-पूजा अवश्यकर्तव्य है। यहाँ

कुमारी-पूजा करनेसे सभी देव-देवियोंकी पूजा करनेका फल तथा देवीकी कृपा प्राप्त हो जाती है।

कामाख्यादेवीके मन्दिरके अतिरिक्त महाविद्याओंके सात मन्दिरोंमेंसे भुवनेश्वरीमन्दिर नीलाचलपर्वतके सर्वोच्च शृङ्गपर होनेसे विशेष महत्त्वका है।

उमानन्दभैरवमन्दिर

उमानन्द कामाख्या देवीपीठके भैरव हैं। उमानन्दभैरवका मन्दिर नीलाचलपर्वतके पूर्व ब्रह्मपुत्रनदके मध्यभागमें एक शैलद्वीपपर अवस्थित है। शास्त्रोंकी निर्देशित विधिके अनुसार पहले उमानन्दभैरवका तदनन्तर पाण्डुघाटस्थ पञ्चपाण्डवका दर्शन करना चाहिये। अन्तमें तीर्थयात्री कामाख्यादेवीके दर्शनार्थ नीलाचलपर्वतपर आरोहण करे। कामाख्यादेवीकी प्रीतिके संवर्द्धनार्थ यात्री यहाँ तीन रात्रि वास करे, ऐसा विधान है।

उमानन्द महाभैरवका दर्शन कर उन्हें निम्न मन्त्रसे प्रणाम करना चाहिये—

धर्मकामार्थमोक्षाय सर्वपापहराय च।
नमः त्रिशूलहस्ताय उमानन्दाय वै नमः॥
प्रसीद पार्वतीनाथ उमानन्द नमोऽस्तु ते।
देव देव महादेव शशाङ्कितशेखर।
तव दर्शनमात्रेण पुनर्जन्म न विद्यते॥

धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष प्रदान करनेवाले, सभी प्रकारके पापोंका नाश करनेवाले तथा हाथमें त्रिशूल धारण करनेवाले भगवान् उमानन्दको बार-बार नमस्कार है। पार्वतीनाथ! प्रसन्न होइये। उमानन्द! आपको नमस्कार है। मस्तकपर चन्द्रमाको धारण करनेवाले देवदेव महादेव! आपके दर्शनमात्रसे पुनर्जन्म नहीं होता।

तीर्थके वार्षिक उत्सव एवं मेले

अम्बुवाची-उत्सव—ज्योतिषशास्त्रके अनुसार आषाढ़के महीनेमें मृगशिरानक्षत्रके चतुर्थ चरण और आर्द्रानक्षत्रके प्रथम चरणके मध्यमें पृथ्वी ऋतुमती होती है। इसी समयको अम्बुवाची कहते हैं। साधारणतः प्रतिवर्ष सौर आषाढ़ महीनेके दिनाङ्क ७ या ८ से ११ या १२ तक अम्बुवाचीयोग रहता है। इस अवसरपर कामाख्यामन्दिर तीन दिन बंद रहता है एवं दर्शनादि नहीं होते। चौथे दिन देवीका मन्दिर खुलता है और अभिषेक-पूजादि समाप्त होनेपर यात्रियोंको दर्शन करने दिया जाता है।

अम्बुवाचीका व्रत तन्त्रोक्त है। असम एवं बंगालमें इस व्रतकी मान्यता अधिक है। अम्बुवाचीयोगमें जगन्माता कामाख्यादेवीके रक्तवस्त्रको प्रसादरूपमें दिया जाता है। कामाख्याका रक्तवस्त्र धारण कर पूजा-पाठ करनेसे भक्तोंकी कामनाएँ पूर्ण होती हैं, यह सर्वथा सत्य है इसमें संदेह नहीं है—

कामाख्यावस्त्रमादाय जपपूजां समाचरेत्।
पूर्णकामं लभेद्देवि सत्यं सत्यं न संशयः॥

(कुब्जिकातन्त्र, सप्तम पटल)

पुष्याभिषेक—पौष महीनेकी कृष्ण द्वितीया या तृतीया तिथिको पुष्यनक्षत्रयोगमें यह उत्सव मनाया जाता है। उत्सवके पहले दिन चलन्ता (उत्सवमूर्ति) कामेश्वरमूर्तिको कामेश्वरमन्दिरमें लाकर उनका अधिवासन किया जाता है। कामाख्यामन्दिरमें चलन्ता कामेश्वरीमूर्तिका अधिवास होता है। दूसरे दिन कामेश्वरमन्दिरसे कामेश्वरकी मूर्ति ढाक-ढोल आदि वाद्ययन्त्र बजाकर लायी जाती है एवं भगवतीके पञ्चरत्न मन्दिरमें दोनों मूर्तियोंका शुभ-परिणय महासमारोहके साथ पूजा, यज्ञ-यज्ञादि अनुष्ठित होता है। पूजा-कर्मादिके बीच कामेश्वर-कामेश्वरीकी मूर्ति-प्रदक्षिणाका दृश्य विशेषरूपसे आकर्षणका केन्द्र है। इस तरह

हर–गौरी विवाह–महोत्सवका पालन होता है।

इसके अतिरिक्त यहाँ देवध्वनि, दुर्गापूजा, लक्ष्मीपूजा, कालीपूजा, वासन्तीपूजा, शिवरात्रि, श्रीकृष्णजन्माष्टमी, सरस्वतीपूजा तथा कृष्णदोलयात्रा आदि पूरे वर्षके पर्व धूम–धामके साथ मनाये जाते हैं।

[प्रेषक—श्रीगुरुप्रसादजी कोइराला]

कन्याकुमारी शक्तिपीठ—शुचीन्द्रम्

(सुश्री रामेश्वरीदेवीजी)

पौराणिक आख्यान है कि बाणासुरने घोर तपस्या करके भगवान् शंकरको प्रसन्न कर अमरत्वका वर माँगा। शंकरजीने कहा—कुमारी कन्याके अतिरिक्त तुम अन्य सभीके लिये अजेय होओगे। भगवान् शिवसे इस प्रकारका वर प्राप्तकर बाणासुर घोर उत्पाती बन गया। देवताओंपर भी उसने विजय प्राप्त कर ली, इतना ही नहीं, देवलोकमें उसने त्राहि–त्राहि मचा दी। तब भगवान् विष्णुके परामर्शसे देवताओंने एक महायज्ञका आयोजन किया। देवताओंद्वारा किये गये यज्ञकी चिदग्निसे माता दुर्गा अपने एक अंशसे कन्यारूपमें प्रकट हुईं।

देवीने पतिरूपमें शंकरको पानेके लिये दक्षिण समुद्रतटपर कठोर तप किया। तपस्यासे प्रसन्न हो भगवान् आशुतोषने उनका पाणिग्रहण स्वीकारा। देवताओंको चिन्ता हुई कि इनके पाणिग्रहण होनेपर तो बाणासुरका वध न हो सकेगा। अतएव नारदजीने विवाहार्थ आ रहे शंकरजीको शुचीन्द्रम् नामक स्थानपर अनेक प्रपञ्चोंमें उलझाकर इतनी देरतक रोके रखा कि प्रात:काल हो गया और विवाहमुहूर्त टल गया। भगवान् शंकर वहीं स्थाणुरूपमें स्थित रह गये। देवताओंकी युक्ति काम कर गयी।

अपना अभीष्ट अपूर्ण रहनेके कारण देवीने पुनः तपस्या करनी शुरू की। मान्यता है कि अभीतक वे कुमारीरूपमें तपस्यारत हैं।

अपने दूतोंद्वारा तपस्यामें लीन देवीके अद्भुत सौन्दर्यका वृत्तान्त जानकर बाणासुर देवीके पास गया और उनसे विवाह करनेके लिये हठ करने लगा। फलतः देवीमें और बाणासुरमें घोर युद्ध हुआ। अन्ततः देवीके हाथों बाणासुरका वध हुआ और देवगण आश्वस्त हुए।

कन्याकुमारी एक अन्तरीप है। यह भारतकी अन्तिम दक्षिणी सीमा है। पूर्वमें बंगालकी खाड़ी, पश्चिममें अरबसागर, दक्षिणमें हिन्दमहासागर है। तीनों समुद्रोंका संगम होनेसे यह स्थान तीर्थ बन गया। इसकी महिमाका वर्णन करते हुए महाभारतमें कहा गया है कि समुद्रतटपर स्थित कन्यातीर्थ (कन्याकुमारी)-में जाकर स्नान करनेसे मनुष्य सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है—

ततस्तीरे समुद्रस्य कन्यातीर्थमुपस्पृशेत्।
तत्रोपस्पृश्य राजेन्द्र सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(वनपर्व ८५।२३)

यहाँ बंगालकी खाड़ीके समुद्रमें सावित्री, गायत्री, सरस्वती, कन्याविनायकादि तीर्थ हैं। देवीके मन्दिरके दक्षिणमें मातृतीर्थ, पितृतीर्थ और भीमातीर्थ हैं। पश्चिममें थोड़ी दूरपर स्थाणुतीर्थ है। कहा जाता है कि शुचीन्द्रम्‌में शिवलिङ्गपर चढ़ाया जल भूमिके भीतरसे आकर यहाँ समुद्रमें मिलता है।

कन्याकुमारीमन्दिर समुद्रतटपर है। वहाँ स्नानघाट भी है। घाटपर गणेशजीका मन्दिर है। स्नानकर गणेशजीके दर्शन करनेके उपरान्त लोग कन्याकुमारीके दर्शन करने मन्दिरमें जाते हैं। कई द्वारोंके भीतर जानेपर कुमारीदेवीके दर्शन होते हैं। देवीकी प्रतिमा भावोत्पादक एवं भव्य है। देवीके एक हाथमें माला है। आश्विन नवरात्र, चैत्रपूर्णिमा, आषाढ़-अमावास्या, आश्विन-अमावास्या, शिवरात्रि आदि पर्वोंपर

विशेष उत्सव होते हैं। विशेष उत्सवोंपर देवीका हीरोंसे शृङ्गार किया जाता है। रात्रिमें देवीका विशेष शृङ्गार होता है।

निज-मन्दिरके उत्तरमें अग्रहारके बीच भद्रकालीका मन्दिर है। ये कुमारीदेवीकी सखी मानी जाती हैं। वस्तुतः कन्याकुमारी ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक पीठ है। यहाँ देवी सतीका पृष्ठभाग (मतान्तरसे ऊर्ध्वदन्त) गिरा था। यहाँकी देवी 'नारायणी' तथा भैरव 'स्थाणु' (मतान्तरसे 'संहार') हैं।

मन्दिरमें और भी अनेक देव-विग्रह हैं। मन्दिरसे थोड़ी दूरपर पापविनाशनम् पुष्करिणी है। यहाँ समुद्रतटपर ही एक बावली है जिसका जल मीठा है। यात्री इस बावलीके जलसे भी स्नान करते हैं। इसे 'मण्डूकतीर्थ' भी कहते हैं। यहाँ समुद्रतटपर लाल तथा काली बारीक रेत मिलती है और श्वेत मोटी रेत भी मिलती है। जिसके दाने चावल-सरीखे लगते हैं। समुद्रमें शङ्ख, सीपी आदि भी बहुतायतमें पाये जाते हैं।

देवीके मन्दिरके दर्शनके पश्चात् नावद्वारा लोग विवेकानन्दशिलापर स्थित विवेकानन्दजीकी प्रतिमाके दर्शन-हेतु भी जाते हैं। यह शिला समुद्रमें मन्दिरसे थोड़ी दूर ही है। कहा जाता है कि स्वामी विवेकानन्दजी इस शिलापर बैठकर चिन्तन-मनन करते थे।

शुचीन्द्रम् क्षेत्रको 'ज्ञानवनक्षेत्रम्' भी कहते हैं। महर्षि गौतमके शापसे इन्द्रको यहीं मुक्ति मिली और वे शुचि (पवित्र) हो गये, इसलिये इस स्थानका नाम 'शुचीन्द्रम्' पड़ा।

कुरुक्षेत्रका भद्रकाली शक्तिपीठ

(श्रीहनुमानप्रसादजी भारुका)

कुरुक्षेत्र, जहाँ सतीका दक्षिण गुल्फ गिरा था, ५१ शक्तिपीठोंमेंसे भद्रकालिकापीठके नामसे जाना जाता है। यहाँकी शक्ति 'सावित्री' और 'भैरव' स्थाणु हैं। इस पवित्र स्थलपर चैत्र एवं आश्विनके नवरात्रमें माताजीका विशाल मेला लगता है। श्रीमद्भागवतमहापुराणकी एक कथाके अनुसार नन्दबाबा तथा माता यशोदाने बालक श्रीकृष्णका मुण्डन-संस्कार नवरात्रमें भद्रकालीमन्दिरमें किया था। भगवान् श्रीकृष्णकी सदासे कुरुक्षेत्र शक्तिपीठपर आस्था रही है। कहा जाता है महाभारतयुद्ध होनेके पूर्व भगवान् श्रीकृष्णने इस देवीपीठपर माता भद्रकालीसे सोनेका घोड़ा चढ़ानेकी प्रतिज्ञा की थी। आज भी यात्रीगण प्रतीकके रूपमें लकड़ीके घोड़े चढ़ाते हुए देखे जाते हैं।

भारतकी राजधानी नयी दिल्लीसे अम्बाला जाते समय मार्गमें कुरुक्षेत्र स्टेशन है। इस स्टेशनसे झांसारोडपर स्थाणु शिवमन्दिरके पास भद्रकालीदेवीका मन्दिर स्थित है। इन्हींके नामपर इस स्थानका नाम 'स्थाणेश्वर' (थानेश्वर) है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि पहले स्थाणु शिवका दर्शन कर तब भद्रकालीका दर्शन करना चाहिये। कहा जाता है कि महाभारत-युद्धमें विजयके लिये पाण्डवोंने स्थाणु शिव और भगवती भद्रकालीका दर्शन-पूजन कर आशीर्वाद प्राप्त किया था। यहाँ शक्तिपीठके पास ही द्वैपायन सरोवर भी है। सूर्यग्रहणके अवसरपर लाखोंकी संख्यामें भक्तगण दूर-दूरसे आकर यहाँ एकत्र होते हैं। सूर्यग्रहणके अवसरपर यहाँ स्नानका बड़ा महत्त्व है। श्रीमद्भागवतमहापुराण दशम स्कन्धके अनुसार भगवान् श्रीकृष्ण अपने बन्धु-बान्धवोंके साथ यहाँ सूर्यग्रहणपर पर्वस्नान-हेतु आये थे।

कुरुक्षेत्रमें आनेवाले भक्तगण श्रीज्योतिसर, सर्वेश्वर महादेवजी,

सूर्यकुण्ड, कौरव-पाण्डव-मन्दिर, थानेश्वर महादेवजी, नरकातारीकुण्ड, लौसनी माताजी, हनुमान्‌जी, ब्रह्मसरोवर, बिरलामन्दिर, गीताभवन आदि धर्मस्थानोंके दर्शन करते हुए आत्मशान्ति प्राप्त करते हैं।

पश्चिम-तिब्बतस्थित शक्तिपीठ—'मानससरोवर'

(दण्डीस्वामी श्रीमद्दत्तयोगेश्वरदेवतीर्थजी महाराज)

कैलास सर्वश्रेष्ठ हिमशिवलिङ्ग है जो साक्षात् शिव-सदृश है और मानससरोवर उत्कृष्ट शक्तिपीठ है, यहाँपर सतीके दाहिने हाथकी हथेली गिरी थी। यहाँके शक्तिपीठकी देवीका नाम 'कुमुदा' है—'**मानसे कुमुदा प्रोक्ता।**' यह स्थान अत्यन्त रम्य एवं साधनानुकूल है।

मानससरोवरकी यात्रामें उत्तराञ्चलके काठगोदाम रेलवे-स्टेशनसे बसद्वारा अल्मोड़ा तथा वहाँसे पिथौरागढ़ पहुँचा जा सकता है। काठगोदामसे दूसरा बसमार्ग बैजनाथ, बागेश्वर, डीडीहाट होकर पिथौरागढ़ जाता है या सीधे टनकपुर रेलवे-स्टेशनसे पिथौरागढ़ जाया जा सकता है। पिथौरागढ़से अस्कोट, धारचूला, तवाघाट होते हुए थानीधार (पांगु), सोसा, नारायण-आश्रम होकर सिरदंग सिरखा, जिप्ती, मालपा, बुड्डी होकर गरब्यांगसे गुंजी जाना होता है। गुंजीसे कालापानी, नवीडांग होकर हिमाच्छादित लिपु-ला (१७,९०० फुट ऊँचाई) पार करके पश्चिम-तिब्बत होते हुए तकलाकोट नामक मण्डी पहुँचा जाता है। वहाँसे टोयो, रिंगुंग, बलढक होकर पवित्रतम मानससर (मानसरोवर)-के दर्शन होते हैं।

शक्तिपीठोंके प्रादुर्भावके विषयमें देवीपुराण, ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण तथा तन्त्रग्रन्थोंमें विस्तारसे कथा प्राप्त होती है, तदनुसार भगवान् विष्णुद्वारा सुदर्शन चक्रसे सतीके मृतदेहको काटनेपर

जहाँ-जहाँ वे खण्ड गिरे, वहाँ-वहाँ शक्तिपीठका निर्माण हुआ। देवीपुराणमें ऐसा उल्लेख है कि शिवकी अनेकानेक मूर्तियाँ इन स्थानोंपर आविर्भूत हो गयीं।

सतीके अङ्ग पृथ्वीपर ५१ स्थानोंमें गिरे, अतः वहाँ-वहाँपर शक्तिपीठका निर्माण हुआ। (कुछ ग्रन्थोंमें १०८ शक्तिपीठोंकी संख्या लिखी है।) प्रत्येक शक्तिपीठमें एक 'शक्ति' और एक 'भैरव' विभिन्न रूप और विभिन्न नाम धारणकर निवास करते हैं। इन स्थानोंको महाशक्तिपीठ भी कहा गया है। देवीभागवत, शिवचरित्र (मराठी), तन्त्रचूडामणि इत्यादि ग्रन्थोंमें इन शक्तिपीठोंका विस्तृत वर्णन है। ये शक्तिपीठ परम पवित्र एवं त्वरित फलदायक माने गये हैं। शाक्तसम्प्रदायके साधक इन शक्तिपीठोंकी यात्रा, देव-देवीके दर्शन एवं वहाँपर साधना कर शक्तिके दर्शन और कृपा प्राप्त करते हैं—

'तेषां मन्त्राः प्रसिध्यन्ति मायाबीजविशेषतः॥'

(देवीपुराण)

हिन्दू, बौद्ध एवं जैनधर्मग्रन्थोंमें कैलास शक्तिपीठ मानसरोवरका गौरवमय वर्णन पाया जाता है। हिन्दूधर्मग्रन्थ मानसरोवरका मानस-सर, बिन्दुसर, मानससरोवर इत्यादि नामोंसे वर्णन करते हैं तथा उसके प्रति अटूट श्रद्धा-भक्ति रखते हैं। सृष्टिकर्ता ब्रह्माके मनद्वारा निर्मित होनेसे इस सरोवरका नाम 'मानससर किंवा' 'मानसरोवर' पड़ा। इस बातका समर्थन करते हुए महर्षि विश्वामित्र अयोध्यापति रामभद्रसे कहते हैं कि—

कैलासपर्वते राम मनसा निर्मितं परम्॥
ब्रह्मणा नरशार्दूल तेनेदं मानसं सरः।

(वाल्मीकीय रामायण १।२४।८-९)

इसी ग्रन्थमें अन्यत्र कहा गया है कि राजा मान्धाताने इस सरोवरके तटपर दीर्घकालपर्यन्त उत्कट तपस्या की थी, अतः इसका

नाम मान्धाताके नामसे 'मानसरोवर' पड़ा। तन्त्रचूडामणि, दाक्षायणीतन्त्र, योगिनीतन्त्र, देवीभागवत इत्यादि ग्रन्थोंमें मानससरका महाशक्तिपीठके रूपमें उल्लेख है। उसमें देवी कुमुदाका निवास कहा गया है। 'तन्त्रचूडामणि' नामक ग्रन्थमें कहा है कि—

मानसे दक्षहस्तो मे देवी दाक्षायणी हरः।
अमरो भैरवस्तत्र सर्वसिद्धिविधायकः॥

अर्थात् मानसरोवरकी पवित्र भूमिपर सतीके देहकी दाहिने हाथकी हथेली गिरी थी, अतः वहाँ सर्वसिद्धिप्रदा भगवती 'दाक्षायणी' एवं भैरव 'अमर' विराजमान हैं।

ऐसी भी जनश्रुति है कि द्वापरयुगमें एक चक्रवर्ती राजाने कैलासके समीप महायज्ञका भव्य आयोजन करवाया था। मानसरोवरकी भूमिमें यज्ञकुण्ड था। उसमें पूर्णाहुतिके बाद जलका फव्वारा फूटा और कुछ दिनोंमें वहाँपर विशाल जलभण्डार 'मानसरोवर' बन गया।

महाभारत (वनपर्व)-में ऐसा कहा गया है कि मानसरोवर उत्तम तीर्थ है और उसमें अवगाहन करनेवाला रुद्रलोकमें जाता है—

ततो गच्छेत राजेन्द्र मानसं तीर्थमुत्तमम्।
तत्र स्नात्वा नरो राजन् रुद्रलोके महीयते॥

रामायणमें भी कहा गया है कि मानसरोवरमें शिव हंसरूपसे विहार करते रहते हैं। पुराणोंमें ऐसा उल्लेख है कि ब्रह्माके मनसे निर्मित मानसरोवरके दर्शनमात्रसे दर्शनार्थीके पापोंका क्षालन हो जाता है तथा उसमें स्नान एवं उसके पवित्र जलका पान करनेसे ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। उसके सुरम्य तटपर निवास कर मन्त्रसाधना करनेपर मन्त्रसिद्धि होती है तथा भगवती महाशक्ति कुमुदाकी असीम अनुकम्पा प्राप्त होती है और उसका आवागमन मिट जाता है।

यहाँ निवास करनेवाले साधकको युगके अन्तमें पार्षदों तथा पार्वतीसहित इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले भगवान् शंकरका

प्रत्यक्ष दर्शन होता है। इस सरोवरके तटपर चैत्रमासमें कल्याणकामी याजक पुरुष अनेक प्रकारके यज्ञोंद्वारा परिवारसहित पिनाकधारी भगवान् शिवकी आराधना करते हैं। इस सरोवरमें श्रद्धापूर्वक स्नान एवं आचमन करके पापमुक्त हुआ जितेन्द्रिय पुरुष शुभ लोकोंमें जाता है, इसमें संशय नहीं है—

क्षीणे युगे तु कौन्तेय शर्वस्य सह पार्षदैः॥
सहोमया च भवति दर्शनं कामरूपिणः।
अस्मिन् सरसि सत्रैर्वै चैत्रे मासि पिनाकिनम्॥
यजन्ते याजकाः सम्यक् परिवारं शुभार्थिनः।
अत्रोपस्पृश्य सरसि श्रद्दधानो जितेन्द्रियः॥
क्षीणपापः शुभाँल्लोकान् प्राप्नुते नात्र संशयः।

(महाभारत, वनपर्व १३०।१४—१७)

मानसरोवरकी पवित्रतम भूमि शक्तिशाली सूक्ष्म आन्दोलनोंसे सतत विकम्पित रहती है, जो प्रतीति कराती है कि इस स्थानपर अवश्य महाशक्तिपीठ है। मानसरोवर अत्यन्त सुन्दर, शान्त एवं आनन्दसे परिपूर्ण है। उसका जल स्फटिक-सा स्वच्छ, मधुरतर, स्निग्ध और सुपाच्य है।

मानसरोवरविषयक एक कथा इस प्रकार है कि जब तारकासुर देवों और मानवोंको अत्यन्त त्रास देने लगा, तब उसका वध करनेके लिये देवोंने भगवान् शिवसे महापराक्रमी सुपुत्र उत्पन्न करनेहेतु प्रार्थना की। शिवने 'तथास्तु' कहा। उसी दिन जब भगवती शिवा (पार्वती) मानसरोवरके तटपर भ्रमण करनेके लिये गयीं; तब उन्होंने देखा कि छः दिव्य स्त्रियाँ कमलपत्रके द्रोणमें मानसरोवरका पवित्रतम जल भरकर ले जा रही थीं। पार्वतीने उनका परिचय और जल ले जानेका प्रयोजन पूछा। उनसे प्रत्युत्तर मिला कि आज शुभ दिनमें जो कोई पतिव्रता स्त्री इस पवित्रतम जलका पान करेगी, उसके उदरसे

देवसेनानायक-जैसा महापराक्रमी पुत्र उत्पन्न होगा। यह सुनकर पार्वतीने उस द्रोणमें भरा पवित्रतम जल पीनेकी इच्छा व्यक्त की। उन स्त्रियों (कृत्तिकाओं)-ने कहा कि हम यह पवित्रतम जल आपको देंगी, किंतु इस जलके प्रभावसे होनेवाले आपके महापराक्रमी सुपुत्रका नाम हमारे (कृत्तिकाओंके) नामपर ही 'कार्तिकेय' रहेगा। पार्वतीने उनका प्रस्ताव स्वीकार कर उस दिव्य जलका पान किया; फलतः भगवान् कार्तिकेयका जन्म हुआ। देवसेनानायक बनकर युद्धमें उन्होंने तारकासुरका वध किया और देव-मानवोंको त्रासमुक्त कर दिया।

बौद्ध-धर्मग्रन्थोंने भी मानसरोवरका अत्यन्त महत्त्व दर्शाया है। भगवान् बुद्धके जन्मके साथ मानसरोवरका घनिष्ठ सम्बन्ध कहा गया है।

पालि भाषामें लिखे हुए बौद्ध-ग्रन्थोंमें मानसरोवरको 'अनो-ताता-सर' अर्थात् पवित्रताका सरोवर कहा है। बुद्धदेवके समयसे ही बौद्धलोग पश्चिम-तिब्बतस्थित महातीर्थ कैलास एवं मानसरोवरकी यात्रा तथा परिक्रमा करते आये हैं। वैदिक कालमें भी ऋषि-मुनिलोग कैलास एवं मानसरोवरकी यात्रा और प्रदक्षिणा करते थे, ऐसा प्रमाण प्राचीन धर्मग्रन्थोंसे प्राप्त होता है।

तिब्बती धर्मग्रन्थ कंगरीकरछकमें मानसरोवरको देवी दोर्जे फांग्मो (बज्रवाराही)-का निवासस्थान माना है। इस पवित्र सरोवरमें भगवान् देमचोग (दे=सुख, मचोग=महा) भगवती दोर्जे फांग्मोके साथ पर्वदिनमें विहार करते हैं। इस धर्म-ग्रन्थमें मानसरोवरको 'त्सो-मफम' कहा है और बताया है कि भारतदेशसे एक बड़ी मछलीने आकर मानसरोवरमें मफम (छब आवाज) करते हुए प्रवेश किया था, अतः इस मधुर जलके महासरोवरका नाम 'त्सो-मफम' पड़ गया।

जैन-धर्म-ग्रन्थोंमें कैलासको अष्टापद कहा गया है और

मानसरोवरको 'पद्मह्रद' बताया है। इस पवित्रतम सरोवरमें कतिपय तीर्थंकरोंने स्नान किया था और उसके सुरम्य तटपर निवास कर तपस्या की थी। एक जैन-ग्रन्थमें ऐसा लिखा है कि लङ्कापति रावण लङ्कासे अपने पुष्पक-विमानमें बैठकर एक दिन अष्टापद (कैलास) एवं पद्मह्रद-मानसरोवरकी यात्रा और दोनों ही तीर्थोंकी प्रदक्षिणा करनेके लिये आया था। लङ्केश रावण शक्तिका भी उपासक था, अतः उसने महाशक्तिपीठ मानसरोवरमें स्नान करना चाहा, किंतु देवताओंने स्नान करनेसे रोका। यह देखकर महाबली रावणने अपने सामर्थ्यसे मानसरोवरके समीप ही एक बड़े सरोवरका निर्माण किया और उसमें स्नान किया। उस सरोवरका नाम 'रावणह्रद' पड़ा। पवित्रतम मानसरोवरका जल जिस छोटी-सी नदीद्वारा 'रावणह्रद' (राक्षसताल)-में जाता है, उस नदीको लंगक-त्सु (लंगक—राक्षस, त्सु—नदी) गङ्गा-छु कहते हैं। राक्षसतालसे पवित्र 'सरयूगङ्गा' निकलती है।

यह दिव्य शक्तिपीठ मानसरोवर समुद्रतलसे १४,९५० फुटकी ऊँचाईपर है।

आद्याशक्ति और नेपाल शक्तिपीठ-गुह्येश्वरीदेवी

(डॉ० श्रीशिवप्रसादजी शर्मा)

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

जो पराशक्तिरूपादेवी समस्त प्राणियोंमें शक्तिरूपसे विराजमान हैं, उन आद्याशक्ति भगवतीको बारम्बार नमस्कार है।

ब्रह्मामें सृष्टि करनेकी, विष्णुमें पालन करनेकी और शिवमें संहार करनेकी शक्ति है। सूर्य संसारको प्रकाश देते हैं। शेषनाग और कच्छपमें

पृथिवी धारण करनेकी शक्ति है। अग्निमें प्रज्वालन शक्ति और पवनमें गतिशील करनेकी शक्ति है। तात्पर्य यह है कि सभीमें जो शक्ति विराजमान है, वस्तुतः वह आद्याशक्तिके कारण ही है। उनके प्रभावसे शिव शिवताको प्राप्त होते हैं। जिसपर उन शक्तिरूपिणीकी कृपा न हुई चाहे वह कोई भी हो शक्तिहीन हो जाता है। विद्वज्जन उसे असमर्थ कहते हैं। सबमें व्यापक रहनेवाली जो आद्याशक्ति है, उन्हींका 'ब्रह्म' नामसे निरूपण किया गया है।

वे ही आद्याशक्ति इस अखिल ब्रह्माण्डको उत्पन्न करती हैं और उसका पालन भी करती हैं। वे ही आद्याशक्ति इच्छा होनेपर इस चराचर जगत्का संहार भी कर लेनेमें संलग्न रहती हैं। सभी देवता अपने कार्यमें तब सफल होते हैं, जब आद्याशक्ति उन्हें सहयोग पहुँचाती हैं। इससे सिद्ध होता है कि वे शक्ति ही सर्वोपरि हैं। वे सगुणा साकारा, निर्गुणा निराकाराके भेदसे अनेक रूपमें जानी जाती हैं—

'निराकारा च साकारा सैव नानाभिधा स्मृता।'

स्कन्दपुराणके केदारखण्डमें भगवती शक्तिकी महिमाका आख्यान विस्तारसे वर्णित है। वहाँ बताया गया है कि पिता दक्षप्रजापतिके यज्ञमें परमेश्वर शिवका भाग न देखकर देवी सतीने यज्ञशालामें ही योगाग्नि प्रकट कर अपना शरीर भस्मीभूत कर दिया। वीरभद्र आदि प्रचण्ड गणोंने दक्षका यज्ञ विध्वंस किया, भगवान् शिव सतीकी निर्जीव देह कन्धेपर लेकर भ्रमण करने लगे। भगवान् शिवके शोकसंतप्त नृत्यसे कहीं प्रलय न हो जाय, भगवान् विष्णुने अपने सुदर्शन चक्रसे सतीकी देहको काटना प्रारम्भ किया, इससे शरीरके विभिन्न भाग कटकर गिरने लगे। जहाँ-जहाँ महादेवी सतीके शरीरका भाग गिरे वहाँ-वहाँ शक्तिपीठ बने। प्रत्येक पीठमें महादेव तथा योगिनी (ईश्वरी) प्रकट हुईं। जबतक भगवती सतीके प्रत्येक अङ्ग गिरकर समाप्त न हुए, तबतक भगवान् शिव भ्रमण करते ही रहे। भ्रमण करते हुए जब भगवान् शंकर

नेपालमें पहुँचे तो वहाँपर भगवती सतीके शरीरका गुह्यभाग गिरा। वह नेपालशक्तिपीठके नामसे प्रसिद्ध हुआ। यहाँकी शक्ति 'गुह्येश्वरीदेवी' के नामसे प्रसिद्ध हैं। यहींपर चन्द्रघण्टा योगिनी तथा सिद्धेश्वर महादेवका प्रादुर्भाव हुआ। यहाँ शिव शक्तिस्वरूपसे विराजमान हुए। यह क्षेत्र साधकोंको सिद्धि देनेवाला है। शक्तिसङ्गमतन्त्रमें कहा गया है कि जटेश्वरसे प्रारम्भकर योगेशतक साधकोंको सिद्धि प्रदान करनेवाला नेपाल-देश है—

जटेश्वरं समारभ्य योगेशान्तं महेश्वरि।
नेपालदेशो देवेशि साधकानां सुसिद्धिदः॥

इस पुण्यभूमि सिद्धपीठमें इन्द्र आदि देवताओंने आकर शक्तिकी आराधना करते हुए कठोर तप किया। भगवती गुह्येश्वरीने प्रकट होकर देवताओंको वरदान दिया कि आपलोग सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि—इन चारों युगोंमें तैंतीस कोटि देवताके नामसे प्रख्यात रहोगे। विश्वमें आपलोगोंकी पूजा होगी तथा आप सभी आराधकोंको ईप्सित फल दे सकोगे। इस प्रकार वरदान पाकर देवगण प्रसन्न होकर सदैव शक्तिकी आराधनामें रत रहते हुए स्वर्ग लौट आये।

यह सिद्धपीठ किरातेश्वरी महादेवमन्दिरके समीप पशुपतिनाथ-मन्दिरसे सुदूर पूर्वमें वागमती गङ्गाके उस पार टीलेपर विराजमान है। यहाँ प्राचीन कालमें श्लेषमान्तवन था, जिसमें अर्जुनने तपस्या की थी, कैलासपति किरातके रूपमें इस जंगलमें विचरते रहे। वह वन आज गाँवका रूप ले चुका है। कुछ भाग अब भी शेष है। काठमाण्डूका हवाई अड्डा उसी वनभागमें बना है। वहाँ पहुँचकर जो भी भक्त नर-नारी भगवती गुह्येश्वरीका दर्शन-पूजन करते हैं, उनकी मनोकामना भगवती गुह्येश्वरी पूरा करती हैं।

वहाँ पहुँचनेके लिये अनेक साधन हैं। हवाई जहाजसे जानेपर हवाई अड्डेसे निकलकर गौशाला होते हुए टैम्पो या टैक्सीद्वारा वागमतीके

किनारेतक जाकर पुल पार करके शक्तिपीठतक आसानीसे पहुँचा जा सकता है। बससे जानेपर भी बस अड्डेसे रत्नपार्क शहीद फाटक होते हुए, गौशाला ही पहुँचते हैं। सिटीबस, टैक्सी आदि सब प्रकारके साधन सुलभ हैं। शरीरके किसी भी अङ्गमें (विशेषकर गुप्ताङ्गमें) कोई रोग हो तो भगवती गुह्येश्वरीका दर्शन, वहाँपर पाठ करने या करानेसे रोगसे मुक्ति एवं सभी प्रकारकी कामना पूर्ण होती है।

नेपालशक्तिपीठ 'गुह्येश्वरी' के पास सिद्धेश्वर महादेवका लिङ्ग भगवान् सृष्टिकर्ता ब्रह्माद्वारा प्रतिष्ठित है। जिसकी अर्चना-वन्दनासे भक्तजन इच्छित फल प्राप्त कर सकते हैं।

माँ कल्याणी (ललिता)-शक्तिपीठ—प्रयाग*

(पं० श्रीसुशीलकुमारजी पाठक)

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥

(श्रीदुर्गासप्तशती ४।५)

अर्थात् जो पुण्यात्माओंके घरोंमें स्वयं ही लक्ष्मीरूपसे, पापियोंके यहाँ दरिद्रतारूपसे, शुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुषोंके हृदयमें बुद्धिरूपसे, सत्पुरुषोंमें श्रद्धारूपसे तथा कुलीन मनुष्योंमें लज्जारूपसे निवास करती हैं, उन आप भगवती दुर्गाको हम नमन करते हैं। देवि! सम्पूर्ण विश्वका पालन कीजिये।

* प्रयागमें तीन शक्तिपीठोंके माननेकी परम्परा है—१-अक्षयवट किलेके पास कल्याणी (ललिता)-शक्तिपीठ, २-मीरापुरमें ललितादेवी-शक्तिपीठ तथा ३-दारागंजसे पूर्व अलोपी-शक्तिपीठ।

भारतकी गौरवमयी विशिष्ट आध्यात्मिक परम्परामें 'शक्ति-उपासना' का विशिष्ट स्थान रहा है। शक्ति-उपासनाकी विशेष महत्ताके कारण ही उत्तरसे दक्षिणतक तथा पूर्वसे पश्चिमतक सारे भारतमें शक्तिके अनेकानेक उपासना और अर्चना-स्थल स्थापित हैं। इन उपासना-स्थलोंमें शक्तिके ५१ महापीठोंका अपना विशेष महत्त्व है। तीर्थराज प्रयागमें सतीके हाथकी अङ्गुली गिरी थी। अतः यह स्थान भी ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक है। यही कारण है कि प्रयागराजको तीर्थराजके साथ ही 'पीठराज' भी कहा जाता है। प्रयागमें भगवती ललिता कल्याणीदेवीके रूपमें विश्रुत हुईं।

'प्रयागमाहात्म्य' के अनुसार ललिता और कल्याणी एक ही हैं। ललिता कल्याणीदेवीके रूपमें ही प्रतिष्ठित हुई हैं। पुराणोंके अनुसार प्रयागमें भगवती ललिताका स्थान अक्षयवटके पवित्र प्राङ्गणसे वायव्यकोणमें अर्थात् उत्तर-पश्चिमके कोनेमें यमुनातटके पास बताया गया है और वहाँ ललितादेवीके साथ भव-भैरव विराजमान हैं।

मत्स्यपुराणके तेरहवें अध्यायमें १०८ पीठोंका वर्णन है। जिसमें कल्याणी ललिताका नाम आया है—'**प्रयागे ललिता देवी कामाक्षी गन्धमादने।**' महर्षि भरद्वाजकी ये ही अधिष्ठात्री हैं।

माँ कल्याणीका प्रतिमा-मण्डल

अपने अञ्चलमें सिद्धपीठकी शक्तिको अनुस्यूत किये भगवती कल्याणीका प्रतिमा-मण्डल दिव्य आभा और आकर्षणका केन्द्र है। प्रतिमा-मण्डलके मध्यभागमें माँ कल्याणी (भगवती ललिताजी) चतुर्भुजरूपमें सिंहपर आसीन हैं। मूर्तिके शीर्षभागमें एक आभाचक्र है, मस्तकपर योनि, लिङ्ग एवं फणीन्द्र शोभायमान हैं। मध्यमूर्तिके वामपार्श्वमें दस महाविद्याओंमेंसे एक भगवती छिन्नमस्ताकी अनुपम प्रतिमा विराजमान है। दक्षिणभागमें देवाधिदेव महादेव और माता

पार्वतीकी मनोरम प्रतिमा है। मुख्य प्रतिमाके ऊपर दाएँ भागमें विघ्नविनाशक गजाननकी सुन्दर प्रतिमा है। मध्यमूर्तिके ऊपर बायीं ओर अतुलित बलधाम रुद्रावतार पवनसुत श्रीहनुमान्‌जीकी मूर्ति सुशोभित है। इसी मध्यमूर्तिके ऊपरकी ओर भगवान् श्रीदत्तात्रेयजीकी आकर्षक प्रतिमा है। माता कल्याणीजीकी मनोरम प्रतिमाके निम्न भागमें भगवतीकी सेविकाओंके रूपमें दो-दो योगिनियाँ हैं। इस प्रकार आद्याशक्ति कल्याणकारिणी भगवतीके साथ नयनाभिराम देवमण्डल विद्यमान है।

मन्दिरमें नित्यप्रति प्रातः ५-३० बजे तथा सायं ७-३० बजे भव्य आरती होती है। सोमवार तथा शुक्रवारको विशेष अर्चना की जाती है। नित्यप्रति प्रातः और सायंकाल 'श्रीदुर्गासप्तशती' का पाठ होता है।

चैत्र नवरात्र तथा आश्विन नवरात्रमें विशेष पूजन-अर्चन, शतचण्डीपाठ, यज्ञ, हवन तथा शृङ्गारका आयोजन होता है। इसके अतिरिक्त आषाढ़ कृष्ण अष्टमी, होलीके बादकी चैत्र कृष्ण अष्टमी, शरत्पूर्णिमाके पूर्वकी चतुर्दशी (ढ़ेढ़िया)-के अवसरपर भी विशेष शृङ्गार होता है। चैत्र कृष्ण अष्टमीको अति प्राचीन त्रिदिवसीय मेला लगता है। यह मेला सप्तमीसे प्रारम्भ होकर नवमीतक चलता है।

क्षीरग्राम शक्तिपीठ

(श्रीसनत्कुमारजी चक्रवर्ती)

पश्चिम बंगालके वर्दवान जिलेमें कटवा महाकुमार-मंगलकोट थाना क्षीरग्राम एक सुबृहत् गण्डग्राम और एक महापीठ स्थान है। क्षीरग्राममें ग्रामकी अधिष्ठातृदेवी योगाद्या या युगाद्या और भैरव क्षीरकण्टक हैं। वर्दवानसे ३९ कि०मी० उत्तर-पश्चिम एवं कटवासे २१कि०मी० दक्षिण-पश्चिममें स्थित इस ग्राममें बसद्वारा पहुँचा जा सकता है। मन्दिरमें एक यात्री-निवास है।

प्रजापति दक्षके यज्ञमें देवी सतीने देहत्याग कर दिया था, जिसे भगवान् विष्णुने सुदर्शन चक्रसे ५१ खण्डोंमें विभक्त कर दिया। वे अंग जिन-जिन स्थानोंमें गिरे, वे स्थान महापीठ हो गये। क्षीरग्राममें सतीकी देहका दक्षिण चरणका अँगूठा गिरा था। वहाँ देवी युगाद्या और भैरव क्षीरकण्टकका निवास है।

तन्त्रचूडामणिमें वर्णन आया है—

भूतधात्री महामाया भैरवः क्षीरकण्टकः।
युगाद्यायां महादेवी दक्षिणाङ्गुष्ठः पदो मम॥

कुब्जिकातन्त्रमें क्षीरग्रामकी दिव्यपीठमें गणना की गयी है। गन्धर्वतन्त्र, बृहन्नीलतन्त्र, शिवचरित, पीठनिर्णय (महापीठनिरूपणम्) साधकचूडामणि आदि ग्रन्थोंमें इस पीठका उल्लेख है।

बँगला भाषाके अनेक ग्रन्थोंमें युगाद्यादेवीकी वन्दना मिलती है। सर्वप्राचीन युगाद्यावन्दना कृत्तिवास रामायणके निर्माता पण्डित कृत्तिवासद्वारा लिखित है। उन्होंने क्षीरग्रामका वर्णन किया है। कृत्तिवासकृत बँगला रामायणमें वर्णन आता है कि त्रेतायुगमें लंकाके राजा रावणके पातालवासी पुत्र महिरावणने कालीकी पूजा की थी, उन देवीका नाम युगाद्या था। राम-रावण युद्धमें रावणका पितृभक्त पुत्र महिरावण राम और लक्ष्मणको पाताल ले गया। पवनपुत्र हनुमान्ने पातालमें महिरावण और अहिरावणका सिर काटकर देवीको उपहारमें दे दिया और राम-लक्ष्मणका उद्धार किया। उद्धारके बाद प्रस्थानके समय हनुमान्जीको देवीने आदेश दिया कि मुझे यहाँसे ले चलो। किंवदन्ती है कि हनुमान्जी उन पातालनिवासिनी देवी युगाद्याको मृत्युलोकमें क्षीरग्राममें ले आये। यहाँ क्षीरग्रामकी पीठदेवी भूतधात्री महामायाके साथ देवी युगाद्याकी भद्रकाली मूर्ति एक हो गयी और देवीका नाम 'युगाद्या' या 'योगाद्या' प्रसिद्ध हो गया।

बँगलादेशका करतोयातट शक्तिपीठ

(श्रीगंगाबख्शसिंहजी)

'**सर्वरूपमयी देवी सर्वं देवीमयं जगत्**'— वैसे तो यह सम्पूर्ण संसार ही देवीमय है, सृष्टिके कण-कणमें उन्हीं आद्याशक्ति जगन्मयी जगदम्बाका निवास है, परंतु कुछ विशिष्ट स्थान—दिव्यक्षेत्र ऐसे भी हैं, जहाँ देवी चिन्मयरूपसे विराजती हैं और उनकी इसी संनिधिके कारण वे स्थान भी चिन्मय हो गये हैं। शक्तिके इन्हीं स्थलोंको देवी-उपासनामें शक्तिपीठकी संज्ञा दी गयी है। एक पौराणिक आख्यायिकाके अनुसार देवीदेहके अंगोंसे इनकी उत्पत्ति हुई, जो भगवान् विष्णुके चक्रसे विच्छिन्न होकर ५१ स्थलोंपर गिरे थे।

बँगलादेश जो वस्तुतः भारतके बंगाल प्रान्तका ही पूर्वीभाग है, प्राचीन कालसे ही शक्त्युपासनाका बृहत्केन्द्र रहा है। इतना ही नहीं; यहाँके चट्टल शक्तिपीठके शिवमन्दिरकी तो तेरहवें ज्योतिर्लिङ्गके रूपमें मान्यता है। तन्त्रग्रन्थोंमें इस प्रदेशका विशिष्ट महत्त्व वर्णित है। शक्तिसंगमतन्त्रके अनुसार यह क्षेत्र सर्वसिद्धिप्रदायक है—

रत्नाकरं समारभ्य ब्रह्मपुत्रान्तगं शिवे।
बङ्गदेशो मया प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदर्शकः॥

बँगलादेशमें चार शक्तिपीठोंकी मान्यता है—चट्टलपीठ, करतोयातटपीठ, विभाषपीठ तथा सुगन्धापीठ। इनमें करतोयातटका विशेष महत्त्व है। यहाँ इसी पीठका संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है—

करतोयातट शक्तिपीठ प्राचीन बंगदेश और कामरूपके सम्मिलनस्थलपर १०० योजन विस्तृत शक्तित्रिकोणके अन्तर्गत आता है। यह सिद्धिक्षेत्र है। यहाँ देवता भी मृत्युकी इच्छा करते हैं फिर अन्य प्राणियोंकी तो बात ही क्या—

करतोयां समासाद्य यावच्छिखरवासिनीम्।
शतयोजनविस्तीर्णं त्रिकोणं सर्वसिद्धिदम्।

देवा मरणमिच्छन्ति किं पुनर्मानवादयः॥

इस क्षेत्रके घर-घरमें देवीका निवास माना जाता है। स्वयं देवीका ही कथन है—

'सर्वत्र विरला चाहं कामरूपे गृहे गृहे॥'

जिस प्रकार काशीमें श्रीमणिकर्णिकातीर्थ है, उसी प्रकार करतोयातटपर भी श्रीमणिकर्णिकामन्दिर था, जहाँ भगवान् श्रीरामने शिव-पार्वतीके दर्शन किये थे। आनन्दरामायणके यात्राकाण्ड (९।२)-में श्रीरामकी तीर्थयात्राके अन्तर्गत इसका वर्णन प्राप्त होता है—

पश्यन्स्थलानि सम्प्राप्य तप्तां श्रीमणिकर्णिकाम्।
करतोयानदीतोये स्नात्वाऽग्रे न ययौ विभुः।

भगवान् श्रीरामके यज्ञमें अश्वके करतोयातटतक ही जानेका वर्णन प्राप्त होता है, जिससे यह ज्ञात होता है कि उस समय भी इसकी प्रतिष्ठा थी —

ययौ वाजी वायुगत्या शीघ्रं ज्वालामुखीं प्रति।
दोषभीत्या करतोयां तीर्त्वा नैवाग्रतो गतः॥

(आनन्दरामायण, यागकाण्ड ३।३५)

करतोयानदीको 'सदानीरा' कहा जाता है, श्रावण और भाद्रपदमासमें प्रायः नदियोंका जल दूषित होकर स्नानके अयोग्य हो जाता है, पर यह तब भी पवित्र बनी रहती है। वायुपुराणके अनुसार यह नदी ऋक्षपर्वतसे निकली है और इसका जल मणिसदृश उज्ज्वल है। इसको '**ब्रह्मरूपा करोद्भवा**' भी कहा गया है।

कहा जाता है कि इसकी उत्पत्ति शिव-पार्वतीके पाणिग्रहणके समय शिवजीके हाथपर डाले गये जलसे हुई है, इसीलिये इसकी शिवनिर्माल्यसदृश महत्ता है, इसका लंघन नहीं करना चाहिये। आनन्दरामायणमें वर्णन आता है कि प्रभु श्रीराम तीर्थयात्रा करते हुए करतोयातटतक गये थे, पर उसके लंघनमें दोष जानकर उस पार नहीं गये। इसी करतोयाके तटपर देवी सतीके वाम तल्पका पतन हुआ था,

जिसके कारण यह स्थान शक्तिपीठ बना। यहाँ देवी सती अपर्णारूपसे तथा भगवान् शिव वामनभैरवरूपसे निवास करते हैं। यहाँ पहले भैरवरूप शिवके दर्शन कर तब देवीका दर्शन करना चाहिये। तन्त्रचूडामणिके पीठनिर्णय-प्रकरणमें करतोयातटका वर्णन इस प्रकार प्राप्त होता है—

करतोयातटे तल्पं वामे वामनभैरवः।
अपर्णा देवता तत्र ब्रह्मरूपा करोद्भवा॥

यह स्थान बोंगड़ा जनपदके भवानीपुर नामक ग्राममें स्थित है। मन्दिर लाल बलुआ पत्थरका बना है, जिसमें टेराकोटाका सुन्दर कार्य हुआ है। महाभारतके वनपर्व (८५।३)-के अन्तर्गत तीर्थयात्राविषयक प्रसंगमें यहाँके माहात्म्यका वर्णन प्राप्त होता है—

करतोयां समासाद्य त्रिरात्रोपोषितो नरः।
अश्वमेधमवाप्नोति प्रजापतिकृतो विधिः॥

अर्थात् प्रजापति ब्रह्माजीने यह विधान बनाया है कि जो मनुष्य करतोयामें जाकर वहाँ स्नानकर तीन रात्रि उपवास करेगा, उसे अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त होगा।

भारतके बारह प्रधान देवी-विग्रह और उनके स्थान

(प्रातःस्मरणीय बारह प्रधान देवी-विग्रह)

काञ्चीपुरे तु कामाक्षी मलये भ्रामरी तथा। केरले तु कुमारी सा अम्बाऽऽनर्तेषु संस्थिता॥
करवीरे महालक्ष्मीः कालिका मालवेषु सा। प्रयागे ललिता देवी विन्ध्ये विन्ध्यनिवासिनी॥
वाराणस्यां विसालाक्षी गयायां मङ्गलावती। बङ्गेषु सुन्दरी देवी नेपाले गुह्यकेश्वरी॥
इति द्वादशरूपेण संस्थिता भारते शिवा। एतासां दर्शनादेव सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
अशक्तो दर्शने नित्यं स्मरेत् प्रातः समाहितः। तथाप्युपासकः सर्वैरपराधैर्विमुच्यते॥

(त्रिपुरारहस्य, माहात्म्य खं० अ० ४८।७१—७५)

श्रीकृष्णकी क्रीडाभूमिमें माँ कात्यायनीपीठ—वृन्दावन

(स्वामी श्रीविद्यानन्दजी महाराज)

इन्द्रादि देवता भगवती कात्यायनीकी स्तुति करते हुए कहते हैं—

देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य॥

(श्रीदुर्गासप्तशती ११।३)

शरणागतकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि! हमपर प्रसन्न होओ। सम्पूर्ण जगत्की माता! प्रसन्न होओ। विश्वेश्वरि! विश्वकी रक्षा करो। देवि! तुम्हीं चराचर जगत्की अधीश्वरी हो।

अनन्तकालसे भारतवर्ष पवित्र स्थानों, तीर्थों, सिद्धपीठों, मन्दिरों एवं देवालयोंसे सुसज्जित और सुशोभित होता रहा है। जिस पावन तथा पवित्र भूमिमें गङ्गा, यमुना, सरस्वती आदि नदियों एवं राम-कृष्ण आदि आराध्य देवोंने अवतार ग्रहण किया और अधर्मका नाश कर धर्मकी रक्षा की, ऐसे सुन्दर पवित्रतम स्थानोंको तीर्थ एवं सिद्धपीठके नामसे पुकारा गया। जिनमें भगवान् नन्दनन्दन अशरणशरण करुणावरुणालय, व्रजेन्द्रनन्दन श्रीकृष्णचन्द्रकी पावन पुण्यमय क्रीडाभूमि श्रीधाम वृन्दावनमें कलिन्दगिरिनन्दिनी सकलकल्मषहारिणी श्रीयमुनाके सन्निकट राधाबागस्थित अति प्राचीन सिद्धपीठके रूपमें श्रीश्रीमाँ कात्यायनीदेवी विद्यमान हैं।

कात्यायनीके एक ध्यानस्वरूपमें बताया गया है कि ये देवी हाथमें उज्ज्वल चन्द्रहास नामक तलवार लिये रहती हैं तथा श्रेष्ठ सिंहपर आरूढ़ रहती हैं। ये दानवोंका विनाश करनेवाली तथा सब प्रकारके

मङ्गलोंको प्रदान करनेवाली हैं—

चन्द्रहासोज्ज्वलकरा शार्दूलवरवाहना।
कात्यायनी शुभं दद्याद्देवी दानवघातिनी॥

(तत्त्वनिधि, शक्तिनिधि, ५६)

भगवान् श्रीकृष्णकी क्रीडाभूमि श्रीधाम वृन्दावनमें भगवती सती देवीके केश गिरे थे। ब्रह्मवैवर्तपुराण एवं आद्यास्तोत्र आदि कई स्थानोंपर उल्लेख है—'**व्रजे कात्यायनी परा**' अर्थात् वृन्दावनस्थित पीठमें पराशक्ति महामाया माता श्रीकात्यायनीके नामसे प्रसिद्ध हैं। वृन्दावनस्थित कात्यायनीपीठ भारतवर्षके शक्तिपीठोंमें एक अत्यन्त प्राचीन सिद्धपीठ है। देवर्षि श्रीवेदव्यासजीने श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धके बाईसवें अध्यायमें उल्लेख किया है कि व्रज-गोपिकाओंने भगवान् श्रीकृष्णको पानेके लिये देवी कात्यायनीका पूजन-व्रत किया तथा इस मन्त्रका जप किया था—

कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरि।
नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः॥

कात्यायनी! महामाये! महायोगिनी! सबकी एकमात्र स्वामिनी! आप नन्दनन्दन श्रीकृष्णको हमारा पति बना दीजिये। देवि! हम आपके चरणोंमें नमस्कार करती हैं।

श्रीदुर्गासप्तशतीमें देवीके अवतरित होनेका उल्लेख इस प्रकार मिलता है—

'नन्दगोपगृहे जाता यशोदागर्भसम्भवा।'

मैं नन्दगोपके घरमें यशोदाके गर्भसे अवतार लूँगी।

देवी दुर्गाके नौ रूपोंमें छठा रूप देवी कात्यायनीका ही है—'**षष्ठं कात्यायनीति च।**' श्रीमद्भागवतमें भगवती कात्यायनीके पूजनद्वारा भगवान् श्रीकृष्णको प्राप्त करनेके साधनका सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है। यह व्रत पूरे मार्गशीर्ष (अगहन)-मासमें होता है। भगवान् श्रीकृष्णको

पानेकी लालसामें व्रजाङ्गनाओंने अपने हृदयकी लालसा पूर्ण करने-हेतु यमुनानदीके किनारेसे घिरे हुए 'राधाबाग' नामक स्थानपर माता श्रीकात्यायनीदेवीका पूजन किया था।

कामरूपमठके तत्कालीन स्वामीजी महाराजके संन्यासाश्रममें दीक्षित शिष्यद्वारा सर्वशक्तिशालिनी माँके आदेशानुसार १ फरवरी १९२३ माघी पूर्णिमाके दिन वैदिक-याज्ञिक ब्राह्मणोंद्वारा इस मन्दिरकी प्रतिष्ठाका कार्य पूर्ण कराया गया। माँ कात्यायनीके साथ-साथ पञ्चानन शिव, विष्णु, सूर्य तथा सिद्धिदाता श्रीगणेशजी महाराजकी मूर्तियोंकी भी इस मन्दिरमें प्रतिष्ठा की गयी।

राधाबागमन्दिरके अन्तर्गत गुरुमन्दिर, शंकराचार्यमन्दिर, शिवमन्दिर तथा सरस्वतीमन्दिर भी दर्शनीय हैं। यहाँकी आध्यात्मिकता तथा अलौकिकताका मुख्य कारण है—साक्षात् सर्वशक्तिस्वरूपिणी, जन्म-मरण-कष्टहारिणी, आह्लादमयी, करुणामयी माँ कात्यायनी और सिद्धिदाता श्रीगणेशजी एवं अर्द्धनारीश्वर (गौरीशंकर महादेव)-का विद्यमान होना।

श्रीशंकराचार्यमन्दिरमें जहाँ विप्र-वटुओंद्वारा वेदध्वनिसे सम्पूर्ण वेद-विद्यालय एवं सम्पूर्ण कात्यायनीपीठका प्राङ्गण पवित्रतम हो जाता है, वहीं कात्यायनीपीठमें स्थित औषधालयद्वारा विभिन्न असाध्य रोगियोंका सफलतम उपचार होता है तथा मन्दिरस्थित गोशालामें गायोंकी सेवा-पूजा होती है। माँ कात्यायनीकी कृपाशक्तिका फल है कि कई बार दर्शन करनेके बाद भी उनके दर्शनकी लालसा और जाग्रत् होती चली जाती है, यह एक विलक्षण बात है।

मथुराका प्राचीन शक्तिपीठ—चामुण्डा

(डॉ० श्रीराजेन्द्ररंजनजी चतुर्वेदी, डी० लिट्०)

व्रजमण्डल कृष्णभक्तिका केन्द्र है*, इसके साथ ही यदि व्रजके प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व और लोकजीवनकी परम्परापर दृष्टिपात किया जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि शक्ति-उपासनाकी दृष्टिसे भी 'व्रजमण्डल' और उसके केन्द्र मथुराका महत्त्व कम नहीं है। श्रीमद्भागवतमें व्रजमें प्रचलित शक्ति-उपासनाके प्रमाण स्थान-स्थानपर मौजूद हैं। श्रीकृष्णको पतिके रूपमें पानेके लिये गोपकन्याएँ कात्यायनीका व्रत-अनुष्ठान करती थीं। श्रीमद्भागवत (१०।३४)-में एक और महत्त्वपूर्ण संदर्भ आया है कि एक बार नन्दबाबाके नेतृत्वमें सभी व्रजगोपोंने बैलगाड़ियोंपर सवार होकर भगवतीकी 'जात' देनेके लिये 'अम्बिकावन' की यात्रा की थी। वहाँ उन्होंने सरस्वतीनदीमें स्नान करके भगवान् शंकर (भूतेश्वर) तथा जगदम्बा (चामड़)-का पूजन-अर्चन किया था।

वर्तमान मथुरा नगरके उत्तर-पश्चिममें 'मथुरा-वृन्दावन रेलवे-लाइन' के 'मसानी स्टेशन' के आस-पासका क्षेत्र अम्बिकावन कहा जाता है। 'मसानी' श्मशानी शब्दका अपभ्रंश है। यहाँ श्मशान रहा होगा, मसानीका मन्दिर आज भी मौजूद है। भूतेश्वर महादेव मथुराके क्षेत्रपाल हैं, महाभैरव हैं। स्नान, दान, तर्पण, अनुष्ठान, व्रत-उपवास आदिमें यहाँ जो संकल्प बोला जाता है, उसमें मथुरा मण्डलको

---

* श्रीमद्भागवत (१०।३१।१)-में गोपियाँ व्रजकी महिमाका वर्णन करते हुए कहती हैं—

'जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि।'

अर्थात् प्यारे [कृष्ण!] तुम्हारे जन्मके कारण वैकुण्ठ आदि लोकोंसे भी व्रजकी महिमा बढ़ गयी है। तभी तो सौन्दर्य और मृदुलताकी देवी लक्ष्मीजी अपना निवासस्थान वैकुण्ठ छोड़कर यहाँ नित्य-निरन्तर निवास करने लगी हैं, इसकी सेवा करने लगी हैं।

'**भूतेश्वरक्षेत्रे**' कहा जाता है। सामान्य लोकभाषामें लोग मथुराके कोतवालके रूपमें भूतेश्वरका स्मरण करते हैं। भूतेश्वरमहादेव मथुराके लोकजीवनमें सर्वप्रमुख और सर्वप्राचीन महादेव हैं। जबतक इनका दर्शन न किया जाय, तबतक मथुरा-यात्रा सफल नहीं होती। वाराहपुराणके अनुसार एक बार महादेवजीने एक सहस्त्रवर्षपर्यन्त घोर तप किया, तब प्रसन्न होकर भगवान् विष्णुने उनसे वर माँगनेको कहा। इसपर महादेवजीने कहा कि आप अपनी मथुरापुरीमें रहनेके लिये मुझे जगह दीजिये। श्रीविष्णुने सहर्ष वरदान दिया कि आप यहाँ क्षेत्रपति होकर रहिये। भूतेश्वरके समीप ही श्रीकृष्णका जन्मस्थान है। मथुरा-दिल्ली रेलवेकी बड़ी लाइनपर भूतेश्वरमहादेव नामक एक स्टेशन भी बनाया गया है। भूतेश्वरसे लेकर गोकर्णेश्वरमन्दिरतक जिसे सरस्वती-संगम-तीर्थ भी माना जाता है, दुर्गाके अनेक प्राचीन मन्दिर हैं।

भूतेश्वरके मन्दिरमें ही दाहिनी ओर लगभग साठ-सत्तर सीढ़ियाँ उतरकर भूगर्भ-गुफामें भगवतीके दर्शन होते हैं, इन्हें पातालेश्वरी कहा जाता है। यह गुफा भूतेश्वरमन्दिरके साधना-केन्द्रकी प्राचीनताको प्रमाणित करती है। इसे 'उमापीठ' कहनेकी भी मान्यता है। इसी प्रकार बरसाना शक्तिपीठकी भी प्रसिद्धि है। एक दूसरी परम्परामें चामुण्डाको 'उमापीठ' माना गया है। यहाँ भगवतीके कुछ और भी प्राचीन स्थान हैं—महाविद्या, सरस्वती, योगमाया तथा पथवारी आदि। धूरकोट नामसे प्रसिद्ध इस क्षेत्रमें अनेक टीले, कुण्ड, सरोवर तथा कूपोंके भग्नावशेष हैं, जो यहाँकी प्राचीनता सिद्ध करते हैं।

सरस्वतीनदी इस भूखण्डमें प्रवाहित होती हुई यमुनामें मिलती थी, इस बातके प्रमाण पुराणसाहित्यमें मिलते हैं। सरस्वतीनदीका प्रवाह सूखनेकी कहानी बहुत बड़ी है और उसके सम्बन्धमें विद्वानोंने बहुत अनुसन्धान-कार्य किया है, परंतु मथुराकी लोकश्रुतिमें दो बातें उल्लेखनीय हैं, एक तो मथुराकी परिक्रमामें सरस्वतीकुण्डकी महिमा

है। परिक्रमार्थी सरस्वतीकुण्डपर पहुँचकर 'थाम' लेते हैं। चालीस वर्ष पहलेतक (जबसे कुण्डका पानी सूख गया है, उससे पहलेतक) परिक्रमार्थी यहाँ आचमन और मार्जन भी करते थे। दूसरी बात है—बहुलावनसे आनेवाले बरसाती पानीके प्रवाहको स्थानीय लोग आज भी सरस्वती-नाला कहते हैं। इससे इस मान्यताको बल मिलता है कि नन्दगोपने यहीं सरस्वतीमें स्नान करके भगवतीकी 'जात' दी थी, भूतेश्वर तो सरस्वतीके तटपर ही हैं।

इस मान्यताकी चर्चा करना बहुत आवश्यक है कि महाविद्या मथुराका बहुत प्राचीन शक्तिपीठ है और माथुर चतुर्वेदी ब्राह्मणोंके यहाँ विवाहमें जो शाखोच्चार किया जाता है उसमें गाया जाता है—'**श्रीकुलदेवि महाविद्ये वरदे त्वत्प्रसादात्०।**' जनश्रुतिके अनुसार नन्दबाबाने भगवतीका अर्चन यहीं किया था। यहाँ साम्राज्यदीक्षित-जैसे तन्त्र-उपासकोंने साधना की थी। देवीभागवतमें भारतवर्षके १०८ शक्तिपीठोंका प्रसंग है, वहाँ मथुरामें 'देवकीपीठ' का उल्लेख है। श्रीकृष्णजन्मस्थानके निकटस्थ महाविद्यामन्दिरकी पहचान प्राचीन देवकीपीठके रूपमें की जाती है। परंतु तान्त्रिक उपासकोंके बीचमें जब-जब ५१ महापीठोंकी चर्चा हुई, तब-तब चामुण्डाका उल्लेख आया।

'तन्त्रचूडामणि' नामक ग्रन्थके अनुसार भगवान् शंकर सतीके शवको सिरपर रखकर ले जा रहे थे, तब इस स्थानपर केशपाश (जूड़ा)-का पतन हुआ। इसे मौलिशक्तिपीठ माना जाता है। हालाँकि तन्त्रचूडामणिका वाक्य है—'**भूतेशो भैरवस्तत्र उमानाम्नी च देवता।**' भूतेश्वर और चामुण्डाके बीच १ $\frac{1}{2}$ कि०मी० का अन्तराल है और उमा नामसे तो इस बीच कोई प्राचीन मन्दिर है नहीं, वैसे उमा सामान्यरूपसे जगदम्बाका वाचक है। इसलिये चामुण्डाको उमापीठकी मान्यता तान्त्रिकोंमें प्रचलित है। यदि चामुण्डाजीके विग्रहमें मुखको देखें तो योनिमण्डलकी आकृति दिखायी देती है और योनिका

प्रतीक तन्त्रका मूल प्रतीक है, हालाँकि योनि और त्रिकोणमें कोई भेद नहीं है।

महाविद्यामें जो प्रतिमा है, वह नीलसरस्वतीके ध्यानके अनुसार विरचित है। पातालेश्वरीमें भी प्रतिमा है। इन तथ्योंपर विचार करनेपर प्रतीत होता है कि चामुण्डा ही तन्त्रचूडामणिद्वारा उल्लिखित शक्तिमहापीठ है। '**वृन्दावने**' शब्द भी एक संकेत है। चामुण्डाजी वृन्दावन-मथुरा-मार्गपर स्थित हैं। चामुण्डाजीके समीप ही गणेशटीला है, जो उच्छिष्ट गणपतिका साधनापीठ है। भैरव-भूतेश्वर, चामुण्डा-उमा तथा उच्छिष्ट गणपति—यह तान्त्रिकसाधनाकी त्रिपुटी बनी है। तन्त्रचूडामणिका उल्लेख तान्त्रिकसाधनासे जुड़ा है।

यह उल्लेखनीय है कि 'योगिनीहृदय' तथा 'ज्ञानार्णव' के अनुसार जहाँ ऊर्ध्वभागके अङ्ग गिरे, वहाँ वैदिक तथा दक्षिणमार्गकी और हृदयसे निम्न भागके अङ्गोंके पतनस्थल वाममार्गकी साधनाके केन्द्र हैं। तन्त्रशास्त्रमें ५१ पीठोंसे ५१ मातृकावर्णोंके प्रादुर्भावका उल्लेख है। 'क्ष' वर्णका केन्द्र होनेके कारण इसे 'क्षत्रपीठ' भी कहा जाता है। चामुण्डा लोकमाता हैं। चामड़ नामसे व्रजके गाँव-गाँवमें पूजास्थान बने हुए हैं। वैयाकरण लोग 'चामुण्डा' शब्दका अर्थ ब्रह्मविद्या बतलाते हैं। मार्कण्डेयपुराणमें चण्ड-मुण्डका वध करनेके कारण चामुण्डा शब्दकी सिद्धि मिलती है—

यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता।
चामुण्डेति ततो लोके ख्याता देवि भविष्यसि॥

दुर्गाकवचमें चामुण्डाको शववाहना कहा गया है। शवका अर्थ शून्य अर्थात् सदाशिव है। भगवती महात्रिपुरसुन्दरीका पञ्चासन भी सदाशिवका है। जब 'श्रीयन्त्र' का आवरण-अर्चन किया जाता है तो भूपुरकी दूसरी रेखामें चामुण्डाका अर्चन किया जाता है।

बाणभट्टने अपनी कादम्बरीमें चामुण्डा (चामड़)-के मन्दिरका

विस्तृत वर्णन किया है। हर्षचरितमें भी विन्ध्यवनके एक जंगली गाँवका वर्णन करते हुए बाणभट्टने चामुण्डादेवीका उल्लेख किया है। चामुण्डाको शबर-निषाद-संस्कृतिकी देवीके रूपमें अत्यन्त प्राचीन लोकपरंपरासे मान्यता प्राप्त है। व्रजके लोकजीवनमें आज भी पशुओंकी रक्षाके निमित्त 'चमड़भेंट' चढ़ायी जाती है। इस समय जो अनुष्ठान किया जाता है, उसे किसानलोग 'चामड़िया टंटघंट' कहते हैं। लोकजीवनकी ये परम्पराएँ चामुण्डाकी आस्थाकी प्राचीनता प्रमाणित करती हैं। इस प्रकार 'चामुण्डा' नामक साधनास्थल मथुराका वह प्राचीन शक्तिपीठ है, जिसकी गणना भारतवर्षके ५१ महापीठोंमें की गयी है।

आरासुरी अम्बाजी शक्तिपीठ—गुजरात

गुजरातमें अनेक शान्त और पवित्र स्थान हैं, जो देवीकी उपासनाके लिये प्रसिद्ध हैं। इस प्रदेशमें भगवतीके अनेक प्राचीन मन्दिर यह प्रमाणित करते हैं कि यहाँके लोग देवी आद्याशक्तिकी पूजा और भक्तिमें अटूट विश्वास रखते हैं। नवरात्र-पर्वमें समस्त गुजरातमें देवीके गीतों और गरबाकी धूम मच जाती है। सारा गुजराती समाज देवीके गीत गाते हुए झूम-झूमकर गरबा करता है। गुजरातमें तीन शक्तिपीठ प्रमुख हैं—(१) अम्बिका, (२) कालिका तथा (३) श्रीबाला बहुचरा। इनके अतिरिक्त कच्छमें आशापुरा, भुजके पास रुद्राणी, काठियावाड़में द्वारकाके निकट अभयमाता, हलवदके पास सुन्दरी, बढ़वाणमें बुटमाता, नर्मदातटपर अनसूया, पेटलादके पास आशापुरी, घोघाके पास खोडियारमाता आदि अन्य मान्य स्थान हैं।

आरासुरी अम्बिका (अम्बाजी) शक्तिपीठ—कहा जाता है कि गुजरातके अर्बुदारण्यक्षेत्रमें पर्वत-शिखरपर सतीके हृदयका एक

भाग गिरा था, आजतक उसी अङ्गकी पूजा यहाँ अम्बा या अम्बिका-देवीके रूपमें होती है। यह शक्तिपीठ अत्यन्त रमणीय स्थानपर स्थित है। यहाँ माताजीका शृङ्गार प्रातःकाल बालारूपमें, मध्याह्न युवतीरूपमें और सायं वृद्धारूपमें होता है। वास्तवमें यहाँ माताका कोई विग्रह नहीं है। 'बीसायन्त्र' मात्र है, जो शृङ्गारभेदसे तीन रूपोंमें भासता है।

दिल्ली-अहमदाबाद रेल लाइनपर स्थित आबू-रोड स्टेशनसे 'आरासुर' तक सड़क जाती है। वहाँ पर्वतपर अम्बिकाजीका मन्दिर है। पर्वतीय पथ अत्यन्त रमणीय है। आरासुरपर्वतके धवल होनेके कारण इन देवीको 'धोळागढ़वाळी' माता भी कहा जाता है। गुजरातके लोगोंमें इन देवीकी मान्यता सबसे अधिक है। दूर-दूरसे मुण्डन-संस्कार करानेके लिये लोग बच्चोंको लेकर यहाँ आते हैं। मन्दिरमें दर्शनका कार्यक्रम प्रातः आठ बजेसे बारह बजेतक चलता है। सूर्यास्तके समय आरतीका दृश्य अत्यन्त मनोहर और श्रद्धोत्पादक होता है।

शरत्पूर्णिमाको 'गरबा' नृत्यसे गुजरातकी स्त्रियाँ एवं कुमारियाँ माताजीका मधुर स्तवन करती हैं। तब वातावरण मोहक बन जाता है। आरासुरी अम्बाजीके अनेक आख्यान इस क्षेत्रमें प्रचलित हैं। समय-समयपर ये देवी अधिकारी भक्तोंको अपने दिव्यरूपका दर्शन भी देती हैं।

यात्रीको यहाँ ब्रह्मचर्यपूर्वक रहना पड़ता है। कहते हैं आरासुरमें ब्रह्मचर्यके नियमका भङ्ग करनेसे अनिष्ट होता है।

अर्बुदाचलका माहात्म्य पद्मपुराणमें इस प्रकार वर्णित है—

ततो गच्छेत धर्मज्ञ हिमवत्सुतमर्बुदम्।
पृथिव्यां यत्र वै छिद्रं पूर्वमासीद् युधिष्ठिर॥
तत्राश्रमो वसिष्ठस्य त्रिषु लोकेषु विश्रुतः।
तत्रोष्य रजनीमेकां गोसहस्रफलं लभेत्॥

अर्थात् धर्मराज युधिष्ठिर! तदनन्तर हिमालय पर्वतके पुत्र अर्बुदाचल

(आबू) पर्वतपर जाय, जहाँ पहले पृथ्वीमें पाताल जानेके लिये एक सुरंग थी। वहाँका महर्षि वसिष्ठका आश्रम तीनों लोकोंमें विख्यात है। यहाँ मनुष्य यदि एक रात भी निवास कर लेता है तो उसे एक सहस्र गोदान करनेका पुण्य प्राप्त होता है।

आरासुरका अम्बिकामन्दिर छोटा है, किंतु सम्मुख सभामण्डप विशाल है। मन्दिरके पीछे थोड़ी दूरपर मानसरोवर नामक तालाब है। आरासुरसे कुछ दूरीपर गब्बर पर्वत है। यह पर्वत बीचमें कटा हुआ है। आरासुर अम्बाजीका मूल स्थान इसी पर्वतपर माना जाता है। पर्वतकी चढ़ाई कठिन है। पर्वतपर चढ़ते समय मार्गमें एक शिलारूपिणी देवीकी मूर्ति मिलती है। पर्वतपर भगवतीकी प्रतिमा है। पास ही पारसमणि नामका पीपल-वृक्ष है जो परम पवित्र समझा जाता है। वन्य पशुओंके डरके कारण पर्वतपरसे संध्या होनेके पूर्व ही दर्शन कर लौट आना चाहिये।

एक दूसरी मान्यताके अनुसार गिरनार पर्वतके शिखरपर स्थित अम्बिकाजीके मन्दिरको भी शक्तिपीठ माना जाता है। यहाँ देवी सतीका उदरभाग गिरा था। [प्रेषक—सुश्री उषारानी शर्मा]

ज्वालाजी शक्तिपीठ—हिमाचल

(डॉ० श्रीकेशवानन्दजी ममगाई)

हिमाचलका यह ज्वालाजी शक्तिपीठ धर्मशालासे ५६ कि०मी० और कांगड़ासे ३४ कि०मी० की दूरीपर स्थित है। ज्वालामुखी बस-स्टैण्डसे एक रास्ता दाईं ओर जाता है, जिसके दोनों ओर दूकानें हैं। इसके बाहर-भीतर स्थान-स्थानपर चमकीले तथा गोटेके बने लाल दुपट्टे लहराते रहते हैं जिन्हें 'सालू' कहा जाता है। दुपट्टोंको भेंटरूपमें मन्दिरमें चढ़ाया जाता है।

ज्वालाजी मन्दिरमें प्रवेशके लिये मुख्य द्वारतक संगमरमरकी सीढ़ियाँ बनायी गयी हैं। इसके बाद ज्वालाजीका दरवाजा है। अंदर एक अहाता है, जिसके बीचमें एक मन्दिर बना हुआ है। इसके इधर-उधर अनेक दूसरे भवन देवीके धार्मिक कक्ष हैं। ज्वालाओंका कुण्ड मध्यमें है।

इस मन्दिरका वास्तुशिल्प अनूठा है। मन्दिर-निर्माणमें तराशी गयी विशाल शिलाओंका प्रयोग हुआ है। सन् १९०५ ई० में जिस भयंकर भूकम्पने कांगड़ाके विशाल भवन, किले और मन्दिर गिरा दिये थे, वह इस मन्दिरका बाल-बाँका नहीं कर पाया।

ज्वालाजी शक्तिपीठके बारेमें कहा जाता है कि यहाँ सतीकी जिह्वा गिरी थी। माना जाता है कि सात बहनें सात लपटोंके रूपमें यहींपर रहती हैं। ये लपटें पर्वतीय भूमिसे निकली हुई हैं और सदा प्रकाशमान तथा प्रज्वलित रहती हैं। ये ज्योतियाँ देवी दुर्गाकी शक्तिसे निरंतर जलती रहती हैं। यहाँके एक छोटे-से कुण्डमें पानी लगातार खौलता रहता है जो देखनेमें तो गरम लगता है, किंतु छूकर देखें तो वह बिलकुल ठंडा लगता है।

शक्तिकी इन ज्योतियोंके प्रति ईर्ष्यालु होकर बादशाह अकबरने अपने शासनके समय उन्हें बुझानेकी कोशिश की, पर उसकी कोशिशें व्यर्थ गयीं। उसके अपने लोगोंने उसे ज्योतियोंके जलते रहनेके सम्बन्धमें बताया, फिर भी उसे विश्वास नहीं हुआ कि ये भगवती सतीकी शक्तिकी प्रतीक हैं। उसने सैनिकोंको आदेश दिया कि वे इन ज्योतियोंको बुझा दें। उन्होंने इन ज्योतियोंपर लोहेके मोटे-मोटे तवे रख दिये, किंतु दिव्य ज्योतियाँ तवेको फाड़कर ऊपर निकल आयीं। जब उसने पानीका रुख उस तरफ करवाया तब भी ज्योतियोंका जलना जारी रहा। बादशाहने सुना तो उसके मनमें माताके दर्शनकी इच्छा जागी।

विद्वानोंका परामर्श मानकर बादशाह अकबर सवा मन सोनेका छत्र अपने कंधेपर उठाकर नंगे पाँव दिल्लीसे ज्वालामुखी पहुँचा। वहाँ जलती हुई ज्योतियोंके सामने सिर नवाकर बादशाहने सोनेका छत्र जैसे ही चढ़ाना चाहा तो वह छत्र सोनेका नहीं रहा, वह किसी अनजान धातुमें बदल गया। इस चमत्कारसे चमत्कृत अकबरने मातासे अपने गुनाहोंके लिये क्षमायाचना की और दिल्ली लौट गया।

महामाया पाटेश्वरी शक्तिपीठ—देवीपाटन

(श्रीगोरक्षपीठाधीश्वर महन्त श्रीअवेद्यनाथजी महाराज)

परा‍म्बा महेश्वरी जगज्जननी जगदीश्वरी भवानीकी महिमा अचिन्त्य, अपार और नितान्त अभेद्य है। उनकी आत्यन्तिक कृपाशक्तिसे ही उनके स्वरूपका परिज्ञान सम्भव है। वे परम करुणामयी एवं कल्याणस्वरूपिणी शिवा हैं। देवताओंने भगवती महामायाके स्वरूपके सम्बन्धमें कहा है कि आप ही सबकी आश्रयभूता हैं। यह समस्त जगत् आपका अंशभूत है; क्योंकि आप सबकी आदिभूता अव्याकृता परा प्रकृति हैं—

सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या॥

(श्रीदुर्गासप्तशती ४।७)

परम प्रसिद्ध शक्तिपीठ देवीपाटनकी परमाराध्या महामाया पाटेश्वरी महाविद्या, महामेधा, महास्मृति, महामोहरूपा महादेवी हैं। वे पर और अपर—सबसे परे रहनेवाली परमेश्वरी हैं। ऐतिहासिक तथा अनेक पौराणिक तथ्योंसे यह मान्यता निर्विवाद है कि देवीपाटन महामाया महेश्वरीका पत्तन अथवा नगर है। देवीका पट (वस्त्र) उनके वामस्कन्धके सहित इसी पुण्यक्षेत्रमें गिरा था। इसलिये यहाँकी

अधिष्ठात्री महामायाको 'पटेश्वरी' या 'पाटेश्वरी' कहा जाता है। इस विषयमें अत्यन्त प्रसिद्ध श्लोक है—

पटेन सहितः स्कन्धः पपात यत्र भूतले।
तत्र पाटेश्वरीनाम्ना ख्यातिमाप्ता महेश्वरी॥

(स्कन्दपुराण, माहेश्वरखण्ड)

देवीपाटनको पातालेश्वरी शक्तिपीठ भी कहा जाता है। ऐसी भी मान्यता प्रचलित है कि भगवती सीताने इसी स्थलपर पातालमें प्रवेश किया था, पर यह स्थान भगवती सतीके अङ्ग वामस्कन्धके पटसहित पतनसे ही ख्याति प्राप्त कर पाटेश्वरीपीठके नामसे व्यवहृत है।

देवीपाटन सिद्ध योगपीठ और शक्तिपीठ दोनों है; क्योंकि यह ऐतिहासिक तथा परम्परागत सर्वमान्य तथ्य है कि साक्षात् अभिनव शिव महायोगी गोरखनाथने शिवकी प्रेरणासे इस पुण्यस्थलपर शक्तिकी उपासना और आराधनाके द्वारा अपने योग-अनुभवसे समस्त जगत्‌को जीवनामृत अथवा योगामृत प्रदान किया था। देवीपाटनमें भगवती महेश्वरीका इतिहासप्रसिद्ध मन्दिर है। महाराज विक्रमादित्यने प्राचीन मन्दिरका जीर्णोद्धार कराया था। पुनः मध्यकालमें मुगल बादशाह औरंगजेबकी आज्ञासे उसकी सेनाने इसे ध्वस्त कर दिया था। उसके बाद नये मन्दिरका निर्माण सम्पन्न हुआ। यह भी प्रसिद्धि है कि महाभारतयुद्धके महासेनानी दानवीर कर्णने इस पुण्यक्षेत्रमें भगवान् परशुरामसे ब्रह्मास्त्र प्राप्त किया तथा युद्धविद्या और शस्त्रास्त्र-प्रयोगकी शिक्षा प्राप्त की थी।

भगवती पाटेश्वरीसे सम्बद्ध देवीपाटन शक्तिपीठ उत्तरप्रदेशके बलरामपुर जनपदमें पूर्वोत्तर रेलवेके बलरामपुर स्टेशनसे इक्कीस किलोमीटरकी दूरीपर स्थित है। तुलसीपुर रेलवे स्टेशनसे केवल सात सौ मीटरकी दूरीपर सीरिया (सूर्या)नदीपर स्थित यह शक्तिपीठ भगवती जगदम्बाकी उपासनाका भव्य भौम-प्रतीक है। नेपाल राज्यकी सीमाको

देवीपाटन पुण्यपीठ स्पर्श करता है। भारत और नेपालकी पारम्परिक मैत्री और सह–अस्तित्वकी सद्भावनाका यह आध्यात्मिक स्मारक चिरकालतक दोनों देशोंके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें अङ्कित रहेगा।

दक्षयज्ञमें योगाग्निद्वारा प्रज्वलित सतीके शरीरके शवके ५१ खण्डित अङ्गोंसे ५१ शक्तिपीठोंकी स्थापना हुई। शिवपुराण, देवीभागवत तथा तन्त्रचूडामणि आदि अनेक ग्रन्थोंमें शक्तिपीठकी परम्परा और उससे सम्बद्ध सतीके शरीरके खण्ड–खण्ड होनेका आख्यान उपलब्ध होता है। शक्तिपीठ–परम्पराके अनुसार ५१ वर्ण समाम्नायके आश्रय आदिशक्ति भगवती जगदम्बाकी उपासनाके ५१ शक्तिपीठ सम्पूर्ण भारतमें अवस्थित हैं। उन्हीं शक्तिपीठोंमें महामाया पाटेश्वरीके उपासनास्थलसे देवीपाटन शक्तिपीठकी परिगणना की जाती है।

सिद्ध शक्तिपीठ देवीपाटनमें शिवकी आज्ञासे महायोगी गोरखनाथने पाटेश्वरीपीठकी स्थापना कर भगवतीकी आराधना और योगसाधना की थी। इस बातका उल्लेख देवीपाटनमें उपलब्ध १८७४ ई० के शिलालेखमें है—

महादेवसमाज्ञप्तः सतीस्कन्धविभूषितम्।
गोरक्षनाथो योगीन्द्रस्तेन पाटेश्वरीमठम्॥

देवीपाटन शक्ति–उपासना और योगसाधनाका तीर्थक्षेत्र है। पाटेश्वरीमन्दिरके अन्तःकक्षमें प्रतिमा नहीं है केवल चाँदीजटित गोल चबूतरा है। कहा जाता है कि इसीके नीचे पातालतक सुरंग है। इसी चबूतरेपर महामायाकी समुपस्थितिकी भावना कर उन्हें पूजा समर्पित की जाती है। चबूतरेपर कपड़ा बिछा रहता है, उसके ऊपर ताम्रछत्र है, जिसपर सम्पूर्ण श्रीदुर्गासप्तशतीके श्लोक अङ्कित हैं। उसके नीचे चाँदीके ही अनेक छत्र हैं। मन्दिरमें अखण्ड ज्योतिके रूपमें घीके दो दीपक जलते रहते हैं। मन्दिरकी परिक्रमामें मातृगणोंके यन्त्र विद्यमान हैं। मन्दिरके उत्तरमें सूर्यकुण्ड है, यहाँपर रविवारको

स्नानकर षोडशोपचारसे देवीका पूजन करनेवालेका कुष्ठरोगनिवारण होता है। यहाँ महिषमर्दिनी कालीका मन्दिर है। बटुकनाथ भैरवकी आराधना होती है तथा अखण्ड धूनी है। इस पुण्यक्षेत्रमें चन्द्रशेखर महादेव और हनुमान्‌जीके मन्दिर भी हैं। देवीपाटन नेपालके सिद्धयोगी बाबा रतननाथका शक्ति-उपासनास्थल है। वे प्रतिदिन योगशक्तिद्वारा दाँग (नेपालकी पहाड़ियों)-से आकर महामाया पाटेश्वरीकी आराधना किया करते थे। देवीके वरसे उनकी भी यहाँ पूजा होती है। देवीने योगीको आश्वासन दिया था कि जब तुम पधारोगे तब तुम्हारी पूजा होगी। रतननाथ दाँग चौधरास्थानसे प्रत्येक वर्ष चैत्र शुक्ल पञ्चमीको पाटन आते हैं। एकादशीको वापस जाते हैं। देवीपाटनमें प्रतिवर्ष नवरात्रमें बहुत बड़ा मेला लगता है। देशके प्रत्येक भागसे श्रद्धालु भक्तजन आ-आकर महामाया पाटेश्वरीके चरणदेशमें अपनी श्रद्धा समर्पित करते हैं।

भगवती पाटेश्वरीकी प्रसन्नता परम सिद्धिदायिनी है। भगवती जगदीश्वरीके चरणोंमें आत्मनिवेदन कर जीवात्मा अभय हो उठता है। पाटेश्वरी महामायासे यही निवेदन है—

प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि।
त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां वरदा भव॥

(श्रीदुर्गासप्तशती ११। ३५)

विश्वकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि! हम आपके चरणोंपर पड़े हुए हैं, हमपर प्रसन्न होइये। तीनों लोकके निवासियोंकी पूजनीया परमेश्वरि! आप सब लोगोंको वरदान दीजिये।

महामाया पाटेश्वरीके प्रसन्न होनेपर समस्त सिद्धियाँ, समस्त पदार्थ, भोग, मोक्ष करतलगत हो जाते हैं।

[प्रेषक—पं० श्रीविजयजी शास्त्री]

श्रीसिद्धपीठ माता हरसिद्धिमन्दिर—उज्जैन

(श्रीहरिनारायणजी नीमा)

'स्कन्दपुराण' में उल्लेख है कि कैलास पर्वतपर चण्ड-प्रचण्ड नामके दो असुरोंने जब प्रवेश करनेकी अनधिकार चेष्टा की, तब नन्दीने उन्हें रोका। क्रुद्ध असुरोंने नन्दीको घायल कर दिया। भगवान् शिवने जब उनका यह आसुरी-कृत्य देखा तो भगवती चण्डीका स्मरण किया, देवी प्रकट हुईं और शिवजीने चण्ड-प्रचण्डका वध करनेका उन्हें आदेश दिया। चण्डीने क्षणमात्रमें ही उन दोनों असुरोंका संहार कर दिया, महादेव प्रसन्न हुए और बोले—

'हे चण्डि! तुमने इन दुष्ट दानवोंका वध किया है अतः समस्त लोकोंमें तुम्हारा 'हरसिद्धि' नाम प्रसिद्ध होगा।'

बृहत्तर देवभूमि भारतमें ५१ शक्तिपीठ हैं। उज्जैनमें स्थित माँ हरसिद्धिमन्दिर सतीकी कोहनीके पतनस्थलपर विद्यमान है। यहाँकी शक्ति माङ्गल्य चण्डिका और भैरव माङ्गल्य कपिलाम्बर हैं—

उज्जयिन्यां कूर्परं च माङ्गल्यकपिलाम्बरः।
भैरवः सिद्धिदः साक्षाद् देवी मङ्गलचण्डिका॥

हरसिद्धिमन्दिर कमल-पुष्पोंसे सुशोभित रुद्रसागरसे लगा हुआ है, समीप ही ज्योतिर्लिङ्ग श्रीमहाकालेश्वरमन्दिर है। माँका मन्दिर मराठाकालीन है। पूर्वाभिमुख श्रीमन्दिरकी शोभा अवर्णनीय है। विशाल परकोटा, चार द्वार, दो दीपस्तम्भ, प्राचीन जलाशय (बावड़ी) जिसके द्वारस्तम्भपर संवत् १४४७ अङ्कित है। चिन्ताहरणविनायक-मन्दिर, हनुमान्मन्दिर और ८४ महादेवमन्दिरोंमेंसे एक श्रीकर्कोटेश्वर महादेवमन्दिर भी यहाँ स्थापित है। मन्दिरपरिसरमें आदिशक्ति महामायाका मन्दिर है, जहाँ अखण्डज्योति जलती रहती है।

सर्वकामार्थसिद्धिदा माँ हरसिद्धिके आस-पास महालक्ष्मी और

महासरस्वतीदेवी विराजमान हैं। मध्यमें श्रीयन्त्र प्रतिष्ठित है, ये ही देवी माँ हरसिद्धि हैं। श्रीयन्त्रपर ही देवी माँकी मूरत गढ़ी गयी है, जिन्हें सिन्दूर चढ़ाया जाता है। नवरात्रि आदि पर्वोंपर स्वर्ण-रजत मुखौटा भी धराया जाता है। नित्य देवोंके नव शृंगार होते हैं। प्रातः और सायंकालीन आरतीके समय दर्शक दर्शनकर आह्लादित हो जाते हैं। हरसिद्धि माँकी वेदीके नीचेकी ओर भगवती भद्रकाली और भैरवकी प्रतिमा है, जिन्हें सिन्दूर नहीं चढ़ाया जाता। श्रीमन्दिरमें पीठेश्वरी माँ हरसिद्धिके अतिरिक्त महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती तीनों विराजित हैं।

'नवम्यां पूजिता देवी हरसिद्धि हरप्रिया।'

नवरात्रमें ९ दिन माताजीकी महापूजा होती है। दोनों दीपस्तम्भोंपर दीपक जलाये जाते हैं जो दूरसे आकाशमें चमकते हुए सितारों-जैसे लगते हैं।

इतिहासप्रसिद्ध शकारि सम्राट् विक्रमादित्यकी देवी माँ सदा आराध्या रही हैं। मन्दिरके दायीं ओर स्थित चित्रशालामें विक्रमादित्य और उनकी राज्यसभाके ९ रत्नों—धन्वन्तरि, क्षपणक,, अमरसिंह, शंकु, बेतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास, वराहमिहिर तथा वररुचिके सुन्दर चित्र लगे हुए हैं।

इसी प्रकार श्रीमन्दिरके सभामण्डपमें नौ देवियोंके चित्रोंको बहुत खूबीके साथ चित्रित किया गया है। मन्दिरकी सीढ़ियाँ चढ़ते ही माँके वाहन सिंहके दर्शन होते हैं। प्रवेशद्वारके दायीं ओर दो बड़े नगाड़े रखे हुए हैं, जो आरतीके समय बजाये जाते हैं।

हरसिद्धिमन्दिरसे माँके आशीषोंका निर्झर सतत बहता रहता है। यहाँ प्रतिदिन बड़ी संख्यामें भक्तगण आते हैं। सूर्योदय और सूर्यास्तके समय पक्षियोंका कलरव यहाँके भक्तिमय वातावरणको हजार गुना बढ़ा देता है। ऐसा आभास होता है मानो विप्रमण्डली

श्रीदुर्गासप्तशतीका समवेत पाठ कर रही हो।

माता हरसिद्धि सकल सिद्धिकी दात्री हैं। शुद्ध मन और भक्तिभावनासे की गयी प्रार्थना माँ अवश्य स्वीकार करती हैं। भक्तजन उनका नामस्मरण करते हैं, जिससे जीवनका मार्ग निष्कण्टक एवं सुगम बन जाता है।

श्रीश्रीमाता त्रिपुरेश्वरी शक्तिपीठ—त्रिपुरा

(श्रीअनिलकुमारजी, द्वितीय कमान अधिकारी)

पौराणिक कथाके अनुसार विष्णुभगवान्ने अपने सुदर्शन चक्रसे माता सतीके शवके ५१ टुकड़े किये थे, जो ५१ स्थानोंपर गिरे। माताका दाहिना पैर जिस स्थानपर गिरा, वह स्थान त्रिपुरेश्वरी शक्तिपीठ कहलाता है। इस स्थानपर मन्दिरका निर्माण किया गया। यह भव्य मन्दिर उदयपुर शहरसे लगभग तीन किलोमीटरकी दूरीपर स्थित है। भारतवर्षके ५१ पीठस्थानोंमें यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पीठ माना गया है। सीमान्त प्रदेश त्रिपुराका यह पीठस्थान भारतके पूर्वोत्तर क्षेत्रमें स्थित है।

इस पीठस्थानको कुर्मापीठके नामसे भी जाना जाता है, इस मन्दिरका प्राङ्गण 'कुरमा' कछुवेकी तरह है। इस पवित्र मन्दिरमें माता कालीकी लाल-काली कास्टीक पत्थरकी मूर्ति बनी हुई है। इस मूर्तिके अतिरिक्त एक छोटी मूर्ति भी मन्दिरमें है, जिसे 'छोटो माँ' के नामसे जाना जाता है। उनकी भी महिमा कालीमाताकी तरह ही है, जिसे त्रिपुराके राजा शिकार करने या युद्धके समय अपने साथ रखते थे।

एक प्राचीन कथाके अनुसार सन् १५०१ ई०में त्रिपुरा राज्यमें महाराजा धन्यमाणिक्य राज्य करते थे। एक दिन रातको माता त्रिपुरेश्वरी राजाके सपनेमें आयीं और बोलीं कि चित्तागाँवके पहाड़पर (जो कि वर्तमान समयमें बँगलादेशमें स्थित है) मेरी मूर्ति विराजमान है, उसको

यहाँ आजकी रातमें ही लाना होगा। इस सपनेको देखनेके तुरंत बाद राजाने अपने सैनिकोंको चित्तागाँवके पहाड़पर भेज दिया और आदेश दिया कि माता त्रिपुरेश्वरीकी मूर्ति आजकी रातमें ही ले आओ। जब सैनिक मूर्तिको लेकर माताबाड़ीतक पहुँचे, उसी दौरान सूर्योदय हो गया और माताके आदेशानुसार वहींपर उनका मन्दिर स्थापित कर दिया गया, जो बादमें माता त्रिपुरासुन्दरीके नामसे प्रख्यात हो गया।

महाराजा धन्यमाणिक्यने इस स्थानपर विष्णुमन्दिर बनानेके बारेमें सोचा था, किंतु माता त्रिपुरेश्वरीकी मूर्ति स्थापित होनेके कारण राजा यह निर्णय नहीं कर पा रहे थे कि मैं किसके मन्दिरका निर्माण करूँ। उसी समय आकाशवाणी हुई कि 'आपने जहाँपर विष्णुभगवान्‌का मन्दिर बनानेके बारेमें सोचा था, उस स्थानपर आप माता त्रिपुरासुन्दरीके मन्दिरका निर्माण करें।' तदनुसार मन्दिरका निर्माण हुआ।

मन्दिरके पीछे पूर्वकी तरफ ६.४० एकड़के इलाकेमें एक तालाब है, जो कि झीलकी तरह है, वह कल्याणसागरके नामसे प्रख्यात है। यह झील बड़ी-बड़ी मछलियों एवं कछुओंके लिये प्रसिद्ध है। धार्मिक मान्यताके अनुसार इन मछलियों और कछुओंको मारना अथवा पकड़ना अपराध है। प्राकृतिक कारणोंसे मछलियों एवं कछुओंके मर जानेपर उनको दफनानेके लिये एक अलग स्थान बनाया गया है। उसी स्थानपर मन्दिरके पुजारियोंके लिये भी समाधि-स्थल बनाया गया है।

वर्तमान समयमें स्थानीय प्रशासन बड़े पैमानेपर कल्याणसागर झीलकी देखभालका कार्य कर रहा है एवं इसे चारों तरफसे पक्का करा दिया गया है। मन्दिरके रख-रखाव एवं श्रद्धालुओंके रहने, खाने तथा अन्य मौलिक आवश्यकताओंकी निगरानी त्रिपुरा सरकारके राजस्व विभाग एवं जिलाधिकारीके अधीन की जाती है। इसके लिये

त्रिपुरा सरकारद्वारा एक समितिका गठन किया गया है, जो कि स्थानीय प्रशासनको इसमें मदद करती है। इस दौरान प्रतिदिन होनेवाले खर्चको भी त्रिपुरा सरकारके राजस्व विभागद्वारा वहन किया जाता है।

प्रतिवर्ष दीपावली–पर्वके उपलक्ष्यमें माता त्रिपुरेश्वरीमन्दिरपर दो दिनके लिये एक बड़े मेलेका आयोजन किया जाता है। इस पर्वमें भारतवर्षके विभिन्न प्रान्तों एवं विदेशोंसे श्रद्धालुओंका समूह माता त्रिपुरेश्वरीके दर्शनके लिये आता है। इन श्रद्धालुओंकी संख्या प्रतिवर्ष लगभग ३ से ५ लाखतककी होती है।

उदयपुर–सबरम पक्की सड़कके किनारे स्थित इस मन्दिरका क्षेत्रफल २४ फुट×२४ फुट×७५ फुट है। यहाँपर श्रद्धालुओंके आवागमनके लिये उदयपुरसे माताबाड़ीके लिये लगातार बस, ऑटोरिक्शा आदि चलते रहते हैं। मन्दिरके समीप अनेक धर्मशालाएँ तथा रेस्ट हाउस भी हैं।

हृदयपीठ या हार्दपीठ—वैद्यनाथधाम

(आचार्य पं० श्रीनरेन्द्रनाथजी ठाकुर, एम्० ए०, पी-एच्०डी०)

व्याकरणके अनुसार '**शक्**' धातुमें '**क्तिन्**' प्रत्यय जोड़नेसे 'शक्ति' शब्द निष्पन्न हुआ है, यह शब्द बल, योग्यता, धारिता, सामर्थ्य, ऊर्जा एवं पराक्रमके अर्थको अभिद्योतित करता है।

शास्त्रने शक्तिके तीन भेदोंको स्वीकार किया है, जो प्रभुशक्ति, मन्त्रशक्ति एवं उत्साह शक्तिके रूपमें वर्णित हैं।

शिवपुराणमें ऐसा प्रसंग आया है कि दाक्षायणी भगवती सती अपने पिता राजा दक्षके द्वारा अनुष्ठित यज्ञमें जाना चाहती थीं। बहुत अनुनय–विनय करनेके बाद भगवान् शिवने जानेकी आज्ञा दे दी। तदनन्तर यज्ञ–मण्डपमें पहुँचनेके बाद सभी देवताओंके लिये स्थान

एवं भगवान् शिवके लिये स्थान न देखकर सतीने अपने पितासे कहा कि मेरे स्वामीके लिये इस यज्ञ-मण्डपमें स्थान क्यों नहीं? तब राजा दक्षने कहा—

मया कृतो देवयागः प्रेतयागो न चैव हि।
देवानां गमनं यत्र तत्र प्रेतविवर्जितः॥

(शिवपुराण)

अर्थात् मैंने देवयज्ञ किया है, प्रेतयज्ञ नहीं। जहाँ देवताओंका आवागमन हो वहाँ प्रेत नहीं जा सकते। तुम्हारे पति भूतादिकोंके स्वामी हैं, अतः मैंने उन्हें नहीं बुलाया। यह सुनकर भगवती सतीने अपनी देहको यज्ञ-कुण्डमें आहुत कर दिया। तत्पश्चात् वीरभद्र एवं भद्रकालीने यज्ञका विध्वंस कर दिया तथा भगवान् शंकर सतीके अवशिष्ट शरीरको लेकर ब्रह्माण्ड-मण्डलमें घूमने लगे। सभी लोकोंमें हाहाकार मच गया। तब भगवान् विष्णुने अपने सुदर्शन चक्रसे भगवती सतीके शरीरको ५१ टुकड़ोंमें विभक्त कर दिया।

सतीका हृदयदेश वैद्यनाथधामकी पावन नगरीमें गिरा था, अतः यहाँके शक्तिपीठको 'हार्दपीठ' या 'हृदयपीठ' भी कहा जाता है—

हृदयपीठके समान शक्तिपीठ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड-मण्डलमें कहीं नहीं है, ऐसा पद्मपुराणका कथन है—

हार्दपीठस्य सदृशो नास्ति भूगोलमण्डले।

(पातालखण्ड)

सतीको यहाँ 'जयदुर्गा' के नामसे अभिहित किया गया है। भगवान् वैद्यनाथ ही उनके भैरव हैं—

हृद्यपीठं वैद्यनाथस्तु भैरवः।
देवता जयदुर्गास्या...........॥

मत्स्यपुराण आदिमें '**आरोग्या वैद्यनाथे तु**'—ऐसा भी प्रमाण मिलता है। देवीभागवत-महापुराणमें बगलामुखीका सर्वोत्कृष्ट स्थान

वैद्यनाथधाममें बताया गया है तथा यहाँकी शक्तिको 'आरोग्या' नामसे अभिहित किया है।

आठवीं शताब्दीमें जगद्गुरु शंकरभगवत्पादने द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंके स्वरूप-वर्णनमें वैद्यनाथको शक्तियुक्त सिद्ध किया है—

पूर्वोत्तरे प्रज्वलिका निधाने
सदा वसन्तं गिरिजासमेतम्।
सुरासुराराधितपादपद्मं
श्रीवैद्यनाथं तमहं नमामि॥

यहाँ **गिरिजासमेतम्** पदद्वारा 'जयदुर्गा' शक्तिको अभिहित किया गया है।

श्रीभद्रकालीदेवी शक्तिपीठ—जनस्थान (नासिक)

(डॉ० श्रीआर०आर० चन्द्रानेजी)

प्रसिद्धि है कि भगवती सतीने दक्षयज्ञमें शिवनिन्दाके घोर अपमानको सहन न करते हुए क्रुद्ध होकर यज्ञकुण्डमें आत्माहुति दे दी थी। उसके बाद श्रीविष्णुके सुदर्शन चक्रसे काटे जानेपर आदिमाया सतीके शरीरका एक-एक अङ्ग भारतवर्षके विविध क्षेत्रोंमें गिरा। उसमेंसे चिबुक भाग जनस्थान (नासिक)-में गिरा एवं वही चिबुक शक्तिपीठरूपमें प्रकट हुआ। यहाँ भद्रकालीरूपमें भगवती प्रतिष्ठित हैं। यहाँकी शक्ति 'भ्रामरी' और भैरव 'विकृताक्ष' हैं—'**चिबुके भ्रामरी देवी विकृताक्ष जनस्थले।**'

नौ छोटी-छोटी पहाड़ियोंके कारण इस स्थानको नव+शिक अर्थात् नासिक कहते हैं। नासिककी इन सभी नौ पहाड़ियोंपर माँ दुर्गाजीके स्थान हैं। उन नौ स्थानोंमेंसे एक स्थानपर भद्रकाली माताजीकी पूर्वपरम्परानुगत मूर्ति है। यह मूर्ति स्वयम्भू है।

इस्लामी शासनकालमें मूर्तिका अपमान न हो, इसलिये गाँवके बाहर उपर्युक्त पहाड़ीके ऊपर इस मूर्तिकी स्थापना की गयी। जनताजनार्दनकी प्रार्थनापर पुनः सन् १७९० में सरदार गणपतराव पटवर्धन दीक्षितजीद्वारा मन्दिर बनवाया गया।

यह मंदिर बड़ा प्रशस्त है। मंदिरके ऊपर दो मंजिलका और निर्माण किया गया है। प्रत्येक मंदिरके ऊपर साधारणतः कलश होता है, किंतु इस मंदिरके ऊपर ऐसा नहीं है; क्योंकि उस समय यवनोंका उत्पात था, कलश देखकर मंदिरकी तोड़-फोड़ न हो, इसलिये कलश नहीं रखा गया। इस मंदिरको 'देवीका मठ' ऐसा नाम दिया गया।

मूर्तिका स्वरूप—पञ्चधातुकी भद्रकालीकी यह मूर्ति पंद्रह इंच ऊँची है। इनके अठारह हाथोंमें विविध आयुध हैं। मूर्ति अत्यन्त आकर्षक है। इनके दर्शन, स्मरण और पूजनसे भक्तोंके मनोरथ परिपूर्ण होते हैं। प्रसन्नवदना भगवतीके दर्शनसे भक्तगण कृतकृत्य हो जाते हैं।

यहाँपर मंदिरकी ओरसे ही प्राच्यविद्यापीठकी स्थापना की गयी है, जहाँ प्राचीन गुरुपरम्परासे वेदवेदांग आदि विविध विद्याओंका अध्ययन-अध्यापन किया जाता है। छात्र मंदिरके आस-पासके ब्राह्मणोंके घर जाकर मधुकरी माँगकर लाते हैं, उसका ही नैवेद्य भगवतीको अर्पित किया जाता है। माताजीकी त्रिकाल पूजा आदिकी व्यवस्था छात्रोंद्वारा ही की जाती है।

मन्दिरके आस-पास ब्राह्मणोंके लगभग साढ़े तीन सौ घर हैं। उन्हीं ब्राह्मणोंके घरसे क्रम-क्रमके अनुसार पूजा, अर्चन, नैवेद्य, देवीपाठ, नंदादीप आदिके लिये सामग्री संगृहीत होती है। यहाँ नवरात्रका उत्सव आश्विन शुक्ल प्रतिपदासे पूर्णिमापर्यन्त बहुत ही धूमधामसे मनाया जाता है, यज्ञ-यागादि कर्म किये जाते हैं। यह भद्रकाली शक्तिपीठ भक्तोंकी आस्थाका मुख्य स्थान है। देवीके चरणोंमें प्रणाम करते हुए उनसे अनुग्रहकी याचना है—'**भद्रकालि नमोऽस्तु ते।**'

उत्कलदेशका शक्तिपीठ—विरजा और विमला

(श्रीजगबन्धुजी पाढ़ी)

महाभागवतपुराण या देवीपुराण (२।९)-में ५१ शक्तिपीठोंके विषयमें लिखा है—'**पीठानि चैकपञ्चाशदभवन्मुनिपुङ्गव।**' इन ५१ पीठोंमेंसे कामरूपको श्रेष्ठतम पीठकी मान्यता दी गयी है और उस पीठका विशेष वर्णन भी किया गया है।

ऐसे तो भिन्न-भिन्न पुराणों और तन्त्रग्रन्थोंमें देवीपीठ, शक्तिपीठ, तन्त्रपीठ, सिद्धपीठ आदि नामोंसे पीठोंकी संख्या अलग-अलग बतायी गयी है; परंतु ५१ पीठोंकी परम्पराका प्रसार तन्त्रचूडामणि और ज्ञानार्णवतन्त्र—इन दोनों ग्रन्थोंद्वारा विशेषरूपसे हुआ है। तन्त्रचूडामणिमें सतीजीके भिन्न-भिन अङ्ग किन-किन स्थानोंपर गिरे थे और इन स्थानोंमें सतीजी किस नामसे भैरवीके रूपमें और भगवान् शिव किस नामसे भैरवके रूपमें निवास करने लगे, उनका विवरण उपलब्ध है। तन्त्रचूडामणिके अन्तर्गत पीठनिर्णय-अध्यायमें यह श्लोक प्राप्त होता है—

उत्कले नाभिदेशस्तु विरजाक्षेत्रमुच्यते।
विमला सा महादेवी जगन्नाथस्तु भैरवः॥

आशय यह है कि सतीजीका नाभिदेश उत्कलमें गिरा था। समग्र उत्कल-देश ही सतीका नाभिक्षेत्र है और इसे ही विरजाक्षेत्र कहते हैं। इस क्षेत्रमें विमलाके नामसे महादेवी और जगन्नाथके नामसे भैरव निवास करते हैं। उत्कल (आधुनिक उड़ीसा) एक नगर या ग्रामका नाम नहीं है। यह एक देश या राज्यका नाम है। कपिलपुराण (१।८)-में उल्लेख है—

वर्षाणां भारतं श्रेष्ठं देशानामुत्कलः स्मृतः।
उत्कलेन समो देशो देशो नास्ति महीतले॥

'विरजा' शब्दको 'क्षेत्र' शब्दका विशेषणके रूपमें लेनेपर '**विगतानि रजांसि यस्य तत्**' इस व्युत्पत्तिके अनुसार समग्र उत्कलदेशको ही मलविमुक्त क्षेत्र कहा जा सकता है। इस देशकी महादेवी विमला हैं, जो समग्र उत्कलदेशकी आराध्या हैं। उनके भैरव जगन्नाथ या पुरुषोत्तम समग्र उत्कलदेशके परमाराध्य देव हैं।

कालिकापुराणमें चार दिशाओंमें चार पीठोंका उल्लेख है और उनमें औड्र नामक पीठको प्रथम पीठके रूपमें ग्रहण किया गया है। यह औड्रपीठ ही उड़ीसा है। इस पीठके बारेमें कहा गया है—

ओड्राख्यं प्रथमं पीठं द्वितीयं जालशैलकम्।
तृतीयं पूर्णपीठं तु कामरूपं चतुर्थकम्॥
ओड्रपीठं पश्चिमे तु तथैवोड्रेश्वरीं शिवाम्।
कात्यायनीं जगन्नाथमोड्रेशं च प्रपूजयेत्।

(कालिकापुराण ६४।४३-४४)

सम्प्रति श्रीजगन्नाथपुरीमें विराजमान महाप्रभु पुरुषोत्तम जगन्नाथ ही निःसंदेह तन्त्रचूडामणिमें उल्लिखित जगन्नाथ हैं और श्रीजगन्नाथमन्दिरके भीतरी आँगनमें विराजमान विमला ही तन्त्रोक्त विमला हैं। उत्कलदेशके याजपुर नगरमें विरजादेवी विराजमान हैं और यह देवी उत्कलदेशकी सर्वप्राचीन देवी हैं। इनका वर्णन ब्रह्मपुराण (४२। १)-में आया है। यथा—

विरजे विरजा माता ब्रह्माणी सम्प्रतिष्ठिता।
यस्याः संदर्शनान्मर्त्यः पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

कुब्जिकातन्त्र, ज्ञानार्णवतन्त्र तथा अष्टादशपीठनिर्णय आदि ग्रन्थोंमें भी विरजापीठका उल्लेख पाया जाता है। कपिलपुराणमें इस उत्कलदेशको '**कृष्णार्क-पार्वतीहराः**' कहा गया है अर्थात् भगवान् विष्णु, सूर्यदेव, पार्वतीदेवी और भगवान् शिव—ये चार देव-देवी यहाँ नित्य निवास

करते हैं। पार्वतीक्षेत्रके प्रसंगमें याजपुर नगरस्थित विरजादेवीकी ही महिमाका वर्णन किया गया है। महाभारत, वनपर्व (८५।८६)-में पाण्डवोंके वनवासप्रसंगमें वैतरणीतीरस्थित विरजातीर्थका उल्लेख है। वर्तमान याजपुर नगर पूर्वकालमें विरजा नामसे प्रसिद्ध था, यह पुरातात्त्विक प्रमाणोंसे स्पष्ट है। अतः याजपुरस्थित विरजादेवी उत्कलकी अधीश्वरी देवी हैं, यह सर्वमान्य है।

दूसरे पक्षमें सिद्धपीठोंकी संख्या १०८ बतायी गयी है, इनमें विरजापीठका नाम नहीं मिलता। उसके स्थानपर पीठका नाम पुरुषोत्तम और पीठाधीश्वरीका नाम विमला बताया गया है। उदाहरणार्थ— **'गङ्गायां मङ्गला नाम विमला पुरुषोत्तमे'** (मत्स्यपुराण १३।१५) तथा **'गयायां मङ्गला प्रोक्ता विमला पुरुषोत्तमे'** (देवीभागवत ७।३०।६४)। पुरीके श्रीजगन्नाथजीके मन्दिरमें अभी भी यह व्यवस्था है कि पुरुषोत्तम जगन्नाथके प्रत्येक भोगके उपरान्त वह भोग विमलादेवीको पुनः समर्पित किया जाता है और तब वह भोग महाप्रसाद बन जाता है। पुरीके अन्नभोगकी यही विशेषता है।

शब्दार्थकी दृष्टिसे विरजा और विमला एक ही देवी हैं। इन दोनों देवियोंका स्थानभेद और मूर्तिभेद केवल उपासना-निमित्तक है। कृपामयी परमेश्वरी दुर्गा या कात्यायनी विरजा और विमला उभय नामोंसे यथाक्रम याजपुर और पुरीमें अवस्थान करती हुई समग्र उत्कलदेशको पावन करती हैं और जीवोंके रज या मल (पाप)-का नाश करती हैं।

माँ ताराचण्डी शक्तिपीठ—सासाराम

(स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

देवीके ५१ शक्तिपीठोंमें परिगणित माँ ताराचण्डी भवानी अपने भक्तोंको सर्वसुख प्रदान करनेके लिये विन्ध्यपर्वतकी कैमूर शृङ्खलामें अवस्थित हैं। कुछ विद्वान् इन्हें ही शोणतटस्था शक्ति मानते हैं। प्रजापति दक्षके यज्ञमें पतिनिन्दासे क्रुद्ध होकर देवी सतीने यज्ञकुण्डमें अपनी आहुति दे दी थी। उनके उस शरीरको भगवान् विष्णुने सुदर्शन चक्रसे ५१ खण्डोंमें काट दिया था। वे खण्ड विभिन्न स्थानोंपर गिरे। इनमेंसे एक खण्ड दक्षिण नेत्र* यहाँ (सासाराममें) गिरा। जिस प्रकार मस्तक कटकर गिरनेसे वैष्णोदेवी, जिह्वा कटकर गिरनेसे शारदादेवी, कमर कटकर गिरनेसे विन्ध्यवासिनीदेवी, पैर कटकर गिरनेसे कलकत्ताकी काली और कन्याकुमारी तथा गुह्यभाग गिरनेसे कामरूपमें कामाख्या शक्तिपीठोंकी उत्पत्ति हुई, उसी प्रकार माँ ताराचण्डी शक्तिपीठ भी है, जहाँ देवीके दक्षिण नेत्रके पतनकी मान्यता है।

आँखको तारा भी कहते हैं, भगवतीके तीन नेत्र माने जाते हैं। बायाँ नेत्र रामपुर बंगालमें गिरा, जो तारापीठके नामसे विख्यात हुआ। यह अघोर साधक वामाक्षेपाद्वारा जाग्रत् हुआ। दक्षिण नेत्र सोनभद्रनदीके किनारे–सटे मनोरम पहाड़ियोंसे घिरे जलप्रपात एवं प्राकृतिक सौन्दर्यके बीचमें गिरा, जिसे सोनभद्राके नामसे जाना गया। जो महर्षि विश्वामित्रद्वारा ताराके नामसे जाग्रत् किया गया। जमदग्नि ऋषिके पुत्र भगवान् परशुरामने उस क्षेत्रके राजा सहस्रबाहुको पराजित करने–हेतु यहाँ माँ ताराकी उपासना की, जिससे प्रसन्न होकर माँ ताराचण्डीने बालिकाके रूपमें प्रकट होकर विजयका वरदान दिया। श्रीदुर्गासप्तशतीके अनुसार महिषासुरके दो सेनापतियों चण्ड और मुण्डमेंसे एकका वध भगवतीके

---

* तन्त्रचूडामणिके अनुसार यहाँ देवीका दक्षिण नितम्ब गिरा था।

हाथों यहींपर हुआ था। जिससे वे चण्डी नामसे विख्यात हुईं और मुण्डका वध यहाँसे लगभग ६० किलोमीटरकी दूरीपर पश्चिमकी ओर हुआ, वहाँ वे मुण्डेश्वरीके नामसे विख्यात हुईं। यह स्थान वर्तमानमें कैमूर जिलेके अन्तर्गत ही है।

भगवान् बुद्धने बोधगयासे सारनाथ जाते समय अपने भक्तोंके साथ इक्कीस दिन यहाँ रहकर माँ भगवतीकी तारारूपमें उपासना की, जिसका उल्लेख मन्दिरके गर्भगृहमें लगे पत्थरपर पालि भाषामें उत्कीर्ण है।

यहाँ समीप ही पूरब गोड़इला पहाड़पर तारकनाथ नामक स्थान है, जहाँपर ताड़का नामकी राक्षसी रहा करती थी, जो विश्वामित्र मुनिके यज्ञमें बराबर व्यवधान डाला करती थी। उसी ताड़काका वध करनेके लिये महर्षि विश्वामित्र अयोध्याके राजा दशरथसे उनके दो पुत्रों—राम एवं लक्ष्मणको माँगकर लाये थे और यहीं माँ ताराचण्डीधामस्थित अपने आश्रम (सिद्धाश्रम)-में प्रशिक्षित किया था। राम और लक्ष्मणने महर्षि विश्वामित्रकी यज्ञ-रक्षा करते हुए राक्षसी ताड़काका जिस स्थानपर वध किया था, वह स्थान आज बक्सरके नामसे प्रसिद्ध है।

ताराचण्डीमन्दिरके निकट एक गुरुद्वारा भी स्थित है। यहाँ गुरु तेगबहादुरने अपनी पत्नी एवं भक्तोंके साथ माँ ताराचण्डी भवानीका पूजन किया था। आज भी सिख-सम्प्रदाय वहाँ जाकर तथा तीन दिन ठहरकर अरदास, जलक्रीडा और पूजा करता है। यहाँ वर्षमें तीन दिन गुरु महाराजकी यादमें गुरुग्रन्थ साहिबका राजभोग, अरदास-पाठ होता है।

इस पूरे क्षेत्रको पहले कारूष प्रदेशके नामसे जाना जाता था। जहाँका राजा हैहय-वंशीय क्षत्रिय कार्तवीर्य नामसे विख्यात था। इसी कार्तवीर्यका पुत्र सहस्रबाहु प्रचण्ड प्रतापी राजा हुआ, जो माँ

ताराचण्डी भवानीका अनन्य भक्त तथा उपासक था। माँ ताराचण्डी भवानी सहस्रबाहुकी कुलदेवी हुईं और इस पूरे कारूष प्रदेशकी भी कुलदेवीके रूपमें प्रसिद्ध हुईं, जिसका उल्लेख श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणमें मिलता है। श्रावणके महीनेमें सहस्रबाहु माँ ताराचण्डी भवानीकी विशेषरूपसे पूजा करता और उत्सव मनाता था। यह देख कारूष प्रदेशकी जनता भी श्रावणमासमें अपने-अपने घरोंसे माँ ताराचण्डी भवानीके पूजनके निमित्त कढ़इया प्रसाद, चढ़ावा, चुनरी एवं बाजे-गाजेके साथ आकर पूजन-अर्चन करती और उत्सव मनाती थी। यह परम्परा आज भी कायम है। कारूष प्रदेशका क्षेत्र कर्मनाशानदीसे लेकर सोनभद्रनदीके बीचका विशाल भूखण्ड है जो मनोरम पहाड़, जंगल, नदी एवं तराइयोंसे युक्त है।

एक आख्यानमें आया है कि एक बार राजा सहस्रबाहु जमदग्नि ऋषिके आश्रममें (जो जमनियाँके नामसे जाना जाता है पहले जमदग्निपुरम् नामसे विख्यात था) गया, वहाँपर जमदग्नि ऋषिकी कामधेनु गाय उसे पसंद आ गयी। उसने उस गायको बलपूर्वक ले लिया, जब यह बात जमदग्निपुत्र परशुरामको मालूम हुई तो वे क्रोधमें आकर अपना परशु लेकर सहस्रबाहुसे युद्ध करने आ पड़े। युद्धके दौरान परशुराम सहस्रबाहुसे कमजोर पड़ने लगे, तब वे सहस्रबाहुकी कुलदेवी माँ ताराचण्डी भवानीकी उपासना उसी गुफामें बैठकर करने लगे, उपासनोपरान्त माँ ताराचण्डी भवानीने परशुरामको चण्डी (बालिका)-के रूपमें दर्शन दिया और विजयका वरदान दिया, तब माँ भगवती ताराचण्डीसे शक्ति पाकर परशुरामने अपने परशुसे सहस्रबाहुके बाहु काट दिये। चूँकि परशुरामके परशुसे सहस्रबाहुके बाहु कटे थे। अतः सहस्रबाहुके नामसे बाहु शब्द हटा दिया गया तथा परशुरामके नामसे परशु शब्द हटा दिया गया। दोनोंके सन्धिस्वरूप यादगार बनानेके लिये नाम जोड़कर सहस्र+राम अर्थात्

'सहस्रराम' इस क्षेत्रका नामकरण हुआ। कालान्तरमें अंग्रेजोंको सहस्रराम कहनेमें असुविधा होती थी जिससे वे सहसराम कहते थे। आज यह क्षेत्र सासारामके नामसे प्रसिद्ध है। जिस कुण्डस्थानपर परशुरामने माँ भगवती ताराचण्डीकी उपासना की थी, उस कुण्डको परशुरामकुण्डके नामसे जाना जाता है, जो माँ ताराचण्डी भवानीके ठीक सामने स्थित है और भगवतीके श्रीचरणोंको पखारता है। आज भी इस कुण्डमें अनेक भक्त स्नानकर माँ ताराचण्डी भवानीका पूजन-अर्चन करते हैं। सहस्रबाहुकी समाधि आज भी नगर थानेके दक्षिणी किनारेपर स्थित है। माँ ताराचण्डी भवानीके साथ अनेक प्राचीन इतिहास जुड़े हुए हैं।

माँ ताराचण्डी भवानीके समीप ही भैरव चण्डिकेश्वर महादेवका मन्दिर है जो सोनवागढ़ शिवमन्दिरके नामसे विख्यात है। माँ ताराचण्डी धाममें वर्षमें तीन बार उत्सव मनाया जाता है। पहला उत्सव वासन्तिक नवरात्रमें, चैत्र शुक्लपक्ष प्रतिपदासे नवमीतक मनाया जाता है। दूसरा शारदीय नवरात्र-उत्सव आश्विन शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर दशमी (दशहरा)-तक मनाया जाता है। तीसरा उत्सव बड़े धूम-धामसे आषाढ़ पूर्णिमा (गुरुपूर्णिमा) गुरु-पूजनसे प्रारम्भ होकर अगले दिन श्रावणकी प्रतिपदासे पूर्णिमातक मनाया जाता है। माँ भगवती ताराचण्डीको स्थानीय लोग कुलदेवीके रूपमें मानते हैं। श्रावणमासमें यहाँ महीने भर मेला लगा रहता है तथा पूर्णिमाको विशाल शोभा-यात्रा निकाली जाती है।

करवीर शक्तिपीठ—कोल्हापुर

कोल्हापुर पौराणिक करवीरक्षेत्र है, जो स्वयं भगवती महालक्ष्मीद्वारा निर्मित है। 'देवीगीता' में कहा गया है—

'कोलापुरे महास्थानं यत्र लक्ष्मीः सदा स्थिता।'

अर्थात् 'कोलापुर' या 'कोल्हापुर' एक महान् पीठ है, जहाँ महालक्ष्मी सदैव विराजती हैं। विभिन्न पुराणों एवं आगम-ग्रन्थोंमें इस शक्तिपीठकी महिमा और प्रशंसा पायी जाती है। तन्त्रचूडामणिके अनुसार करवीरमें देवी सतीके तीनों नेत्रोंका पतन हुआ था। यहाँकी शक्ति महिषमर्दिनी और भैरव क्रोधीश हैं। यहाँका महालक्ष्मीमन्दिर ही महिषमर्दिनीका स्थान है—

करवीरे त्रिनेत्रं मे देवी महिषमर्दिनी।
क्रोधीशो भैरवस्तत्र .... ॥

यहाँकी जगदम्बाको 'करवीरसुवासिनी' या 'कोलापुरनिवासिनी' भी कहा जाता है। महाराष्ट्रमें इन्हें 'अम्बाबाई' कहते हैं। महालक्ष्मीका यह सर्वश्रेष्ठ सिद्धपीठ है। यहाँ पाँच नदियोंके संगमसे एक नदी बहती है, जिसे 'पञ्चगङ्गा' कहा जाता है। यह नदी आगे चलकर समुद्रगामिनी महानदी कृष्णासे जा मिली है। ऐसी पवित्र पञ्चगङ्गा सरिताके तीरपर जगन्माता महालक्ष्मीका नित्यनिवास है।

'त्रिपुरारहस्य, माहात्म्यखण्ड' के ४८वें अध्यायमें ७१ से ७५ श्लोकोंमें भारतके प्रमुख १२ देवीपीठोंका उल्लेख और उनका माहात्म्य वर्णित है, जिसमें '**करवीरे महालक्ष्मी**' कहा गया है। इसी प्रकार देवीभागवत और मत्स्यपुराणमें वर्णित १०८ दिव्य शक्तिस्थानोंमें भी '**करवीरे महालक्ष्मी**' कहा गया है। 'करवीरमाहात्म्य' में इस सिद्धस्थानको प्रत्यक्ष 'दक्षिण काशी' कहा गया है। स्कन्दपुराणके 'काशीखण्ड' के अनुसार महर्षि अगस्त्य और उनकी पत्नी पतिव्रता

लोपामुद्राके साथ काशीसे दक्षिण आये और यहीं बस गये, इसलिये इसे 'काशीसे किञ्चित् श्रेष्ठ क्षेत्र' कहा गया है। वाराणसीमें भगवान् शिव केवल ज्ञानदायक ही हैं, किंतु करवीरक्षेत्रमें ज्योतिरूप केदारेश्वर (ज्योतिबा) ज्ञानप्रद तो हैं ही, भोग-मोक्षप्रदायिनी महालक्ष्मी भी यहाँ निवास करती हैं। इस तरह भुक्ति-मुक्तिप्रद होनेसे इस स्थानका माहात्म्य काशीसे अधिक माना गया है—

सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी।
मन्त्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते॥

(महालक्ष्म्यष्टक-४)

इस स्तोत्रसे भी सिद्ध है कि यहाँकी देवी भुक्ति और मुक्ति दोनोंको देनेवाली हैं। इसलिये इस क्षेत्रके माहात्म्यमें यह श्लोक पाया जाता है—

वाराणस्याधिकं क्षेत्रं करवीरपुरं महत्।
भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां वाराणस्या यवाधिकम्॥

अर्थात् वाराणसीकी अपेक्षा इस करवीरक्षेत्रका माहात्म्य यव (जौ)-भर अधिक ही है; क्योंकि यहाँ भुक्ति और मुक्ति दोनों मिलते हैं।

देवीका श्रीविग्रह वज्रमिश्रित (हीरेसे मिश्रित) रत्नशिलाका स्वयम्भू और चमकीला है। उसके मध्यस्थित पद्मरागमणि भी स्वयम्भू है, ऐसा विशेषज्ञोंका स्पष्ट मत है। प्रतिमा अत्यन्त पुरातन होनेसे बहुत घिस गयी थी। इसलिये सन् १९५४ ई० में कल्पोक्त विधिसे मूर्तिमें वज्रलेप-अष्टबन्धादि संस्कार किये गये। उसके पश्चात् अब श्रीविग्रह सुस्पष्ट दिखायी पड़ता है।

देवीका ध्यान मार्कण्डेयपुराणान्तर्गत 'देवीमाहात्म्य' (श्रीदुर्गासप्तशती)-के 'प्राधानिक-रहस्य' में जैसा वर्णित है, ठीक वैसा ही है। प्राधानिक रहस्योक्त वह ध्यान इस प्रकार है—

मातुलुङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रती।
नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्धनि॥

इसका भाव यह है कि चतुर्भुजा जगन्माताके हाथोंमें मातुलुङ्ग, गदा, ढाल और पानपात्र है। मस्तकपर नाग, लिङ्ग और योनि है।

स्वयम्भू मूर्तिमें ही सिरपर किरीट उत्कीर्ण होकर विराजते हैं। शेषफणोंने उसपर छाया की है। साढ़े तीन फुट ऊँची यह प्रतिमा आकर्षक और अत्यन्त सुन्दर है। इसका दर्शन करते ही भावुक भक्तहृदय अत्यन्त उल्लसित हो उठता है। देवीके चरणोंके पास उनका वाहन 'सिंह' प्रतिष्ठित है।

'लक्ष्मीविजय' तथा 'करवीरक्षेत्रमाहात्म्य' ग्रन्थोंसे ज्ञात होता है कि अतिप्राचीन कालमें 'कोलासुर' नामक एक असीम सामर्थ्यवाला दैत्य भूमिके लिये भारभूत हो गया था। वह देवताओंद्वारा भी अजेय था तथा साधु-सज्जनोंको अत्यन्त कष्ट देता था। अन्ततः उससे संत्रस्त देवताओंने महाविष्णुकी शरण ली। उसे पहलेसे ही वर प्राप्त था कि स्त्रीशक्तिके अतिरिक्त कोई भी उसका वध नहीं कर सकता। इसलिये भगवान् विष्णुने अपनी ही शक्ति स्त्रीरूपमें प्रकट कर दी और वही ये महालक्ष्मी हैं। सिंहारूढ़ हो महादेवी करवीर नगरमें आ पहुँचीं और वहाँ कोलासुर नामक दैत्यके साथ उनका घमासान युद्ध हुआ। अन्तमें देवीने इस दैत्यका संहार कर दिया और उसे परमगति प्रदान की।

मरनेके पूर्व असुर देवीकी शरणमें आया, इसलिये देवीने उससे वर माँगनेके लिये कहा। उसने कहा—'इस क्षेत्रको मेरा नाम प्राप्त हो।' भगवतीने 'तथास्तु' कहा और उसके प्राण भगवतीमें लीन हो गये। देवता आनन्दमग्न हो उठे। बहुत बड़ा विजयोत्सव मनाया गया। देवताओंने देवीकी बार-बार स्तुति की। तभीसे वे देवी इसी स्थानपर प्रतिष्ठित हो गयीं और 'करवीरक्षेत्र' को 'कोलापुर' की संज्ञा भी प्राप्त

हुई। समर्थ स्वामी रामदासने भी महालक्ष्मीकी स्तुति करते समय उन्हें '**कोलासुरविमर्दिनी**' कहा है।

पद्मपुराणके करवीरमाहात्म्यमें भी इस स्थानके विषयमें लिखा है कि 'करवीर' नामक यह क्षेत्र १०८ कल्प प्राचीन है और इसकी 'महामातृक' संज्ञा है; क्योंकि यह आद्या मातृशक्तिका मुख्य पीठस्थान है।

काशीकी ही तरह यहाँ भी पञ्चगङ्गा, कालभैरव आदि पञ्चक्रोशी स्थान हैं। अतएव इस क्षेत्रको 'दक्षिण काशी' कहा जाता है। यहाँ 'एकवीरा' (रेणुका) देवीका एक अत्यन्त जाग्रत् स्थान है। ये देवी भी अनेक परिवारोंकी कुलदेवताके रूपमें प्रसिद्ध हैं। इसके निकट भगवान् दत्तात्रेयका सिद्धस्थान है, जहाँ मध्याह्न स्नानके बाद योगिराज दत्तात्रेय नित्य जप-पूजा एवं देवीकी स्तुति करनेके लिये आते हैं—'**कोल्हापुरजपादरः**' (दत्तात्रेयवज्रकवच) इस कारण इस स्थानका माहात्म्य और बढ़ जाता है।

अब महालक्ष्मीके प्रधान मन्दिरके प्राकारगत प्रमुख देवताओंके भी दर्शन करें। देवीके सामने मण्डपमें सिद्धिविनायक हैं तो देवीके दोनों ओर महाकाली और महासरस्वतीके मन्दिर हैं। यहाँ आद्यशंकराचार्यद्वारा स्थापित विशाल चक्रराज श्रीयन्त्र है। मन्दिरके ऊपरकी दो मंजिलोंमें भी अनेक देवता हैं और देवीके शिरोभागपर (दूसरी मंजिलमें) शिवमन्दिर है। देवीमन्दिरके प्राङ्गणमें परिक्रमाके मार्गपर असंख्य देवी-देवता हैं।

महालक्ष्मीका यह मन्दिर अत्यन्त पुरातन, भव्य, सुविस्तृत और मनोहर शिल्पकलाका आदर्श बनकर खड़ा है। इसकी वास्तुरचना चक्रराज (श्रीयन्त्र) या सर्वतोभद्रमण्डलपर अधिष्ठित है, ऐसा विशेषज्ञोंका मत है। यह पाँच शिखरों और तीन मण्डपोंसे सुशोभित है। गर्भगृहमण्डप, मध्यमण्डप और गरुडमण्डप—ये मण्डपत्रय हैं।

प्रमुख एवं विशाल मध्यमण्डपमें बड़े-बड़े, ऊँचे और स्वतन्त्र १६×१२८ स्तम्भ हैं। इसके अतिरिक्त मुख्य देवालयके बाहर सैकड़ों स्तम्भ वास्तुशिल्पसे उत्कीर्ण हैं। ये सभी स्तम्भ और सहस्त्रों मूर्तियाँ शिल्प तथा कलाकृतियोंसे सजी हुई हैं और भव्य एवं नयनाभिराम हैं। गर्भागारस्थित चाँदी और सोनेके सामान, आभूषण, जड़ित-जवाहर आदि देखनेपर आँखें चौंधिया जाती हैं, ऐसा वैभवसम्पन्न यह देवस्थान है।

उपासना—यहाँ महालक्ष्मीकी उपासना व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों रूपोंमें होती है। पाद्यपूजा, षोडशोपचारपूजा और महापूजा-जैसे विविध प्रकारके अर्चन प्रतिदिन चलते रहते हैं। भोगमें मिष्टान्न, पूर्णान्न और खीर प्रमुख हैं। अभिषेकके समय श्रीसूक्तका अधिकारिक पाठ किया जाता है। प्रातःकाल 'काकड-आरती' से लेकर मध्यरात्रिके शय्या-आरती (सेज-आरती)-तक अखण्डरूपमें पूजन-अर्चन, शहनाई, सनई, चौघड़ा, स्तोत्रपाठ, आरतियाँ, गायन-वादन, भजन-कीर्तन आदि कुछ-न-कुछ कार्यक्रम चलते ही रहते हैं। नित्य उपासना भी अत्यन्त वैभवके साथ शास्त्रोक्त पद्धतिसे की जाती है।

नगरमें कोई भी विवाहादि मङ्गलकार्य होता है तो पहला निमन्त्रणपत्र देवीके चरणोंमें समर्पित किया जाता है और मङ्गलकार्य सम्पन्न होनेपर प्रत्येक परिवार देवीका दर्शन, पूजन करता है।

अष्टोत्तरशत दिव्य शक्ति-स्थान

वाराणस्यां विशालाक्षी नैमिषे लिङ्गधारिणी।
प्रयागे ललिता देवी कामाक्षी गन्धमादने॥
मानसे कुमुदा नाम विश्वकाया तथाम्बरे।
गोमन्ते गोमती नाम मन्दरे कामचारिणी॥
मदोत्कटा चैत्ररथे जयन्ती हस्तिनापुरे।
कान्यकुब्जे तथा गौरी रम्भा मलयपर्वते॥
एकाम्रके कीर्तिमती विश्वे विश्वेश्वरीं विदुः।
पुष्करे पुरुहूतेति केदारे मार्गदायिनी॥
नन्दा हिमवतः पृष्ठे गोकर्णे भद्रकर्णिका।
स्थानेश्वरे भवानी तु बिल्वके बिल्वपत्रिका॥
श्रीशैले माधवी नाम भद्रा भद्रेश्वरे तथा।
जया वराहशैले तु कमला कमलालये॥
रुद्रकोट्यां च रुद्राणी काली कालञ्जरे गिरौ।
महालिङ्गे तु कपिला मर्कोटे मुकुटेश्वरी॥
शालग्रामे महादेवी शिवलिङ्गे जलप्रिया।
मायापुर्यां कुमारी तु संताने ललिता तथा॥
उत्पलाक्षी सहस्राक्षे कमलाक्षे महोत्पला।
गङ्गायां मङ्गला नाम विमला पुरुषोत्तमे॥
विपाशायाममोघाक्षी पाटला पुण्ड्रवर्धने।
नारायणी सुपार्श्वे तु त्रिकूटे भद्रसुन्दरी॥
विपुले विपुला नाम कल्याणी मलयाचले।
कोटवी कोटितीर्थे तु सुगन्धा माधवे वने॥
कुब्जाम्रके त्रिसंध्या तु गङ्गाद्वारे रतिप्रिया।
शिवकुण्डे सुनन्दा तु नन्दिनी देविकातटे॥
रुक्मिणी द्वारवत्यां तु राधा वृन्दावने वने।
देविका मथुरायां तु पाताले परमेश्वरी॥

चित्रकूटे तथा सीता विन्ध्ये विन्ध्याधिवासिनी।
सह्याद्रावेकवीरा तु हरिश्चन्द्रे तु चन्द्रिका॥
रमणा रामतीर्थे तु यमुनायां मृगावती।
करवीरे महालक्ष्मीरुमादेवी विनायके॥
अरोगा वैद्यनाथे तु महाकाले महेश्वरी।
अभयेत्युष्णतीर्थेषु चामृता विन्ध्यकन्दरे॥
माण्डव्ये माण्डवी नाम स्वाहा माहेश्वरे पुरे।
छागलाण्डे प्रचण्डा तु चण्डिका मकरन्दके॥
सोमेश्वरे वरारोहा प्रभासे पुष्करावती।
देवमाता सरस्वत्यां पारावारतटे मता॥
महालये महाभागा पयोष्ण्यां पिङ्गलेश्वरी।
सिंहिका कृतशौचे तु कार्तिकेये यशस्करी॥
उत्पलावर्तके लोला सुभद्रा शोणसङ्गमे।
माता सिद्धपुरे लक्ष्मीरङ्गना भरताश्रमे॥
जालन्धरे विश्वमुखी तारा किष्किन्धपर्वते।
देवदारुवने पुष्टिर्मेधा काश्मीरमण्डले॥
भीमा देवी हिमाद्रौ तु पुष्टिर्विश्वेश्वरे तथा।
कपालमोचने शुद्धिर्माता कायावरोहणे॥
शङ्खोद्धारे ध्वनिर्नाम धृतिः पिण्डारके तथा।
काला तु चन्द्रभागायामच्छोदे शिवकारिणी॥
वेणायाममृता नाम बदर्यामुर्वशी तथा।
औषधी चोत्तरकुरौ कुशद्वीपे कुशोदका॥
मन्मथा हेमकूटे तु मुकुटे सत्यवादिनी।
अश्वत्थे वन्दनीया तु निधिर्वैश्रवणालये॥
गायत्री वेदवदने पार्वती शिवसंनिधौ।
देवलोके तथेन्द्राणी ब्रह्मास्येषु सरस्वती॥
सूर्यबिम्बे प्रभा नाम मातॄणां वैष्णवी मता।
अरुन्धती सतीनां तु रामासु च तिलोत्तमा॥

चित्ते ब्रह्मकला नाम शक्तिः सर्वशरीरिणाम्।
एतदुद्देशतः प्रोक्तं नामाष्टशतमुत्तमम्॥
अष्टोत्तरं च तीर्थानां शतमेतदुदाहृतम्।
यः पठेच्छृणुयाद् वापि सर्वपापैः प्रमुच्यते॥
एषु तीर्थेषु यः कृत्वा स्नानं पश्यति मां नरः।
सर्वपापविनिर्मुक्तः कल्पं शिवपुरे वसेत्॥

(देवीभागवत ७। ३०। ५५—८४)

मङ्गलमयी कल्याणमयी पराम्बा जगज्जननी भगवती दुर्गा काशीमें विशालाक्षीके रूपमें, नैमिषारण्यमें लिङ्गधारिणीके रूपमें, प्रयागमें ललिता नामसे, गन्धमादनपर्वतपर कामाक्षीरूपसे, मानसरोवरमें कुमुदा नामसे तथा अम्बर (आमेर)-में विश्वकाया नामसे प्रसिद्ध हैं। वे गोमन्तपर्वतपर गोमती नामसे, मन्दराचलपर कामचारिणी, चैत्ररथवनमें मदोत्कटा, हस्तिनापुरमें जयन्ती, कान्यकुब्जमें गौरी, मलयाचलपर रम्भा, एकाम्रकक्षेत्रमें कीर्तिमती, विश्वमें विश्वेश्वरी, पुष्करमें पुरुहूता, केदारमें मार्गदायिनी, हिमाचलपर्वतके पृष्ठभागमें नन्दा, गोकर्णमें भद्रकर्णिका, स्थानेश्वरमें भवानी, बिल्वकमें बिल्वपत्रिका, श्रीशैलपर माधवी, भद्रेश्वरमें भद्रा, वराहशैलपर जया तथा कमलालय (तिरुवारूर)-में कमला नामसे प्रसिद्ध हैं। वे रुद्रकोटिमें रुद्राणी नामसे, कालञ्जर-पर्वतपर काली, महालिङ्गमें कपिला, मर्कोटमें मुकुटेश्वरी, शालग्राममें महादेवी, शिवलिङ्गमें जलप्रिया, मायापुरी (हरिद्वार)-में कुमारी, संतानक्षेत्रमें ललिता, सहस्राक्षमें उत्पलाक्षी, कमलाक्षमें महोत्पला, गङ्गातटपर मङ्गला, पुरुषोत्तमक्षेत्रमें विमला, विपाशा (व्यासनदी)-के तटपर अमोघाक्षी, पुण्ड्रवर्धनमें पाटला, सुपार्श्वमें नारायणी, विकूटमें भद्रसुन्दरी, विपुलमें विपुलेश्वरी, मलयाचलपर कल्याणी, कोटितीर्थमें कोटवी, माधववनमें सुगन्धा, कुब्जाम्रक (ऋषिकेश)-में त्रिसंध्या, गङ्गाद्वार (हरिद्वार)-में रतिप्रिया, शिवकुण्डमें सुनन्दा, देविकातटपर नन्दिनी, द्वारकामें रुक्मिणी, वृन्दावनमें राधा, मथुरामें देविका, पातालमें

परमेश्वरी, चित्रकूटमें सीता, विन्ध्याचलपर विन्ध्यवासिनी, सह्याचलपर एकवीरा, हरिश्चन्द्रपर चन्द्रिका, रामतीर्थमें रमणा, यमुनातटपर मृगावती, करवीर (कोल्हापुर)-में महालक्ष्मी, विनायकक्षेत्रमें उमादेवी, वैद्यनाथमें अरोगा, महाकालमें महेश्वरी, उष्णतीर्थोंमें अभया, विन्ध्य-कन्दरमें अमृता, माण्डव्यमें माण्डवी, माहेश्वरपुर (माहिष्मती)-में स्वाहा, छागलाण्डमें प्रचण्डा, मकरन्दमें चण्डिका, सोमेश्वरमें वरारोहा, प्रभासमें पुष्करावती, सरस्वती-समुद्र-सङ्गमपर देवमाता, महालयमें महाभागा, पयोष्णीतटपर पिङ्गलेश्वरी, कृतशौचमें सिंहिका, कार्त्तिकेयक्षेत्रमें यशस्करी, उत्पलावर्तमें लोला, शोण-गङ्गा-सङ्गमपर सुभद्रा, सिद्धपुरमें माता लक्ष्मी, भरताश्रममें अङ्गना, जालन्धरमें विश्वमुखी, किष्किन्धापर्वतपर तारा, देवदारुवनमें पुष्टि, काश्मीर-मण्डलमें मेधा, हिमाद्रिमें भीमादेवी, विश्वेश्वरमें पुष्टि, कपालमोचनमें शुद्धि, कायावरोहणमें माता, शङ्खोद्धारमें ध्वनि, पिण्डारकमें धृति, चन्द्रभागातटपर काला, अच्छोदमें शिवकारिणी, वेणातटपर अमृता, बदरीवनमें उर्वशी, उत्तरकुरुमें औषधी, कुशद्वीपमें कुशोदका, हेमकूटपर्वतपर मन्मथा, मुकुटमें सत्यवादिनी, अश्वत्थ (पीपल)-में वन्दनीया, वैश्रवणालय (अलकापुरी)-में निधि, वेदवदनमें गायत्री, शिवके सांनिध्यमें पार्वती, देवलोकमें इन्द्राणी, ब्रह्माके मुखोंमें सरस्वती, सूर्य-बिम्बमें प्रभा, मातृकाओंमें वैष्णवी, सतियोंमें अरुन्धती, रमणियोंमें तिलोत्तमा तथा चित्तमें सभी देहधारियोंकी शक्तिरूपसे विराजमान ब्रह्मकला हैं। यहाँ संक्षेपमें भगवतीके १०८ नाम कहे गये हैं तथा साथ ही १०८ तीर्थोंका निर्देश किया गया है। जो इन्हें पढ़ता या सुनता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है। इन तीर्थोंमें स्नान करके जो मेरा दर्शन करता है, वह सभी पापोंसे सर्वथा निःशेषरूपमें मुक्त होकर कल्पपर्यन्त शिवलोकमें वास करता है। [किञ्चित् नामान्तरके साथ मत्स्यपुराण (अ० १३)-में भी यही विवरण प्राप्त होता है]।